दुग्ध–गंगा

अंक : तृतीय 2012–13

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान

मान्य विश्वविद्यालय

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)

करनाल–132001 (हरियाणा)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

ICAR

प्रशस्ति-पत्र

राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार

वर्ष 2011 के दौरान सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में उल्लेखनीय योगदान के लिए राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल को बड़े संस्थानों की श्रेणी में द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 19 मार्च, 2013
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

RNI:HAR/H-4834/2009

दुग्ध–गंगा

2012-13

तृतीय अंक

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
मान्य विश्वविद्यालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
करनाल–132001 (हरियाणा)

संरक्षक एवं प्रकाशक

डा. ए. के. श्रीवास्तव
निदेशक एवं कुलपति

सलाहकार मंडल

डा. ऋषीन्द्र वर्मा, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)
डा. वी. पी. सिंह, संयुक्त निदेशक (शैक्षिक)

प्रबंध संपादक

डा. खजान सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग

संपादक

श्री आर.एस.गौतम, उपनिदेशक (राजभाषा)/प्रशासन

सहा. संपादक

श्रीमती कंचन चौधरी,तकनीकी अधिकारी

संपादक मंडल

डा. ए.के.पुनिया, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी सूक्ष्म जीवविज्ञान प्रभाग
श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती, वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग
डा. चन्द्र दत्त, वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी पशु पोषण प्रभाग
डा. मगन सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक, चारा अनुसंधान एवं प्रबंधन केन्द्र
डा. रमेश चन्द्रा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, पशुधन उत्पादन व प्रबन्धन

आधार टाइपिंग

श्रीमती मीरा रानी, सहायक

फोटोग्राफी

श्री.जी.डी. जोशी, तकनीकी अधिकारी

संपर्क सूत्रः **आर एस. गौतम,** उपनिदेशक (राजभाषा)/प्रशासन
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल 132001
(मान्य विश्वविद्यालय) भा.कृ.अनु. परिषद
फोनः 0184.2259045/78, फैक्स : 0184 – 2250646, 2272372
rsgautam@ndri.res.in & meerarani_1972@rediff.com
Website : www.ndri.res.in

इस अंक में प्रकाशित आलेखों एवं रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

प्रकाशन वर्षः 2012–2013

कवर फोटोः विश्व की द्वितीय क्लोन्ड कटड़ी 'गरिमा' अपने बच्चे महिमा के साथ

Printed At : Azad Offset Printers, 144, Press Site, Ind. Area - 1, Chandigarh
0172 - 4611489, 2656144, 2657144 www.azadoffsetprinters.com

डा. ए.के. श्रीवास्तव

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE
(मान्य विश्वविद्यालय)
(Deemed University)
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
(Indian Council of Agricultural Research)
करनाल–132001, (हरियाणा) भारत
KARNAL-132001, (Haryana) India

प्राक्कथन

हमारे देश में बहुमुखी डेरी विकास की प्रगति के लिए पूर्ण रूप से समर्पित राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान एक ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संस्थान है जो कि डेरी विकास योजनाओं को सफल बनाने के लिए अनुसंधान व शिक्षण में सहयोग दे कर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। संस्थान के डेरी विकास कार्यक्रमों की प्रगति और सफलता में यहां के वैज्ञानिकों, छात्रों, कृषकों एंव डेरी उद्यमियों का समन्वित योगदान रहा है। सर्वप्रथम डेरी विज्ञान के अनुसंधानों को प्रयोगशाला में जांचा, परखा जाता है फिर उन तकनीकियों को कृषकों तक पहुंचाया जाता है ताकि वे इनको अपनाकर अपने व्यवसाय से भरपूर लाभ प्राप्त कर सकें। मूल वैज्ञानिक चिंतन भले ही किसी भाषा में क्यों न हो यदि वह जनमानस का हित करने में सक्षम है, तो सभी भाषाओं में अनूदित होकर जन–जन तक पहुंचेगा। जब तक हम वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक क्षेत्र में अपनी भाषा का प्रयोग नहीं करते तब तक हम आत्मनिर्भर नहीं हो सकते। ज्ञान–विज्ञान हमारे समाज, देश और राष्ट्र की धरोहर है जिसे जन–जन तक अपनी भाषा में पहुंचाना हर व्यक्ति का नैतिक एवं सामाजिक दायित्व है। समय की मांग है कि देश में हो रहे महत्वपूर्ण अनुसंधान के परिणाम जन–साधारण तक पहुंचें ताकि कृषकों में वैज्ञानिक प्रवृत्ति जागृत हो सके और वे देश की प्रगति में सहभागी हो सके।

आज विश्वमंच पर सभी भाषाओं के बीच हिंदी को नई पहचान मिल रही हैं। सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के साथ हिंदी का प्रचार भी बढ़ता जा रहा है। वैश्वीकरण के सन्दर्भ में हिंदी से बाजार बढ़ा है और समृद्धि भी। मीडिया ने हिंदी को संपर्कभाषा के रूप में विकसित करने में अपनी अहम भूमिका बखूबी निभाई है। भाषा के विकास की रथयात्रा की जब हम बात करते हैं, तो पाते हैं कि इस मार्ग में आने वाली परेशानियां केवल समारोहों आयोजन, शपथ, कानून आदि से ही दूर नहीं हो सकती। अब आवश्यकता है कि प्रत्येक के अन्दर एक संकल्प जागृत करें और साथ ही यह भी देखें, विचार करें कि संकल्प कितना पूरा हुआ है तभी हिंदी का रथ आगे बढ़ पाएगा।

कृषि की आत्मा गांवों में निवास करती है। भारत के 65 प्रतिशत लोगों की जीविका खेती पर निर्भर करती है तथा

कृषि अभी भी राष्ट्र का मेरूदण्ड बनी हुई है इसलिए कृषि के क्षेत्र में तो यह और भी आवश्यक है कि पठन–पाठन की भाषा वहीं रखी जाए, जो इस देश के किसानों व सर्वाधिक आमजनों की भाषा है। सूचना प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग में कृषि के समक्ष जहां नई–नई चुनौतियां हैं, वहीं व्यवसाय की दृष्टि से नए अवसर भी पैदा हो रहे है, यदि समय रहते देश के कृषक समुदाय एवं कृषि से जुड़े, अन्य कार्मिकों को इनसे परिचित करा दिया जाएं तो भारत कृषि उत्पादन में अधिक तीव्रता से अग्रणी बन सकेगा और ऐसा तभी संभव होगा जब किसानों तक उनकी भाषा में बात पहुंचाई जाए और यह महत्वपूर्ण कार्य वैज्ञानिकों द्वारा मूल हिंदी लेखन से सम्पादित किया जा सकता है।

इसी दिशा में **'दुग्धगंगा'** हमारा एक प्रयास है। पत्रिका प्रकाशन में संपादक मंडल के संयुक्त प्रयासों से ही यह संभव हो पाया है। मैं इसके लिए उन सभी वैज्ञानिक, तकनीशियन अधिकारियों एवं शोध–छात्रों का धन्यवाद करता हूँ एवं उन्हें बधाई देना चाहता हूँ जिन्होंने अपने आलेख भेजकर अपना बहुमूल्य योगदान प्रदान किया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका का यह **तृतीय अंक** आप सबके लिए अति लाभकारी होगा। मैं इस प्रकाशन के लिए डा. खजान सिंह प्रभारी, राजभाषा एकक; श्री आर.एस.गौतम, उपनिदेशक (राजभाषा) एवं राजभाषा एकक के स्टाफ को बधाई देता हूँ जिनके सम्मिलित प्रयासों से इस अंक का प्रकाशन सफलतापूर्वक हो पाया है।

(डॉ. ए.के. श्रीवास्तव)
निदेशक

डा. खजान सिंह

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE
(मान्य विश्वविद्यालय)
(Deemed University)
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
(Indian Council of Agricultural Research)
करनाल–132001, (हरियाणा) भारत
KARNAL-132001, (Haryana) India

प्रबन्ध संपादक की कलम से

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति और अस्मिता की पहचान उसकी भाषा से होती है। विश्व में वही देश और समाज प्रतिष्ठा पाता है, जिसे अपने संस्कारों पर गर्भ अभिमानी होता है। भारत बहुभाषी है यह इसकी कमजोरी नही ताकत है। इसकी राष्ट्रभाषा, हिंदी एक ऐसी समृद्ध भाषा है जो हर पहलू पर भारत की एकता और अखण्डता की पृष्ठभूमि को पुख्ता करने के साथ–साथ वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को प्रेरित कर रही है। भाषा मानव मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करने का साधन है, साथ ही एक दूसरे को जोड़ने का माध्यम भी है, परस्पर सुखों–दुखों, आशा–आकांक्षाओं, आचार–विचार, वेश–भूषा, ज्ञान–विज्ञान, आध्यात्मिक विरासत, संस्कृति तथा समस्त चिंतन भाषा में निबध्द होता है। बढ़ते वैश्वीकरण के संदर्भ में अन्तरराष्ट्रीय मानक की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नई तकनीकियों और विज्ञान का उपयोग करना चाहिए जिसमें उत्पाद की गुणवत्ता को और बढ़ाया जा सके। डेरी व्यवसाय आज एक महत्वपूर्ण व्यवसाय बन चुका है और हमें अधिक उत्पादन लेने के लिए विश्व स्तर पर बाजार की तकनीकियों को अपनाना होगा। इन सभी तकनीकियों को डेरी कृषकों तक पहुंचाने का सार्थक प्रयास वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों को ही करना है। जिस समाज में वैज्ञानिक लेखन पिछड़ा होगा, निश्चय ही वहां वैज्ञानिक चेतना के लिए वातावरण उत्साहविहीन होगा। निःसन्देह भाषा ही मानव के संस्कारों, संस्कृति और उसकी मनुष्यता को परिष्कृत करती है। भाषा विचारों के परस्पर आदान–प्रदान का माध्यम होती है। भाषा जितनी सरल एवं सुबोध होगी, संप्रेषण में उतनी ही सफल और सशक्त होगी। वही भाषा बड़ी एवं महान बनने की अधिकारिणी बनती है जो करोड़ों हृदयों की भूख को मिटा सके तथा मूक जनता को आशा एवं उत्साह का संदेश प्रदान कर सके।

हमें हिंदी में श्रेष्ठ, स्तरीय और प्रासंगिक मौलिक रचनाओं को प्रोत्साहित करना चाहिए। समाज के लिए उपयोगी पुस्तकों पर हमें ध्यान देना चाहिए। हमारे देश में सक्षम और योग्य रचनाओं की कोई कमी नहीं है जरूरत है तो बस इन्हें प्रोत्साहन और अवसर देने की। अच्छा साहित्य समाज और राष्ट्र के विकास में प्रमुख कारक की भूमिका निभाता है और राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक एकता को मजबूती प्रदान करता है। हमें यह कोशिश करनी चाहिए कि सभी भाषाएं निरंतर विकसित होती रहें।

यदि वास्तव में हमें अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों को सामान्य जन तक पहुंचाना है तो हमें उन्हीं की भाषा व बोली को अपनाना होगा जो कि हमारे ज्ञान के प्रसार के साथ–साथ विकास कार्य में भी सहायक होगी। हिंदी न केवल पढ़े–लिखे लोगों को ही सिखानी पड़ेगी अपितु अनपढ़ या ग्रासरूट तक के लोगों को भी वैज्ञानिक उपलब्धियां प्रदान करने हेतु हिन्दी राष्ट्रभाषा में समझानी पड़ेगी। कृषि प्रसार के क्षेत्र में वैज्ञानिकों के लिए यह कार्य जटिल अवश्य है परन्तु असंभव नहीं। हमें विचारों के आदान–प्रदान या संप्रेषण हेतु हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करना होगा तभी हम अपनी अनुसंधान उपलब्धियों को भारत के जन–जन तक पहुंचाने में सफल हो सकते हैं।

मैं संस्थान के निदेशक डा. ए.के.श्रीवास्तव जी का आभारी हूँ जिनके कुशल निर्देशन एवं मार्गदर्शन में दुग्ध–गंगा के तृतीय अंक का प्रकाशन संभव हुआ है तथा परिषद द्वारा चलाई जा रही **'गणेश शंकर विद्यार्थी हिंदी कृषि पत्रिका पुरस्कार योजना'** के अन्तर्गत संस्थान की इस पत्रिका को वर्ष 2011–2012 के लिए प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हुआ जो कि संस्थान के लिए अत्यन्त गौरव की बात है। मैं इस के लिए विशेष रूप से श्री आर.एस. गौतम उपनिदेशक (राजाभाषा) तथा संपादक मंडल के सभी सदस्यों को हार्दिक बधाई देता हूँ। मैं उन सभी वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों एवं सभी लेखकों का भी आभार व्यक्त करता हूँ जिनके बहुमूल्य योगदान से ज्ञानवर्धक एवं रोचक सामग्री इस पत्रिका के रूप में संकलित कर दुग्ध–गंगा के रूप में आप तक पहुंच पाई। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका के माध्यम से हम कृषि से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी किसानों, वैज्ञानिकों तथा प्रसार कार्यकर्ताओं तक पहुंचाने में सक्षम हो सकेगें।

(डा. खजान सिंह)
प्रधान वैज्ञानिक,डेरी विस्तार

आर. एस. गौतम

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE
(मान्य विश्वविद्यालय)
(Deemed University)
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
(Indian Council of Agricultural Research)
करनाल–132001, (हरियाणा) भारत
KARNAL-132001, (Haryana) India

संपादकीय

वर्तमान में राजभाषा,हिन्दी विश्व संसार में दूसरी सबसे बड़ी भाषा का दर्जा हासिल किए हुए है।। पहला स्थान चीनी भाषा, दूसरा स्थान हिन्दी तथा तीसरा स्थान अंग्रेजी का है। विश्व के लगभग 170 विश्व विद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन, अध्यापन एवं उच्च स्तरीय शोध कार्य हो रहा है। सूच्य है कि अमेरिका, सोवियत संघ, इंग्लैंड, चीन, जापान, इटली, फ्रांस, यूगोस्लाविया, जर्मनी तथा अनेक यूरोपीय एवं एशियाई देशों में हिन्दी पठन–पाठन की उत्तम व्यवस्था है। पर दुःख की बात यह है कि हमारे अपने देश में हिन्दी प्रचार–प्रसार की कुछ समस्याएं हैं। भारत जैसे :– एक विशाल राष्ट्र के लिए यह बहुत स्वाभाविक है, क्योंकि हमारे देश में अनेक भाषा–भाषी एवं संस्कृतियों से जुड़े हुए है। विभिन्न प्रदेशों की आंचलिक भाषाओं में अनेक भिन्नताएं हैं। हिन्दी क्षेत्र में भी क्षेत्रीय भाषा एक समान नहीं है, जिसके कारण राजभाषा कार्यान्वयन में कुछ समस्याएं आती है, परन्तु एक प्रांत से दूसरे का संबंध जोड़ने के लिए एक सर्वमान्य भाषा की आवश्यकता है। हिन्दी ही ऐसी एकमात्र भाषा हो सकती है। स्वाधीन भारत में विकास एवं स्थिरता कायम रखने के लिए राजभाषा कार्यान्वयन आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है। इसलिए देश में महान विचारकों एवं दार्शनिकों ने काफी चिंतन तथा मनन करने के बाद हिन्दी को भारत की राजभाषा स्वीकार किया था। देश की स्वतंत्रता को स्थिर बनाए रखने के लिए हमारी राष्ट्रभाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। अतः राजभाषा कार्यान्वयन हमारा संवैधानिक दायित्व हैं एवं इसकी सार्थकता हमारी निष्ठा पर निर्भर करती है। हमारी संस्कृति तब तक अपूर्ण है, जब तक हम अपनी राष्ट्रभाषा को प्रतिष्ठित करने में असमर्थ रहेंगे।

राजभाषा कार्यान्वयन समस्या के समाधान के लिए हर भारतवासी के सद्भावना को साथ आगे आना होगा । हमें अपने मौलिक विचारों को हिन्दी में प्रकाशित करना है। विचार–विमर्श, चर्चा–अभिव्यक्ति सरकारी कार्यालयों में मुख्यतः हिन्दी में होनी चाहिए, जिससे आपसी भाईचारा तथा पारस्परिक सहयोग का वातावरण तैयार हो। एक भाषा माध्यम से आदमी में अपनेपन का एहसास होता है, परिचय बढ़ते हैं। मूल विषय अंग्रेजी से अनुवाद या अनुकरण करने से उसकी

मौलिकता एवं भावना प्रभावित होने की आशंका रहती है। हममें यह आत्मविश्वास जागृत होना चाहिए, जिससे हम हिन्दी में अपने विचारों को प्रभावशाली ढंग से प्रभावित कर सकें । हिन्दी किसी दूसरी भाषा से कमजोर नहीं है, केवल हमें मानसिक कमजोरी को दूर करना है। यह भाषा मधुर एवं बहुत ताकतवर है। राजकाज चलाने के लिए हिन्दी सदियों से सक्षम रही है। हिन्दी भारतीय हृदय की वाणी है तथा भारतीय आत्मा को मुखरित करती है। साथ ही साथ हमारी भावनात्मक एकता का आधार भी है।

अन्त में, मैं संस्थान के सुयोग्य निदेशक महोदय, प्रभारी राजभाषा एकक, संपादक मंडल के सदस्यगण, पत्रिका में प्रकाशनार्थ आलेख भेजने वाले सभी वैज्ञानिक, तकनीशियन, कार्मिक तथा स्टाफ राजभाषा एकक आदि का विशेष योगदान मुझे प्राप्त हुआ है। इस पत्रिका के पूर्व अंक के लिए प्रतिक्रिया भेजने वाले पाठकों के प्रति भी हम कृतज्ञ है। आशा है कि दुग्ध–गंगा का यह तृतीय अंक वैज्ञानिकों, तकनीशियनों, कार्मिकों, छात्रों, सुधी पाठकों, कृषकों तथा कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं आदि के लिए उपयोगी एवं संग्रहणीय होगा।

आर. एस. गौतम
उपनिदेशक (राजभाषा) / प्रशासन

विषय सूची

वैज्ञानिक/तकनीकी आलेख

1.	**राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थानः क्लोनिंग के बढ़ते चरण** आर.एस.माणिक, एस.के.सिंगला, पी पल्टा, एम.एस.चौहान एवं ए.के. श्रीवास्तव	1
2.	**प्रजनक सांडो की देखभाल एवं प्रबंधन** निशांत कुमार, टी.के मोहंती, शिव प्रसाद, ऋषिकांत सिंह एवं आर. एन. यादव	3
3.	**पशुओं में खुर का अत्यधिक बढ़ना : जानकारी एवं निदान** आलोक कुमार सिंह	7
4.	**भदावरी भैंस : एक श्रेष्ठ घी उत्पादक नस्ल** बी. पी. कुशवाहा एवं सुल्तान सिंह	9
5.	**'भारत में गोवंश विविधता एवं दुग्ध उत्पादन में उनका योगदान** पी. के. सिंह एवं करूणा असीजा	13
6.	**हिमकृत सीमेन का रख रखाव एवं हैंडलिंग (जांच सूची)** सुधीर कुमार	19
7.	**गर्मियों में पशुओं पर शीतलन प्रणाली का प्रभाव** सोहनवीर सिंह, आर.सी.उपाध्याय व बीनम बालियान	22
8.	**''ओवम सिंक्रोनाइजेशन'' एवं ''कृत्रिम गर्भाधान'' बांझ पशु से भी जनन, दुग्धोत्पादन की सौगात** ओ.पी. सिंह व आलोक कुमार सिंह	25
9.	**गर्म मौसम में डेयरी पशु प्रबन्धन** अश्विनी कुमार रॉय तथा महेंद्र सिंह	27
10.	**भैसों में सफल कृत्रिम वीर्यरोपण के लिए महत्वपूर्ण सुक्षाव** विवेक कुमार सिंह, राज कुमार, संजय शर्मा तथा सुरेश कुमार अत्रेजा	30
11.	**घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन से अधिक लाभ** प्रमोद मडके, के.वी.सिंह, शशिकांत व रमेश चन्द्रा	32
12.	**महिला श्रमशक्ति के विषय के कुछ रोचक तथ्य : एक संकलन** कविता शर्मा, आशुतोष, अमरेन्द्र कुमार, मंजू आशुतोष व सोहनवीर सिंह	35
13.	**पर्यावरणीय प्रदूषणः विनाश की तरफ बढ़ता कदम** अतीन्द्र कुमार पाण्डेय, सुनीता मीणा, मगन सिंह	39
14.	**दुधारू पशुओं के चयन में सावधानियां** संजीव सिंह, इंद्रजीत गांगुली एवं एस. पी. सिंह	40
15.	**बरसीम एवं लूसर्न के लिए खर–पतवार प्रबन्धन** मगन सिंह, अमरजीत सिंह हरीका एवं उत्तम कुमार	42
16.	**दक्ष खेतीः सुनहरा भविष्य** सुनीता मीणा, वी. के. सिंह, श्रुति शरण	45

17.	**पशु पालकों की गम्भीर समस्या– दुधारू पशुओं में बांझपन** मनोज कुमार, के.पी.एस.सांगू, राजबीर सिंह एवं सुखदेव सिंह	46
18.	**दूध से क्रीम निकालने की प्रक्रिया और विभिन्न महत्वपूर्ण बातें** प्रविन्द्र शर्मा, रामकुमार एवं खजान सिंह	49
19.	**परिवर्तनशील जलवायु परिप्रेक्ष्य में पशुपालक महिलाओं की परिवर्तित भूमिका** ऋतु चक्रवर्ती, आर.सी. उपाध्याय, व खजान सिंह	51
20.	**गहन डेरी विकास कार्यक्रमः हरियाणा राज्य में स्थिति और उपलब्धि** ऋषिकांत सिंह, बी.एस.चंदेल, निशांत कुमार, राज कुमार योगी एवं, प्रशांत मिंज	53
21.	**हरे चारे को संरक्षित करने की विधियाँ** बिजेन्द्र सिंह मीना, देवेन्द्र कुमार मीना एवं खजान सिंह	57
22.	**सेवा और स्वामिभक्ति की उम्दा मिसाल है : पशुजगत** आर.एस.गौतम, तथा रमेश चंद्रा	59
23.	**विकसित तकनीक व उच्च गति द्वारा रेशों का गुणवत्ता मूल्यांकन** श्री चित्रनायक	60
24.	**बहुउद्देशीय कृषि मॉडल या एकीकृत खेती प्रारूप – लघु किसानों के लिए मुनाफे का सौदा** एच.एस.जाट, एन.पी.एस.यदुवंशी, आर.एस.त्रिपाठी, आर.एस.पांडे, पी.सी शर्मा. एस.के.चौघरी, एस.के. सिंह, आर.के. यादव, एस.एस.कुंडू, एन.एस. सिरोही, जे.सी. डागर, गुरबचन सिंह एवं डी.के. शर्मा	65
25.	**अधिक उत्पादन के लिए ''एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन'' (इन्टीग्रेटेड पेस्ट मैनेजमेन्ट/आई.पी.एम.) अपनाएं** उत्तम कुमार	72
26.	**दुधारू पशुओं में होने वाले प्रमुख फ्लूक जनित रोग एवं इसके रोकथाम** संजय कुमार भारती, अजीत कुमार एवं सुदर्शन कुमार	75
27.	**बाजार केन्द्रित विस्तारः बदलते परिवेश में दुग्ध उत्पादकों की जरूरत** बागीश कुमार, गोपाल सांखला, एस.के.झा, अरिंदम नाग, ज्योति मंजूषा	78
28.	**मौजेरेला चीज़ निर्यातः मालामाल होने की कूँजी** सुमित गोयल व जी. के. गोयल	80
29.	**आन्तरिक व बाहरी डेरी पशुओं के शारीरिक पर्यावरण का संचालन व नियंत्रण में तीव्र प्रावस्था प्रोटीन (एक्यूट फेस प्रोटीन) का उपयोग** आनन्द लक्ष्मी, जे.पी.सहगल, फड अशोक, रेखा मौर्य	82
30.	**जल संरक्षण का महत्व** अक्षय चौहान	85
31.	**अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में पौश्टिकता से भरपूर हरे चारे की उपलब्धता बढाने हेतु बहुउद्देशीय कृषि वानिकी** एच.एस. जाट, सत्येन्द्र कुमार, आर. के. यादव एव धीरज सिंह	86

32.	दुधारू पशुओं में दुग्ध उत्पादकता बढ़ाने योग्य चारे एवं दाने अवनीश कुमार गौतम, संजय कुमार भारती, पंकज कुमार गौतम एवं सुदर्शन कुमार	90
33.	बहिर्वेधन प्रौद्योगिकी द्वारा स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक स्नैक्स का उत्पादन उपासना यादव, अनुज कुमार, आकांक्षा वडेहरा, ऋधामा प्रसाद एवं आर.आर.बी. सिंह	92
34.	राजभाषा (हिन्दी) का वैश्वीकरण आर. एस. गौतम, कंचन चौधरी	96
35.	पर्यावरण बचाएं (कविता) कुमुदिनी नौटियाल	97
36.	दाल (कविता) अनूप सिंह सचान	98
37.	निवेदन (कविता) आर. डी. शर्मा	98
38.	धरती पर बसा परिवार / माँ (कविता) पुष्प नायक	99
39.	भोली –भोली गाय हमारी (कविता) सुधीर कुमार	100
40.	चारा (कविता) मगन सिंह	101
41.	मातरः सर्वभूतानाम् गावः सर्व सुखप्रदा चन्द्रशेखर	102
42.	राजभाषा मास –2012–13	103
43.	संघ सरकार की राजभाषा नीति अनुपालन संबंधी कार्यकलापों का विवरण (2012–13)	104
44.	राजभाषा कार्यकलापों की झलकियाँ	105
45.	शोध–पत्र एवं पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता {14.9.2012}	114
46.	टिप्पण एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता (21–9–2012)	115
47.	वैज्ञानिक एवं तकनीकी मूल हिन्दी लेखन पुरस्कार योजना वर्ष 2011–12	116
48.	पाठकों की प्रतिक्रिया	117
49.	राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान,करनाल द्वारा प्रकाशित पुस्तक, बुलेटिन/फोल्डर, आदि (2010–2011 से 2012–13 तक)	119

वैज्ञानिक/तकनीकी आलेख

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थानः क्लोनिंग के बढ़ते चरण

आर.एस.माणिक[1], एस.के.सिंगला[1], पी पल्टा[1], एम.एस.चौहान[1] एवं ए.के. श्रीवास्तव[2]

स्टेम सेल जीवधारियों में पायी जाने वाली एक जैविक कोशिका है, जो किसी भी अन्य विशिष्ट कोशिका की भांति होती है। यह पूर्ण रूप से उर्वर कोशिका है, जिसके विभाजित होने, अविभेदिकृत तथा विविध शारीरिक अवयवों के पुनरूत्थान की क्षमता रखने के कारण इनका महत्व काफी बढ़ गया है, पिछले कुछ वर्षों से स्टेम सेल से संबंधित संभावनाओं पर जितने शोध–अध्ययन किये जा रहे हैं, उतने शायद ही किसी अन्य विषयों पर हुए हों। स्टेम सेल की उपयोगिता ने चिकित्सा के क्षेत्र में नित नए आयामों को स्थापित करके सुनहरे भविष्य की संभावनाओं को पंख लगा दिए हैं।

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने भैंस का क्लोन विकसित किया तथा पहली क्लोन्ड कटड़ी का जन्म 6 फरवरी, 2009 को हुआ। एडवांस ''हैंड–गाइडिड क्लोनिंग तकनीक'' द्वारा संस्थान में 6 जून, 2009 को विश्व की द्वितीय क्लोन्ड कटड़ी का जन्म हुआ। यह क्लोन्ड भैंस की कटड़ी पहली कटड़ी से भिन्न है चूंकि इस केस में प्रदाता कोशिका एक भ्रूण से ली गई थी। यह तकनीक जो कि राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने विकसित की है वह 'परम्परागत क्लोनिंग तकनीक' का संशोधित रूप है। जन्म के समय इस कटड़ी का भार लगभग 43 कि.ग्रा. था। 'गरिमा' क्लोनड कटड़ी का जन्म विश्वस्तर का कीर्तिमान है जो भारतीय पशु विज्ञान में एक अनोखी आशा लेकर आया है, चूंकि देश में बेहतर झोटों की कमी है अतः इस तकनीक से प्राप्त इच्छित पशु सफलता पशु विकास की नई रोशनी है। वैज्ञानिकों का दावा है कि हैंडगाइडिड क्लोनिंग की यह तकनीक पशुओं के श्रेष्ठ जर्मप्लाज़्म (जननद्रव्य) के तीव्र उत्पादन की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देगी।

विश्व की द्वितीय क्लोन्ड कटड़ी 'गरिमा' अपने बच्चे महिमा के साथ

1– प्रधान वैज्ञानिक, ए.बी.टी.सी.प्रभाग, 2– निदेशक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों के अथक शोध प्रयासों से 25 जनवरी 2013 को संस्थान में विश्व की प्रथम क्लोन्ड भैंस 'गरिमा' ने विश्व की प्रथम क्लोन्ड कटड़ी 'महिमा' को जन्म देकर संस्थान की यश कीर्ति में चार चांद लगाए हैं। महिमा को विश्व की पहली क्लोन्ड भैंस से जन्मी विश्व की प्रथम क्लोन्ड कटड़ी होने का गौरव प्राप्त हुआ है। जन्म के समय महिमा का शरीर भार 32 किलोग्राम था तथा वह पूर्ण रूप से स्वस्थ है।

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के इतिहास में एक और महत्वपूर्ण उपलब्धि हुई। संस्थान में एक नवीन तथा उन्नत हैंड गाइडिड क्लोनिंग तकनीकी द्वारा दिनांक 18 मार्च, 2013 को अपराह्न 1.15 पर भैंस के क्लोन्ड कटड़े 'स्वर्ण' का जन्म हुआ। कटड़ा सामान्य प्रसव द्वार पैदा हुआ तथा जन्म के समय इसका शरीर भार लगभग 55 कि.ग्रा. था। नवजात कटड़े का स्वास्थय ठीक है तथा जन्म के कुछ समय पश्चात ही उसने अपनी मां का दूध पीना प्रारंभ कर दिया था। इसके जन्म कार्य में लगी डाक्टरों की टीम ने बताया कि यह क्लोन्ड कटड़ा अद्वितीय है तथा पहले उत्पन्न क्लोनों से भिन्न है। उन्होंने बताया कि प्रयुक्त दाता सोमैटिक कोशिका एवं झोटे का वीर्य प्लाज़्मा से वियोजित की गई थी जिसका कि हाल ही में संस्थान के पशु प्रजनन अनुसंधान केन्द्र (ए.बी. आर.सी.) पर वीर्य प्रदान करने के लिए प्रयोग किया जाता है। संस्थान के निदेशक डा. ए.के.श्रीवास्तव ने इस बात पर बल दिया कि सर्वश्रेष्ठ झोटों की काफी कमी है तथा इस उपलब्धि से आने वाले अल्प समय में इन झोटों की मांग एवं आपूर्ति में अन्तर को कम करने में सक्षम होगें।

स्वर्ण कटड़े के साथ वैज्ञानिकों की टीम

प्रजनक सांडों की देखभाल एवं प्रबंधन

निशांत कुमार[2], टी.के मोहंती[1], शिव प्रसाद[1],
ऋषिकांत सिंह[2] एवं आर. एन. यादव[3]

कुछ वर्षों पहले तक यह कथन था कि किसी भी डेरी फार्म के दुग्ध उत्पादन में प्रजनक सांड का योगदान आधा होता है लेकिन अब वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रजनन हेतु प्रयोग होने वाले सांडों का योगदान 70 प्रतिशत तक होता है। सांड की उर्वरता (Fertility) एंव आनुवंशिक श्रेष्ठता (Genetic superiority) का गाय एंव भैसों की उत्पादन और पुनरूत्पादन क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका है। दुर्भाग्यवश हमारे देश में प्रजनक सांड के महत्व को अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता है। उचित प्रबंधन एवं देखभाल की कमी की वजह से सांड अनुर्वरता का शिकार हो जाते हैं और गो पालको को आर्थिक क्षति होती है। अतः प्रजनक सांड के पालन पोषण एंव देखभाल पर जागरूकता एवं विशेष ध्यान देने की जरूरत है।

प्रत्येक दुग्ध उत्पादक किसान के लिए यह बेहद महत्वपूर्ण है कि वह अपनी गायों के प्रजनन के लिए किस सांड का चयन करता है। गो पालकों को सांड की खरीदारी/चयन के समय अत्यधिक सतर्कता रखनी चाहिए।

सांड का चुनाव

- सांड का चयन उसके माता, पिता, दादी एंव सम्बन्धियों के दुग्ध उत्पादन क्षमता के रिकॉर्ड देखने के बाद किया जाना चाहिए। इसे वंशावली विधि द्वारा चयन कहते हैं।
- संबंधित सांड की माता उचित आकार, नस्ल, तथा दुधारू लक्ष्ण युक्त रही हो।
- सांड संक्रामक बीमारियों से ग्रसित न हो, सामान्य स्वास्थ्य अच्छा हो और नियमित रूप से उनका टीकाकरण हुआ हो।
- सांड के चुनाव में अधिक उम्र के सांड की अपेक्षा युवा सांड को चुनना चाहिए क्योंकि वे प्रजनन के लिए अधिक सक्षम एवं योग्य होते है।
- सांड का शरीर लंबा, ऊँचा तथा हृष्टपुष्ट होना चाहिए।
- उसकी त्वचा पतली और चमकीली होनी चाहिए।
- सांड का सर लंबा, माथा चौड़ा, कंधे ऊँचे, पुट्ठे चौड़े और पीठ लम्बी होनी चाहिए।
- सांड की चारों टांगें स्वस्थ और मजबूत होनी चाहिए। गौ पालकों को सांड को चलाकर भी देखना चाहिए।
- सांड के वृषण कोष (Scrotum) का आकार एंव परिधि बड़ा होना चाहिए। शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि बड़े वृषनकोष परिधि (Scrotal circumference) वाले सांडों का वीर्य उत्पादन अधिक होता है और इनसे पैदा हुई बछियों की उर्वरता उच्च स्तर की होती हैं

पोषण प्रबंधन

- प्रजनन के लिए प्रयोग किये जाने वाले सांडों को अच्छी किस्म का चारा तथा पर्याप्त मात्रा में दाना खिलाना चाहिए ताकि वे स्वस्थ एवं चुस्त रहे परन्तु चर्बीयुक्त व मोटे न हों।

1– वैज्ञानिक, एल.पी.एम, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक, एल.पी.एम, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3– शोध छात्र, एल.पी.एम, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

- 18 महीने से 3 साल तक की उम्र के सांड़ों को उनके शारीरिक वजन शुष्क बात के 2.5 से 3 प्रतिशत की दर पर खिलाना चाहिए ताकि वे प्रति दिन 700 से 800 ग्राम की दर से विकसित कर सके।
- प्रजनक सांड के लिए दाना मिश्रण में 12–15 प्रतिशत पाच्य प्रोटीन, 70 प्रतिशत कुल पाच्य पोषक तत्व, खनिज एंव पर्याप्त विटामिन्स होने चाहिए।
- सामान्यतः एक सांड को 2–3 किलो दाना, 25–30 किलो हरा चारा और 4–5 किलो सूखा चारा प्रतिदिन देना चाहिए। प्रशिक्षणाधीन सांड को 1–2 किलो अतिरिक्त दाना खिलाना चाहिए।
- इसके अलावा सांड को रोजाना 50–60 ग्राम खनिज लवण भी खिलाना चाहिए। अगर संभव हो तो क्षेत्र के चारा/मिटटी में खनिज की कमी को ध्यान में रखते हुए खनिज लवण मिश्रण तैयार करवाया जाना चाहिए।
- सांडों को अत्यधिक साइलेज तथा सूखी घास खिलाने से उनका पेट बहुत बढ़ जाता है जो सम्भोग की क्रिया में बाधक बन सकता है।

आवास प्रबंधन

- सांड घर डेरी फार्म के एक तरफ किनारे पर होना चाहिए। सांड घर का मादा शेड से दूर निर्माण करना चाहिए।
- प्रत्येक सांड के लिए अलग–अलग घर होना चाहिए। प्रत्येक बाड़े में 3x4 मीटर छतदार तथा 10X12 मीटर खुला हिस्सा होना चाहिए। छायादार स्थान की छत से ऊँचाई लगभग 175–200 से0 मी0 होनी चाहिए।
- इसके अतिरिक्त सांडों के व्यायाम के लिए आँगन बनाना भी आवश्यक है।
- सांड घर में वेंटिलेशन और प्रकाश की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- सांड घर की ऐसी दिशा हो कि उसे अन्य पशु दिखाई दे। इससे उसकी प्रजनन क्षमता बढ़ती है।

प्रजनन प्रबंधन

- संकर नस्ल के सांड को 1.5 से 2 साल की उम्र में सप्ताह में एक बार प्रजनन के लिए उपयोग किया जाना चाहिए।
- 2.5 साल से अधिक उम्र के सांड को सप्ताह में 2 बार प्रजनन के लिए उपयोग किया जाना चाहिए।
- अगर गो पालक के पास श्रेष्ठ वंशावली एंव गुणवत्ता का सांड है तो उसे वीर्य एकत्रीकरण एवं हिमीकृत वीर्य उत्पादन के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है जो गो पालक की आय का स्त्रोत हो सकता है।

- वीर्य एकत्रीकरण करने के लिए हमें सांड को विशेष विधि से प्रशिक्षण देना पड़ता है।
- इस विधि में सांड को टीजर पशु पर आरूढ़ कराया जाता है और कृत्रिम योनि के सहारे वीर्य एकत्रित किया जाता है।
- प्रातः काल का समय सांडों को प्रशिक्षण देने का सबसे अनुकूल समय है। सांडों को अमदकालीय मादा अथवा टीजर्स पर प्रशिक्षित किया जाता है। कुछ दिनों तक सांड़ को लगातार टीजर के पास ले जाने से वो उनसे परिचित हो जाते है और उनमे रूचि लेने लगते है। धीरे धीरे वे उत्तेजित होने लगते है और जब उनसे यौन उत्तेजना विकसित हो जाती है, तब वे टीजर पर आरूढ़ होते है।
- यौन आकांक्षा को ज्यादा उत्तेजित करने के लिए सांड के टीजर के पास पहुंचने पर विशेष ध्वनियाँ की जाती है। आरूढ़ होने के बाद सांड मैथुन करने के लिए पूर्ण रूप से अपना शिश्न बाहर निकालते हैं तब एक प्रशिक्षित व्यक्ति जो कृत्रिम योनि को पकड़े रहता है, तेजी के साथ उसके शिश्न को कृत्रिम योनि के अन्दर कर देता है। सांड को कृत्रिम योनि में प्राकृतिक योनि जैसा ही एहसास होता है और वो उसके अन्दर अपने वीर्य को स्खलित कर देता है।
- सांड को वीर्यदान /प्रजनन के लिए तैयार करते समय उनकी स्वच्छता पर ध्यान देना बेहद आवश्यक है। सांड को भली भाँति नहलाना चाहिए तथा शिश्नमुन्दच्छद को अच्छे से धोना चाहिए।
- अधिक ठण्डे मौसम में उन्हें रोजाना नहलाने के बजाय केवल ब्रुश से साफ कर देना चाहिए। यदि शिश्न्मुन्दच्छद के रोम बहुत ज्यादा बढ़ गए है तो उनको काटकर छोटा किया जा सकता है। सप्ताह में एक बार शिश्न्मुन्दच्छद को पोटासियम परमैंग्नेट (1 हजार भाग जल में एक भाग) से भली भांति साफ़ करना चाहिए। पोटासियम परमैंग्नेट लोशन से धोने से तुरंत पश्चात शिश्नमुन्दच्छद में तरल पैराफिन अथवा कोई एंटीसेप्टिक लोशन अन्तःक्षेपित कर देना चाहिए।

खुर प्रबंधन

- खुरों की चोट एवं बीमारियाँ प्रजनक सांड की आरोहण क्षमता एवं वीर्य स्खलन को बुरी तरह प्रभावित करती है, इसलिए सांड के खुरों की नियमित रूप से जांच एवं हर छः महीने में ट्रीमिंग (खुर संवारना) होती रहनी चाहिए। जो सांड बंधे रहते है और कम व्यायाम करते है उन्हें अधिक ट्रीमिंग की आवश्यकता होती है।
- कुछ सांड विशेषकर हॉल्सटिन नस्ल के सांड खुर सडान्ध के लिए अति संवेदनशील होते है। ऐसे सांडो के खुरों की हर पखवाड़े जांच करनी चाहिए और उचित उपचार देना चाहिए। ऐसे सांडों के पैरों को सप्ताह में एक बार 5—10 प्रतिशत कॉपर सल्फेट के घोल से धोना चाहिए।

स्वास्थ्य प्रबंधन

- बीमारियों से बचाव हेतु सांड के स्वास्थ्य की विशेष देखभाल होनी चाहिए।
- सांडों को खरीदते समय मुख्य संक्रामक बीमारियों की जांच होनी चाहिए। सांड़ो को क्षेत्र में व्याप्त सभी रोगों के विरूद्ध टीकाकरण करवाना चाहिए।
- खुरपका—मुंहपका, लंगड़ी और गलघोटू रोगों के विरूद्व टीकाकरण 6 माह की उम्र से करना चाहिए। खुरपका—मुंहपका टीको की पुनरावृति 6 महीने के अंतराल पर करनी चाहिए। लंगड़ी और गलघोटू के टीको की वार्षिक पुनरावृति होनी चाहिए ।

- जिन क्षेत्रो में थेलेरिओसिस और एंथ्रेक्स बिमारियों का प्रकोप हो वहां थेलेरिया के विरूद्ध टीकाकरण 2 माह की उम्र के बाद एक बार कर देना चाहिए । एंथ्रेक्स के विरूद्ध टीकाकरण 3 माह पर पहली बार करके हर वर्षा ऋतु के पूर्व करना चाहिए।
- झुण्ड में रखने से पहले प्रत्येक सांड को एक महीने तक पृथक्करण (isolation) में रखना चाहिए।
- आंतरिक और बाह्य परजीवीयों (Endo and ecto parasite) का नियंत्रण भी स्वास्थ्य प्रबंधन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। सांड का हर 6 महीने में परीक्षण किया जाना चाहिए और अगर वे परजीवी से पीड़ित हों तो उनका समुचित इलाज किया जाना चाहिए।
- अगर किसी रोग का प्रकोप फैल जाता है तो बीमार पशुओं को अलग किया जाना चाहिए और एक पशु परिचारक को उनकी विशेष देखभाल के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए।
- हर छः माह पर ब्रुसेल्लोसिस, विब्रिओसिस, ट्राईकोमोनिऐसिस, ट्यूबर्कुलोसिस एवं जोन्स डिजीज आदि रोगों के लिए भी उनका परीक्षण किया जाना चाहिए
- सांड़ो को संक्रमण से बचाने के लिए उन्हें हमेशा स्वस्थ और संक्रमण मुक्त गायों से ही संभोग कराना चाहिए। संभव हो तो हर एक मैथुन के पश्चात शिश्नमुन्दच्छद (Prepuce) को नॉर्मल सैलाइन या किसी एंटीसेप्टिक लोशन से धो लेना चाहिए।

सामान्य प्रबंधन

- सांड के बछड़ो को ओसर के समूह से 6 माह की उम्र में अलग कर देना चाहिए।
- प्रजनक सांड़ो को एक घंटे का नियमित व्यायाम कराना चाहिए। जिन सांडों का व्यायाम कराना संभव न हो उनके लिए 120 वर्ग मीटर खुला बाड़ा बनाया जाना चाहिए जिसमें वे मुक्त विचरण कर सकें। एक केन्द्र पर कई सांड होने पर बुल एक्सरसाइजर द्वारा उनको व्यायाम कराना चाहिए। शोधों से यह बात प्रमाणित हुई है कि नियमित व्यायाम से सांड के वीर्य की मात्रा और गुणवत्ता में सुधार होता है।
- प्रजनक सांड के शरीर का प्रतिमाह वजन रिकॉर्ड करना चाहिए।
- सांडों के बाड़ों की रोजाना सफाई होनी चाहिए। उनके रहने के कमरों की, फर्श की प्रतिदिन फेनायल से सफाई होनी चाहिए।
- सर्दी के मौसम में सप्ताह में एक या दो बार नर भैंसों के शरीर में सरसों के तेल से मालिश भी की जानी चाहिए।
- हमारे देश में अच्छी गुणवत्ता वाले सांडों की बेहद कमी है। अगर हम सतर्कता के साथ सांड का चयन करे, उसके पोषण, आवास, प्रजनन एवं स्वास्थ्य का जागरूकता के साथ प्रबंधन करे तो सांड में व्याप्त अनुर्वरता की समस्या का सफलतापूर्वक निवारण किया जा सकता है और देश के दुग्ध उत्पादन एंव उत्पादकता को और बढ़ाया जा सकता है।

पशुओं में खुर का अत्यधिक बढ़ना : जानकारी एवं निदान

आलोक कुमार सिंह

पशुओं में खुर का बढ़ना एक सतत्, प्राकृतिक प्रक्रिया है। जो पशु चलायमान होते है, उनके खुर घीसते रहते है। जिससे खुर अपने उचित आकार में बने रहते हैं। परन्तु दिन प्रति दिन घटते चारगाह, असंतुलित पशुपालन, शहरों में छोटे से छोटे स्थान पर बांध कर पशुपालन करने, पशुओं के खुरों की उचित देखभाल व कटाई–छटाई, रगड़ाई के आभाव में आजकल पशु का खुर अत्यधिक बढ़ रहा है। जिस कारण पशु चलने–फिरने व खड़ा होने में धीरे–धीरे असमर्थ होने लगता है। साथ ही पशु के स्वास्थ्य का तीव्र क्षरण भी प्रारम्भ हो जाता है। फलस्वरूप पशु बीमार, कमजोर दिखने लगता है। जिससे उत्पादन कार्य भी बाधित हो जाता है। यह समस्या लगभग छोटे पशुओं बकरी से लेते हुए गाय–भैंस तक में पायी जाती है। इस समस्या के कारण पशुपालकों को भारी आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है।

कारण

खुर का अत्यधिक बढ़ना दो प्रमुख कारणों से होता है –

1. लम्बे समय तक पशु को एक ही स्थान पर बाँध कर पशुपालन करना। जिससे पशु के खुर एक ही स्थान पर बंधे रहने के कारण घीसावट के आभाव में निरन्तर बढ़ते रहते है।
2. प्राकृतिक कारण : कभी–कभी प्राकृतिक कारणों अथवा अनुवांशिक/वंशागत गुणों के हस्तान्तरण या शारीरिक विकृति इत्यादि के कारण से भी पशुओं के खुर में तीव्र वृद्धि देखने को मिलती है। जिससे पशु के खुर सामान्य की अपेक्षा अधिक बढ़ जाते है।

उपरोक्त दोनो कारणों के अतिरिक्त कभी–कभी गौण कारणों :

(क) अत्यधिक उम्र होने के कारण भी खुर बढ़ते है।

(ख) कैल्सियम का क्षरण जब पशु शरीर से अधिक होता है। इस दशा में भी पशुओं के खुर में वृद्धि देखी जाती है।

(ग) पशु जब अत्यधिक कमजोर हो जाता है तब भी खुर बढ़ जाता है।

(घ) पशु को जब संतुलित राशन (चारा–दाना) नही प्राप्त होता है। तब खुर का बढ़ना जारी रहता है।

(ड़) वैक्टिरीयल बिमारी जो कि गंदे बाड़ों में चराई के दौरान पशु के खुरों में लगती है। उसके कारण भी खुर असमान्य हो जाते है।

(च) जब पशु चलने फिरने में असमर्थ हो जाता है तब भी खुर के अत्यधिक बढ़ने का कारण है।

लक्षण

1. उपरोक्त सभी कारणों के कारण एक समय ऐसा आता है कि पशु के खुर इतना अत्यधिक बढ़ जाते है कि पशु जब चलने की कोशिश करता है तो खुर के अत्यधिक बढ़े होने के कारण बार–बार पशु को ठोकर लगती रहती है जिससे पशु को कष्ट होता है। अतः पशु घुटनों के बल अथवा बढ़े हुए खुर के पैर को मोड़ कर चलने का प्रयास करता है।
2. पशु के खुर बढ़े हुए दिखते है।
3. पशु लंगड़ा कर चलता है।
4. पशु खुर बढ़े पैर का प्रयोग चलने फिरने में नहीं करता है।
5. पशु चलने–फिरने से परहेज करता है।
6. पशु चलने पर कष्टमय प्रतीत होता है।
7. पशु का खुराक (भोजन) कम हो जाता है।

1–शोध छात्र, बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय, बनारस

8. धीरे–धीरे उत्पादन भी कम हो जाता है।
9. पशु के शारीरिक वृद्धि में उपरोक्त घटावत दर्ज की जाती है।
10. मादा पशु समय से गर्मी में नहीं आती तथा नर पशु प्रजनन कार्य के प्रति उदासीन हो जाता है।
11. पशु के खुर में घाव की शिकायत मिलती है।
12. बढ़े हुए खुर में ज्यादा चोट के कारण रक्त का स्त्राव होता है।
13. पशु अत्यन्त कमजोर, सुस्त दिखता है।

उपचार

1. पशुओं में खुर बढ़ने की समस्या के उपचार हेतु खुर बढ़े पशु को अन्य पशुओं से अलग कर उसके खुर की कटाई–छटाई, व रगड़ाई करा देना चाहिए।
2. शहरी पशुपालकों को रेगमाल, रेती, चाकू आदि से कुशल खुर काटने वाले तथा पशु चिकित्सक कि उपस्थिति में पशु के खुर की घिसाई, रगड़ाई कटाई–छटाई कराते रहना चाहिए। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखे कि खुर एक सीमा से अधिक न कटे वरन् ज्यादा कटने से भी पशु को कष्ट हो सकता है तथा समय समय पर पशु चिकित्सक से पशुओं का अवलोकन कराते रहे तथा संस्तुत उपचार को अपनाएं।

बचाव व रोकथाम

1. इस समस्या से बचाव व रोकथाम हेतु कभी भी पशुपालन के अन्तर्गत पशुओं को लम्बे समय तक एक ही स्थान पर बांध कर खिलाई–पिलाई से बचना चाहिए।
2. यथा सम्भव पशुओं को समय–समय पर चारागाह में भेजते रहना चाहिए जिससे प्राकृतिक रूप से खुर घीस कर अपने उचित आकार में बने रहें।
3. शहरों में अथवा ग्रामीण अंचल में पशुपालन को अपनाने से पूर्व पशु चिकित्सकों एवं पशु वैज्ञानिकों से सलाह–परामर्श ले लेना चाहिए तथा उनके द्वारा सुझाये गये उपयुक्त प्रजाति का चयन पशुपालन में करना चाहिए। जैसे– बकरी की बरबरी नस्ल शहरों में बांध कर पालने हेतु सर्वोत्तम है।
4. खुर बढ़े माता अथवा पिता का चयन पशुपालन व्यवसाय में नहीं करना चाहिए।
5. पशु के खुरों का भी अवलोकन करते रहना चाहिए तथा बढ़ा हुआ प्रतीत होने पर तत्काल पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।
6. पशुओं को संतुलित आहार दिया जाये।
7 पशु बाड़े की नियमित साफ–सफाई कराते रहना चाहिए।
8. पशुओं के खुर को कीटाणुनाशक से उपचारित कराते रहना चाहिए।
9. साफ–सुथरे, स्वस्थ बाड़ों में चराई हेतु पशुओं को भेजे।
10. पशुपालक को पशुओं के चलने–फिरने, व्यायाम, चराई हेतु पर्याप्त खुले स्थान की व्यवस्था करनी चाहिए।
11. कम स्थान में अधिक संख्या में पशुपालन से बचाना चाहिए।श्रेष्ठ होगा की विभिन्न पशुओं हेतु सुझाएं संस्तुत आदर्श माप के अनुसार प्रत्येक पशु को स्थान उपलब्ध कराना चाहिए।
12. शहरी पशुओं को समय–समय पर ग्रामीण अंचल में ग्रीष्मकालीन चराई हेतु भेजते रहना चाहिए।
13. पशुओं को कच्चे–पक्के दोनों स्थानों पर चलाते–फिराते रहना चाहिये।
14. बढ़े हुए खुरों से निजात पाने के लिए नियमित रूप से कतरन करते रहना चाहिये।

उपरोक्त बचाव व रोकथाम के उपायों का अपनाने से पशुओं में बढ़ते खुर अथवा खुर बढ़ने की समस्या को नियन्त्रित किया जा सकता है।

Hknkojh HkSl % ,d Js"B ?kh mRikn uLy

ch- ih- dq'kokgk[1], lqYrku flag[2] ,oa ,u-ds- lsBh[3]

परिचय : भारतीय डेरी व्यवसाय में घी का महत्वपूर्ण स्थान है। देश में उत्पादित दूध की सर्वाधिक मात्रा घी में परिवर्तित की जाती है। हमारे देश में भैसों की लगभग 23 नस्लें जिसमें से 12 नस्लों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद व नस्ल पंजीकरण समिति द्वारा मान्यता प्रदान की गयी है। भदावरी उनमें से महत्वपूर्ण नस्ल है, जो दूध में अत्याधिक वसा प्रतिशत के लिए प्रसिद्ध है। भैसों की विभिन्न नस्लों में औसत दुग्ध वसा प्रतिशत चित्र संख्या 1 में लिया गया है। भदावरी भैंस के दूध में औसतन 8.0 प्रतिशत वसा पायी जाती है, जो देश में पायी जाने वाली भैंस की किसी भी नस्ल से अधिक है। भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी में भदावसी भैंस संरक्षण एवं संर्वधन परियोजना के तहत रखे गये भैंसों के समूह में भदावरी भैंस के दुध में अधिकतम 13—14 प्रतिशत तक वसा पायी गयी है। भदावरी भैंस के दूध का औसत संगठन तालिका 1 में दिया गया है।

rkfydk 1 % Hknkojh HkSl ds nw/k dk vkSlr laxBu

olk	8-20 izfr'kr ¼6 ls 14 izfr'kr½
dqy Bksl rRo	19-00 izfr'kr
izksVhu	4-11 izfr'kr
dSfYl;e	205-72 fe-xzk-@100 fe-yh-
QkLQksjl	140-90 fe-xzk-@100 fe-yh-
ftad	3-82 ekbØks xzk-@fe-yh-
dkij	0-24 ekbØks xzk-@fe-yh-
eSxuht	0-117 ekbØks xzk-@fe-yh-

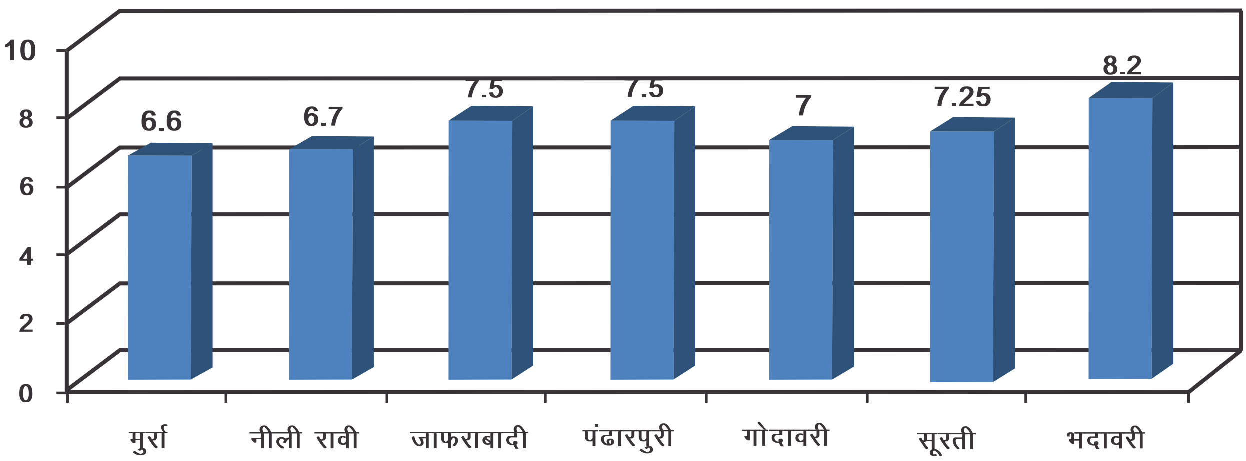

fp= la[;k 1 HkSalksa dh fofHkUu uLyksa esa vkSlr nqX/k olk izfr'kr

1. प्रधान वैज्ञानिक, 3. निदेशक, केन्द्रीय भैंस अनुसंधान संस्थान, हिसार
2. प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी

पहचान एवं विशेषताएं :

इस नस्ल की भैंस का शारीरिक आकार मध्यम, रंग ताबिया तथा शरीर पर बाल कम होते है। टांगें छोटी तथा मजबूत होती है। घुटने से नीचे का हिस्सा हल्के चीले सफेद रंग का होता है। सिर के अगले हिस्से पर आंखों के ऊपर वाला भाग सफेदी लिए हुए होता है। गर्दन के निचले भाग पर दो सफेद धारियां होती है जिन्हें कंठ माला या जनेऊ कहते है। अयन का रंग गुलाबी होता है। सींग तलवार के आकार का होता है। इस नस्ल के वयस्क पशुओं का औसतन भार 300–400 कि.ग्रा. होता है। छोटे आकार तथा कम भार की वजह से इनकी आहार आवश्यकता भैसों की अन्य नस्लों (मुख्यतया मुर्रा, नीली रावी, जाफरावादी, मेहसाना आदि) की तुलना के काफी कम है जिससे इसे कम संसाधनों में गरीब किसानों पशुपालकों भूमिहीन कृषकों द्वारा आसानी से पाला जा सकता है। इस नस्ल के पशु कठिन परिस्थितियों में रहने की क्षमता रखते है तथा अति गर्म और आर्द्र जलवायु में आराम से रह सकते है। दूध में अत्यधिक वसा, मध्यम आकार और जो भी मिल जायें उसको खाकर अपना गुजारा कर लेने के कारण इसकी खाद्य परिवर्तन क्षमता (feed efficiency) अधिक है। इस नस्ल के पशु कई बीमारियों के प्रतिरोधी (Disease resistant) पाये गये है, बच्चों के मृत्यु दर भैसों के अन्य नस्लों की तुलना में अत्यन्त कम है (5 प्रतिशत से कम)।

प्राप्ति स्थल :

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व इटावा, आगरा, भिण्ड, मुरैना तथा ग्वालियर जनपद में कुछ हिस्सों को मिलाकर एक छोटा सा राज्य था जिसे भदावर कहते थे। भैस की यह नस्ल चूंकि भदावर क्षेत्र में विकसित हुई इसलिये इसका नाम भदावरी पड़ा। वर्तमान में इस नस्ल की भैसें आगरा की बाह तहसील, भिण्ड के भिण्ड तथा अटेर तहसील, इटावा (बढ़पुरा, चकरनगर), औरैय्या तथा जालौन जिलों में यमुना तथा चम्बल नदी के आस पास के क्षेत्रों में पायी जाती है। ललितपुर तथा झाँसी जनपदों में भी इस नस्ल के जानवर पाये गये है हालांकि उनकी संख्या काफी कम है। भदावरी भैंस संरक्षण एवं सर्वधन परियोजना के तहत भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान झाँसी में इस नस्ल के पशुओं में शोध कार्य हेतु पाला जा रहा है। इस परियोजना के अन्तर्गत भदावरी नस्ल के संरक्षण एवं सुधार हेतु उत्तम सांडों का विकास किया जा रहा है तथा उनका वीर्य हिमीकरण करके उसको भविष्य में इस्तेमाल के लिए सुरक्षित रखा जा रहा है। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य प्रजनन हेतु उच्च कोटि के सांड तथा उनका वीर्य किसानों को उपलब्ध कराना है जिससे ग्राम स्तर पर भदावरी नस्ल का संरक्षण एवं उनके उत्पादन स्तर में सुधार किया जा सके।

उत्पादन स्तर :

भदावरी मुर्रा भैसों की तुलना में दूध तो थोड़ा कम देती है लेकिन दूध से वसा का अधिक प्रतिशत, विषम परिस्थितियों में रहने की क्षमता, बच्चों से कम मृत्यु दर तथा तुलनात्मक रूप से कम आहार आवश्यकता आदि गुणो के कारण यह नस्ल किसानो मे काफी लोकप्रिय है भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान झाँसी में चलित परियोजना के अन्तर्गत भदावरी भैसों की उत्पादकता को जानने के विस्तृत अध्ययन किया जा रहा है। भदावरी भैस औसतन 5 से 6 कि.ग्रा. दूध प्रतिदिन देती है, लेकिन अच्छे पशु प्रबंधन द्वारा 8 से 10 कि.ग्रा. प्रतिदिन तक दूध प्राप्त किया जा सकता है। भदावरी भैसें एक ब्यांत (लगभग 300 दिन) में 1200 से 1800 कि.ग्रा दूध देती है। उत्पादन संबंधित आकड़े तालिका मे दिये गये ।

तालिका 2 : भदावरी भैंस का औसत उत्पादन स्तर

प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन	4–5 कि.ग्रा.
प्रति ब्याँत दुग्ध उत्पादन	1430 ली.
ब्याँत की औसत अवधि	290 दिन
दो ब्याँत का अन्तर	475 दिन
पहले ब्याँत के समय औसत उम्र	47 महीने

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि घी एवं दुग्ध उत्पादन हेतु भदावरी एक बहुत ही उम्दा नस्ल है इस नस्ल की भैसों को दुरूस्त क्षेत्रों में जहां आवागमन के साधन कम है दूध को बेचने या संरक्षित करने की सुविधायें नहीं है आराम से पाला जा सकता है। गावों में दूध बेचने की सुविधा न होने पर, दूध से घी निकालकर महीने में एक या दो बार शहर में बेचा जा सकता है। घी एक ऐसा उत्पाद है जिसको बिना खराब हुये वर्षों तक रखा जा सकता है। आज जब शुद्ध देसी घी के दाम असमान छू रहे है तब किसान भाई घी बेचकर अच्छा लाभ प्राप्त कर सकतेहै।

Hknkojh lkM

Hknkojh Hk S l

Hknkojh HkSals

Hknkojh cPps

'भारत में गोवंश विविधता एवं दुग्ध उत्पादन में उनका योगदान

पी. के. सिंह[1] एवं करूणा असीजा[2]

भारत एक विशाल गोसंपदा वाला देश है। दुनिया का लगभग 15 प्रतिशत गोवंश भारत में पाया जाता है। भारत की कुल पशु सम्पदा (लगभग 52.9 करोड़) में से 37 प्रतिशत गोवंश (19.9 करोड़) है। यदि भारत में गो पालन के इतिहास पर गौर करे तो हमें पता चलता है कि भारत में गौपालन मूल रूप से कृषि कार्यों में सहायता के लिए शुरू किया गया था। भारतीय कृषि गाय/बैलों के सहयोग से की जाती रही है। विगत 4–5 दशकों में भारत में कृषि का मशीनीकरण किया गया है, जिससे गोवंश की कृषि में उपयोगिता प्रभावित हुई है । कृषि के मशीनीकरण की गति विशाल भारत के विभिन्न अंचलों में भिन्न–भिन्न रही है। उत्तर भारत में राज्यों में से पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि में मशीनीकरण तीव्र गति से एवं पूर्वी एवं दक्षिणी अंचलों में धीमी अथवा मध्यम गति से हुई है। भारत के किसानों के पास कृषि योग्य जमीन का जोत आकार छोटा है अर्थात अधिकांशतया किसान छोटे एवं सीमान्त कृषकों की श्रेणी में आते हैं। यही कारण है कि आज भी भारतीय कृषि में आधे से अधिक भूमि पर बैलों का प्रयोग हो रहा है। विगत 4–5 दशकों में गाय के दूध उत्पादन एवं अत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रयास किये गए है। जिसके फलस्वरूप 2010 में देश के दुग्ध उत्पादन में गायों का योगदान 42 प्रतिशत से अधिक हो गया है। इस लेख में भारत की गोवंश विविधता एवं दूध उत्पादन के योगदान का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

भारत के विभिन्न प्रान्तों/क्षेत्रों में उपलब्ध कुल गोवंश एवं स्वदेशी गोवंशीय नस्लों व उनकी संख्या का विवरण तालिका–1 में दर्शाया गया है। भारतीय गोवंश की कुल संख्या का 11.6 प्रतिशत शुद्ध स्वदेशी नस्लों के रूप में पाया जाता है। भारत के पशु गणना–2007 के अनुसार भारत में 44 गोवंशीय नस्लें उपलब्ध हैं। इन नस्लों में अधिकांशतया भारवाही नस्लें हैं, जिनसे दूध कम प्राप्त होता है, किन्तु उच्च गुणवता के बछड़ों से कृषि कार्यो में सहायता मिलती है। स्वदेशी नस्लों में कुछ अच्छा दूध देने वाली (साहीवाल, रेड सिन्धी, गिर और राठी) एवं कुछ दुकाजी नस्लें (हरियाना गंगातीरी, थारपारकर कांकरेज) हैं। हरियाना नस्ल का वितरण 12 राज्यों में, साहीवाल 10 राज्यों में, एवं गिर 8 राज्यों में है। उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश राज्यों में 8–8 नस्लें जबकि राजस्थान, बिहार, झारखण्ड राज्यों में 7–7 नस्लें पाई जाती हैं। तमिलनाडू, महाराष्ट्र और कर्नाटक राज्यों में से प्रत्येक में 6 गोवंशीय नस्लें पाई जाती हैं। पूर्वी/पूर्वोत्तर राज्यों में से पश्चिम बंगाल, अरूणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, राज्यों में गाय की कोई भी वर्णित नस्ल नहीं पाई जाती है। संख्या के आधार पर कांकरेज गायों की संख्या सबसे अधिक (38. 84लाख) हैं, जबकि हरियाना, हल्लीकर, मालवी, गिर, खिल्लार, मलनाद गिड्डा नस्लों में से प्रत्येक की संख्या भी 10 लाख से अधिक हैं। इसके विपरीत कुमांउनी, पून्गानूर, वेचूर व कसरागोड़े ड्वार्फ (ब्लैक) नस्लों के पशुओं की संख्या 1000 से कम हैं और ये नस्लें खतरे में हैं। इनके तुरंत संरक्षण की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त कृष्णावेली व तराई नस्लों के पशुओं की संख्या भी दो हजार के करीब है और इन नस्लों पर भी तुरंत ध्यान देने की आवश्यकता है। देश का 69.7 प्रतिशत गोवंश अवर्णित श्रेणी में रखा गया है। इस बड़े गोवंशीय भाग में इस बात की पूरी सम्भावना है कि कई गोवंशीय नस्लें देश के सुदूर क्षेत्रों में हो सकती हैं, जिनका विवरण उपलब्ध नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि देश के अवर्णित गोवंश का गहराई से अध्ययन किया जाये और इस बात का पता लगाया जाये कि इन अवर्णित श्रेणी के गोवंश में कितनी अन्य नस्लों का समावेश है। यदि अवर्णित श्रेणी के पशुओं में ऐसे समूह पाए जाते हैं, जिनको एक नस्ल का दर्जा दिया जा सकता है, तब इनका विवरण तैयार कर नस्ल के रूप में पंजीकृत किया जाना चाहिए। हालांकि कुल गोवंश का 2.1 प्रतिशत भाग को उच्चीकृत स्वदेशी श्रेणी (ग्रेडेड) में रखा गया है। भारतीय गोवंश का 15.7 प्रतिशत संकर पशुओं व 0.9 प्रतिशत विदेशी पशुओं के रूप में पाया जाता है। इस श्रेणी में मुख्य रूप से

1–प्रधान वैज्ञानिक, राष्ट्रीय पशु आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल
2–शोध छात्रा, राष्ट्रीय पशु आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल

होल्स्टीन फ्रीजियन तथा जर्सी व उनके संकर पशु है। विदेशी नस्लों के प्रयोग से भारत में अधिक दूध उत्पादन वाले कई स्ट्रेन जैसे फ्रीजवाल, करन–स्विस, करन–फ्रीज, सुनंदिनी, वृन्दावनी, जरसिंध आदि विकसित किये गए है। इस श्रेणी के पशुओं को अधिकांशतया उच्च लागत उच्च उत्पादन प्रणाली में पाला जाता है और गायों से प्राप्त कुल दूध का आधे से अधिक इस श्रेणी के पशुओं से प्राप्त होता है।

भारत के विभिन्न ज़ोन व प्रान्तों में दुधारू पशुओं का योगदान एवं उनकी उत्पादकता तालिका संख्या–2 व निम्न चित्र में दर्शायी गयी है।

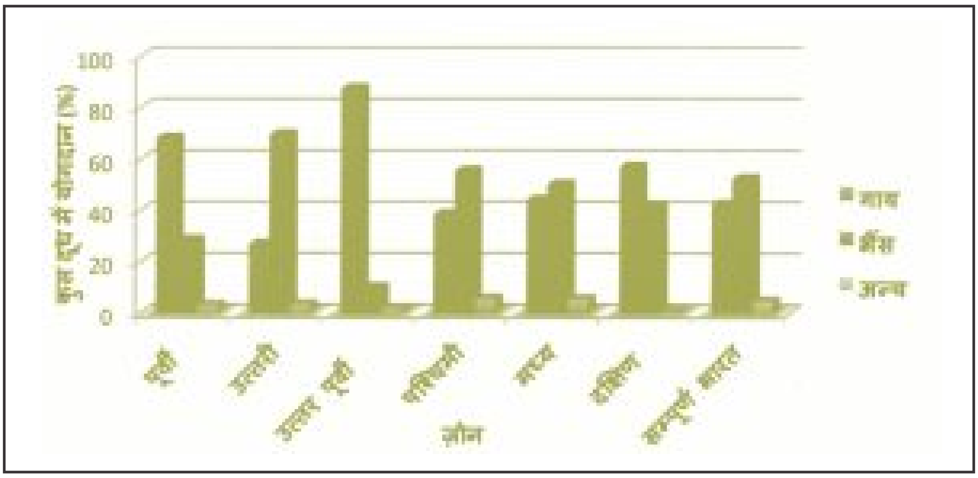

देश के उत्तरी राज्यों में दूध उत्पादन के क्षेत्र में भैंसों का योगदान अधिक है। उत्तर प्रदेश व पंजाब में भैंस, कुल दूध का 2/3 से अधिक योगदान करती है और हरियाना में भैसों का कुल दुग्ध उत्पादन में योगदान 84 प्रतिशत के करीब है। उत्तर के राज्यों में हिमाचल प्रदेश को छोड़कर लगभग सभी राज्यों में भैंसों का दुग्ध उत्पादन में अच्छा योगदान है। इन राज्यों में गायो का दुग्ध उत्पादन में योगदान 27 प्रतिशत है। पश्चिमी और मध्य ज़ोन में भैस का योगदान 50 प्रतिशत से थोड़ा अधिक है, जबकि गायों का योगदान 40 प्रतिशत के आसपास है। इस क्षेत्र के राज्यों में गोवा, महाराष्ट्र व छत्तीसगढ़ ही ऐसे राज्य है जिनमें गायों का योगदान 50 प्रतिशत से अधिक है। पूर्वी और पूर्वोत्तर क्षेत्रों में दूध उत्पादन मुख्य रूप से गायों से ही होता है। सिक्किम और अरूणाचल प्रदेश में समूचा दूध गायों से ही प्राप्त होता है। जबकि ओडिशा, बंगाल अन्य पूर्वोत्तर राज्यों में गायों का दुग्ध उत्पादन में योगदान 90 प्रतिशत है। यदि दक्षिण भारत के दूध उत्पादन को देखा जाये तो यह ज्ञात होता है कि केरल, तमिलनाडू में 90 प्रतिशत के आसपास, कर्नाटक में 68 प्रतिशत दूध गाय से प्राप्त होता है। किन्तु आंध्र प्रदेश के दूध का अधिकांश हिस्सा भैंसों से मिलता है। पूरे भारत की तस्वीर देखने से यह पता चलता है कि देश के कुल दूध उत्पादन का 52.6 प्रतिशत भैंसों से, 42.5 प्रतिशत गायों से व 4.9 प्रतिशत अन्य पशु प्रजातियों से प्राप्त होता है।

भारत में संकर गाय, स्वदेशी गाय एवं भैसों की दुग्ध उत्पादकता क्रमशः 6.87, 2.14 एवं 4.57 कि.ग्रा. प्रतिदिन है। तालिका–2 में दर्शाए गए आंकड़े इंगित करते हैं कि प्रतिदिन पशु उत्पादकता की दृष्टि से उत्तरी भारत अग्रणी है एवं पूर्वोत्तर भारत में प्रतिदिन पशु उत्पादकता सबसे कम है। पंजाब में सभी श्रेणी के दुधारू पशुओं की उत्पादकता सबसे अधिक है जहाँ एक संकर गाय प्रतिदिन 10.54 कि.ग्रा., एक देशी गाय 4.64 कि.ग्रा. एवं भैंस 8.51 कि.ग्रा. दूध देती है। इस दृष्टि से हरियाणा दूसरे स्थान पर है। पश्चिमी भारत के गुजरात एवं राजस्थान में भी प्रतिदिन पशु उत्पादकता अच्छी है। संकर पशुओं की उत्पादकता केरल, गुजरात, मेघालय एवं पंजाब में 8 कि.ग्रा. प्रतिदिन से भी अधिक है। पशु उत्पादकता में पशु पोषण एवं पशु प्रबंधन का विशेष महत्व है। देश के दूध उत्पादन में आवश्यकता अनुसार वृद्धि करने के लिए यह जरूरी है कि सभी राज्य स्वदेशी गाय, संकर गाय और भैंसों के

आनुवंशिक उत्थान हेतु पृथक–पृथक योजनायें बना कर उनका कार्यान्वयन सुनिश्चित करें। यहाँ यह भी आवश्यक है कि पशु उत्पादकता बढ़ाने के लिए उन्हें अच्छे पोषण, प्रबंधन, एवं स्वास्थय की जरूरत होगी। अतः इन योजनाओं के साथ–साथ चारागाह विकास, चारे दाने की उपलब्धता एवं बेहतर स्वास्थय प्रबंधन की दिशा में भी कार्य करना होगा।

सारांश :– भारत के दूध उत्पादन में विभिन्न प्रकार के गोवंशीय पशुओं का सार्थक योगदान है। बढ़ती जनसंख्या की दृष्टि से आने वाले वर्षों में यदि दूध उत्पादन बढ़ाना है तो हमें संकर, स्वदेशी गो नस्लों तथा अवर्णित पशुओं पर अलग–अलग ध्यान देना आवश्यक है। अवर्णित गोवंश में यह पता लगाना आवश्यक है कि इसमें कितनी अन्य नस्लों का समावेश है। इस संभावित नस्लों का अध्ययन कर इन्हें पंजीकृत करना होगा ताकि इनके विकास की योजनायें बनाकर लागू की जा सकें। चूंकि अवर्णित गोवंशीय पशुओं की संख्या काफी अधिक हैं, अतः इनकी उत्पादकता में थोड़ी वृद्धि कर देश का दूध उत्पादन अधिक बढ़ाया जा सकता है। गोवंश के उच्च गुणवत्ता वाले पशुओं, जिनमें संकर पशु एवं स्वदेशी दुधारू नस्लें शामिल है, का विकास उच्च लागत उत्पादन प्रणाली में कर दूध उत्पादन में आशातीत वृद्धि की जा सकती है।

तालिका–1 : भारत में स्वदेशी गौ वंश की विविधता

क्रमांक	ज़ोन / प्रदेश	कुल गोवंश (हजार में)	गोवंशीय नस्लें (कुल पशु संख्या)
पूर्वी ज़ोन			
1.	बिहार	12559	बचौर (2,13,697), गैलव (1,77,329), हरियाना (3,39,566), पुरनिया (1,39,488), रेड सिन्धी (20,778), साहीवाल (43,042), थारपारकर (25,789)
2.	ओडिशा	12310	बिन्झारपुरी (29,749), घुम्सुरी (82,117), हरियाना (73,791), मोट्टू (7,00,908), रेड सिन्धी (4,57,080)
3.	पश्चिम बंगाल	19188	कोई नस्ल नहीं पाई गयी।
4.	झारखण्ड	8781	बचौर (2,40,406), गंगातीरी (10,348), हरियाना (58,521), पुरनिया (8,500), रेड सिन्धी (56,149), साहीवाल (10,308), थारपारकर (10,262)
उत्तरी ज़ोन			
5.	हरियाणा	1552	हरियाना (6,27,671), साहीवाल (34,721), थारपारकर (5,896)
6.	हिमाचल प्रदेश	2269	हरियाना (33,307), रेड सिन्धी (4,696)
7.	पंजाब	1777	हरियाना (2,02,017), खेरीगढ़ (1,214), रेड सिन्धी (3,615), साहीवाल (42,111), कसरागोड़े ड्वार्फ (ब्लैक) (5)
8.	उत्तर प्रदेश	18883	गंगातीरी (3,64,806), हरियाना (5,75,070), केंकथा (1,17,070), खेरीगढ़ (1,70,200), मेवाती (1,02,046), पंवार (24,072), साहीवाल (2,41,114), थारपारकर (54,846)
9.	उत्तराखंड	2235	हरियाना (11,816), कुमांउनी (459), रेड सिन्धी (3,113),

			साहीवाल (2,958), तराई (705)
10.	जम्मू और कश्मीर	3443	लद्दाखी (24,213)
उत्तर पूर्वी ज़ोन			
11.	अरूणाचल प्रदेश	503	कोई नस्ल नहीं पाई गयी।
12.	असम	10041	कोई नस्ल नहीं पाई गयी।
13.	मणिपुर	342	कोई नस्ल नहीं पाई गयी।
14.	मेघालय	887	कोई नस्ल नहीं पाई गयी।
15.	मिजोरम	35	कोई नस्ल नहीं पाई गयी।
16.	नागालैंड	470	थो थो (2,07,220)
17.	सिक्किम	135	सीरी (61,687)
18.	त्रिपुरा	954	केंकथा (4)
पश्चिमी ज़ोन			
19.	गोवा	71	हल्लीकर (113), सीरी (63)
20.	गुजरात	7976	डांगी (2,08,862), गिर (13,99,677), कांकरेज (26,81,764)
21.	महाराष्ट्र	16184	डांगी (90,163), देओनी (73,098), गैलव (36,255), गिर (1,01,845), खिलारी (9,67,177), रेड कंधारी (1,76,621)
22.	राजस्थान	12120	गिर (5,06,096), हरियाना (5,74,464), कांकरेज (11,95,814), मालवी (7,89,375), नागोरी (8,37,334), राठी (9,24,057), थारपारकर (4,60,201)
मध्य ज़ोन			
23.	मध्य प्रदेश	21915	गैलो (8,982), गिर (71,909), हरियाना (27,118), केंकथा (62,913), मालवी (7,26,378), निमारी (3,09,237), तराई (1,901), साहीवाल (27,054)
24.	छत्तीसगढ़	9491	गिर (44,873), हरियाना (76,224) रेड सिन्धी (4,841) साहीवाल (55,768) थारपारकर (627) दक्षिणी ज़ोन
25.	आंध्र प्रदेश	11223	देओनी (23,928), गिर (657), हल्लीकर (1,90,798), ओंगोल (2,57,661), पून्गानूर (733)
26.	कर्नाटक	10503	अमृतमहल (96,021), देओनी (68,820), हल्लीकर (19,99,024), खिलारी (4,52,558), कृष्णा वेली (2,314), मलनाद गिड्डा (12,82,121)
27.	केरल	1740	वेचूर (160), कसरागोड़े ड्वार्फ (ब्लैक) (475)
28.	तमिलनाडू	11189	आलमबाड़ी (31,874), बरगुर (20,879), जेलीकट (34,191), कंगायम (3,14,817), मानापारी (1,02,046), अम्ब्लाचेरी (2,17,193)
	सम्पूर्ण भारत	199075	

rkfydk&2 %Hkkjr esa fofHkUu i'kq tkfr;ksa dh jkT;okj mRiknu ,oa mRikndrk ¼2010½

Øekad	tkfr@iz'k	dqy nqX/k mRiknu ¼gtkj Vu½	dqy nq/k esa ;ksxnku ¼izfr'kr½			nqX/k mRikndrk fd-xzk-@ fnu		
			xk;	HkSal	vU;	Lons'kh xks o'k	ladj	HkSal
iohZ tkfu								
1-	fcgkj	6124	50-6	45-8	3-6	2-91	6-19	3-92
2-	vksfM'kk	1651	86-3	13-5	0-2	1-17	5-94	2-90
3-	if'pe caxky	4300	91-9	5-0	3-1	1-83	5-98	4-59
4-	>kj[k.M	1463	52-4	42-4	5-2	1-57	5-38	5-44
dqy		13538	68-2	28-6	3-2	1-92	6-01	4-05
mRrjh tkfu								
5-	gfj;k.kk	6006	15-4	83-6	1-0	4-68	7-31	6-67
6-	fgekpy iz'k	836	61-4	35-9	2-7	1-52	4-39	3-33
7-	iatkc	9389	32-2	67-3	0-5	5-64	10-54	8-51
8-	mRrj iz'k	20203	25-5	68-8	5-7	2-54	7-04	4-39
9-	mRrjk[k.M	1377	44-2	55-8	0	1-87	6-73	4-10
dqy		37811	27	69-6	3-4	2-60	8-06	5-33
mRrj iohZ tkfu								
10-	v:.kkpy iz'k	26	100	&	&	1-21	6-17	&
11-	vle	756	84-1	13-0	2-9	0-95	3-31	2-05
12-	ef.kiqj	78	82-0	18-0	0	1-43	7-65	3-02
13-	es?kky;	78	97-4	2-6	0	0-75	8-96	1-85
14-	fetkje	11	90-9	9-1	0	1-57	7-22	1-57
15-	ukxkyS.M	78	93-6	5-1	1-3	1-87	5-37	3-35
16-	flfDde	46	100	0	0	1-99	6-24	4-25
17-	f=iqjk	100	96	2-0	2-0	1-14	4-62	2-09
dqy		1173	87-6	10-3	2-1	0-99	4-50	2-17

if'peh tksu								
18-	xksok	59	61-0	39-0	&	1-41	6-38	2-92
19-	xqtjkr	8844	37-6	59-8	2-6	3-68	8-45	4-51
20-	egkjk"Vª	7679	52-6	43-7	3-7	1-61	6-51	3-81
21-	jktLFkku	9548	28-3	61-2	10-5	3-68	7-91	5-66
dqy		26130	38-7	55-5	5-8	2-88	7-10	4-69
e/; tksu								
22-	e/; izns'k	7167	41-7	52-4	5-9	1-86	6-29	3-53
23-	NÙkhlx<+	956	61-9	33-4	4-7	0-96	3-93	4-20
dqy		8123	44-1	50-2	5-7	1-60	5-76	3-58
nf{k.k tksu								
24-	vk/kz izns'k	10429	27-1	72-9	&	1-83	7-19	3-94
25-	dukZVd	4822	67-7	31-2	1-1	2-24	5-95	2-55
26-	dsjy	2537	93-3	1-7	5-0	2-68	8-58	5-86
27-	rfey ukMq	5778	86-8	13-2	0	2-78	6-39	4-25
dqy		23566	57-2	42-1	0-7	2-20	6-80	3-66
lEiw.kZ Hkkjr		112540	42-5	52-6	4-9	6-87	2-14	4-57

tEew ,oa d'ehj lfgr vkadM+s miyC/k ugha gSA

हिमकृत सीमेन का रख रखाव एवं हैंडलिंग (जांच सूची)

सुधीर कुमार

हिमकृत सीमेन का उपयोग करके पशुओं में कृत्रिम गर्भाधान करना एक आधुनिक और वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा उसके नस्ल में सुधार किया जाता है। ताकि सन्तानों मे अधिक दूध देने वाले गुण प्राप्त हो सकें। कृत्रिम गर्भाधान की सफलता सबसे ज्यादा विशेष रूप में कृत्रिम गर्भाधान के समय हिमकृत सीमेन की गुणवता पर पूर्ण रूप से निर्भर करता है जिसे बनाये रखने के लिए उसका उचित रख रखाव एवं हैडलिंग चेक लिस्ट जरूरी है। सीमेन का रख रखाव करते समय कुछ महत्वपूर्ण सावधानियों को घ्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। जो निम्न लिखित शीर्षक के अन्तर्गत हैः–

1 एक क्रायो कंटेनर से दूसरे क्रायो कंटेनर में सीमेन स्ट्राज को ट्रांसफर करना।

2. क्रायो कंटेनर से सीमेन स्ट्राज का निकालना।

3. सीमेन स्ट्राज को पिघलाना

4 ए0आई0 गन को चार्ज करना

1 एक क्रायो कंटेनर से दूसरे क्रायों कंटेनर में सीमेन स्ट्राज को ट्रांसफर करना

(i) दोनो क्रायो कंटेनर को एक दूसरे के पास रखें।

(ii) इस बात को पहले ही पक्की कर लें कि किस कंटेनर से किस कंटेनर में सीमेन स्ट्राज को ट्रांसफर करना है।

(iii) गोबलेट में ही हमेशा स्ट्राज पैक करना चाहिए ताकि तापमान में परिवर्तन से बचाया जा सके। स्ट्राज को जिस कंटेनर से निकाला जाना है उसमें पहले तरल (लिक्यूईड) नाइट्रोजन भर लेनी चाहिए जिससे अगर तापमान में परिर्वतन आए तो उससे बचा जा सके।

(iv) उस कंटेनर को जिसमें स्ट्राज का ट्रांसफर किया जाना है उसमें भी उचित लेवल तक नाइट्रोजन भर लें। जब तक एक दम – 196 डिग्री सेंटीग्रेड पर पहुँच जायेगा तब स्ट्राज को कंटेनर में डालना है।

(v) धूप , हवा, एवं ज्यादा तापमान वाले कमरे पर स्ट्राज ट्रांसफर करने का काम नहीं करना चाहिए

(vi) स्ट्राज ट्रांसफर करते समय हमेशा दूसरे प्रशिक्षित व्यक्ति की मदद लें एवं गोबलेट को फारसेप से पकड़े। खाली गोबलेट को कंटेनर के भीतर न छोड़े।

(vii) जितना ज्लदी हो सके केनिस्टर को कंटेनर के भीतर रख देना चाहिए।

(2) क्रायो कंटेनर से सीमेन स्ट्राज को निकालना

(i) केनिस्टर को कंटेनर की गर्दन के अंदर ही रखें और लम्बी फौरसैप की मदद से ही सीमेन स्ट्राज बाहर निकालें।

(ii) गोबलेट को एकदम पूरा टाइट स्ट्राज से नही भरना चाहिए अन्यथा स्ट्राज को निकालने में समय की बर्बादी होगी।

(iii) अगर कंटेनर में तरल (लिक्यूईड) नाइट्रोजन कम हो तो स्ट्राज निकालने की प्रक्रिया के बीच में समय दिया जाना चाहिए।

(iv) यह जाँच ले कि आप सही के निस्तर लिफ्ट कर रहे हैं।

सहा. प्रोफेसर, शेर–ए–कश्मीर कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, जम्मू

(v) कंटेनर में कम से कम आधी क्षमता तक हमेशा नाइट्रोजन भरी रहनी चाहिए।

(3) सीमेन स्ट्राज को पिघलाना

(i) साफ एवं शुद्ध प्लास्टिक बाक्स या थरमस प्लास्क (300–400 एम0 ली0 क्षमता) का प्रयोग करें

(ii) थरमस फ्लास्क को कंटेनर के बिल्कुल नजदीक रखें।

(iii) स्ट्राज पिघलाने की प्रक्रिया एक पुनः क्रिया है अतः एक समय में केवल एक हकी स्ट्राज को पिद्यलायें जिससे स्पर्म को बर्बाद होने से बचाया जा सके।

(iv) स्वच्छ एवं साफ पानी का प्रयोग करें और थर्मामीटर से तापमान जाँच लें 46 डिग्री सेंटीग्रेड के ऊपर के तापमान से बीर्यखराव हो जाता है क्योंकि वीर्य प्रोटीन का बना होता है।

(v) अच्छी फरटीलिटी प्राप्त करने के लिए सीमेन स्ट्राज को 35 से 37 डिग्री सेंटीग्रेड गरम पानी में 30 सैकेंड से एक मिनट तक पिघलाना चाहिए।

(vi) स्ट्राज को पिघलाने के बाद स्ट्राज की सतह को काटन या मसलीन क्लाथ से सुखा लेना चाहिए।

(4) ए0 आई0 गन को चार्ज करना

(i) अपने कंटेनर की जाँच समय समय पर करते रहना चाहिए एवं आवश्यकता पड़ने पर लिक्विड नाईट्रोजन डालना चाहिए।

(ii) पहले आप जाँच लें कि आप सही बुल या बफैलो बुल का सीमेन स्ट्राज निकालने जा रहे हैं।

(iii) सही केनिस्टर को कंटेनर के निचले गर्दन तक ही उठायें ज्यादा उपर न उठायें।

(iv) एक समय में एक ही सीमेन स्ट्राज के निस्टर से लम्बी फोरसेप की सहायता से निकालें।

(v) स्ट्राज को पिघलाने की सही विधि अपनायें। स्ट्राज की अच्छी क्वालिटी बनाये रखने के लिए 35 से 37 डिग्री सेंटीग्रेड गरम स्वच्छ पानी प्रयोग में लायें। अच्छी क्वालीटी का थर्मामीटर का प्रयोग करना चाहिए।

(vi) स्ट्राज को केनिस्टर से निकालने के बाद हल्का झटका दें जिससे स्ट्राज की बाहरी सतह एवं फेक्युरी प्लग से नाईट्रोजन दुर हो जाए। स्ट्राज पिघलाने के बाद उसे अच्छी तरह काटन से साफ करके सुखा लें। स्ट्राज को एक किनारे से पकड़ना चाहिए ताकि तापमान में परिर्वतन न हो सके।

(vii) यह ध्यान रखना चाहिए कि पिघलाते समय स्ट्राज पानी मे पूरी तरह डुबा हो।

(viii) पिघलाये हुए सीमेन स्ट्राज को पुनः ठण्डा होने से बचायें अगर ज्यादा ठण्डा हो तो ए0 आई0 गन के अंदन कर दें।

(ix) जहाँ कृत्रिम गर्भाधान करना हो वहीं पर स्ट्राज को काटें जिससे की समय की बचत कि जा सके।

(x) स्ट्राज को लैब एण्ड की तरफ से ए0आई0 गन में डालें। आँखों के सामने रखकर हवा के बुलबुले की मध्य सीधा काटें। हमेशा साफ, सुथरी, सूखी और तेज धार वाली कैंची का प्रयोग करें।

(xi) पोलीथीन बैग से स्टीयराइल शीथ निकालकर ए0 आई गन के ऊपर लगाकर रींग लाक चढ़ा कर ठीक से फिक्स कर देते हैं। शीथ और रींग लाक मिलकर स्ट्राज को सही जगह पर रखता है और केवल पिघले सीमेन को बाहर जाने देता है।

(xii) अब ए0 आई0 गन कृत्रिम गर्भाधान के लिए तैयार है।

(xiii) जितनी जल्दी हो सके तरल (लिक्विड) नाइट्रोजन से सीमेन स्ट्राज निकालने के बाद प्रयोग में लाना चाहिए।

सीमेन का रख रखाव एवं हैंडलिस्ट कैसे करें ?

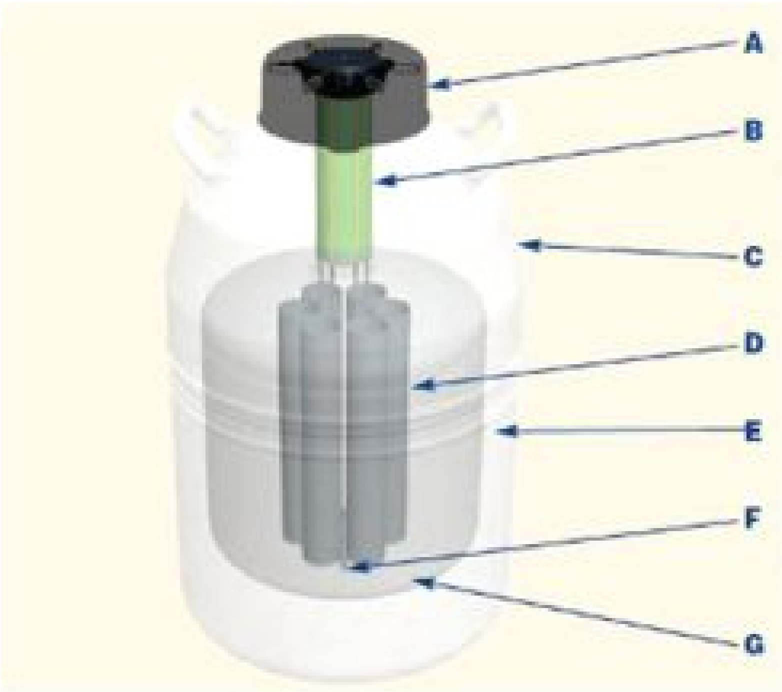

लिक्विड नाइट्रोजन कंटेनर की आंतरिक बनावटं

A – कवर लीड

B – नेक टुब

C – अलमुनियम वाल

D – कैनिस्टर

E – वैक्यूम चैम्बर

F – बॉटम स्पाइडर केनिस्टर रखने के लिये

G – लिक्विड नाइट्रोजन

गर्मियों में पशुओं पर शीतलन प्रणाली का प्रभाव

सोहनवीर सिंह[1], आर.सी.उपाध्याय[2] व बीनम बालियान[3]

पशु का शारीरिक तापमान, जब उनके सामान्य शारीरिक तापमान से अधिक हो जाता है, तब वे गर्मी अनुभव करते है। गर्मी में उत्पन्न तनाव के दौरान, पशुओं के लिये सामान्य दूध उत्पादन या प्रजनन क्षमता बनाये रखना मुश्किल होता है। गर्मी तनाव के समय पशु अपने शारीरिक समायोजन द्वारा शरीर का तापमान नियमित बनाये रखते हैं। गोपशु प्रायः 15–25^0 सेल्सियस के तापक्रम के बीच अपने आपको सामान्य महसूस करते है जो कि पशु शरीर वृद्धि व उत्पादन के लिए उपयुक्त तापक्रम है, जब इस तापक्रम में बदलाव होता है तो गोपशुओं की उत्पादकता भी प्रभावित होती है। यद्यपि पशुओं में तापक्रम को सहन करने की र्प्याप्त क्षमता होती है, परन्तु एक सीमा से अधिक तापक्रम पर पशु पसीने व श्वास क्रियायें बढ़ाकर भी अपना शरीर तापमान सामान्य नही रख पाते है। जिसके कारण पशु की चयापचय प्रक्रिया भी प्रभावित होती है, जो पशुओं की उत्पादकता पर सीधा प्रभाव डालती है।

गर्मी से तनाव के दौरान पशुओं की भूख में कमी हो सकती है तथा पशु में आन्तरिक उर्जा उत्पादन में कमी आ जाती है। और पशुओं के शरीर के तापमान का विनियमन आसान हो जाता है। इस तापक्रम नियमन के दौरान काफी ऊर्जा का ह्मास होता है; जिस की वजह से पशु उत्पादन में कमी आ जाती है।

शारीरिक तापक्रम नियमनः

पशुओं में कार्बोहाइड्रेट, वसा और प्रोटीन जो कि शरीर में एकत्रित होते है, ये शरीर में ईंधन का कार्य करते है, जिससे उर्जा उत्पन्न होती है, जिससे गायों का शारीरिक तापमान सामान्य से बढ़ जाता है। इस गर्मी को पशु अपने शरीर से पसीने के रूप में बाहर निकालते है, जिससे गोपशु का शारीरिक तापक्रम सामान्य बना रहता है। गोपशुओं के लिए सर्दियों के दिनों में शरीर का थर्मोस्टेट 100.9^0 सेंटीग्रेट से 101.5^0 सेंटीग्रेट के बीच में होता है। सर्दियों में गोपशु से उर्जा का उत्पादन ज्यादा होता है और पशु अपने शरीर से उर्जा का ह्रास कम कर देते है, जिससे शरीर का तापमान सामान्य बना रहता है।

गर्मी तनाव के दौरान, दुधारू गोपशुओं के लिए शारीरिक तापमान को सामान्य बनाये रखना काफी मुश्किल होता है, क्योंकि दुधारू पशु उर्जा का उत्पादन ज्यादा मात्रा में करते हैं, जो आसानी से वातावरण में नहीं निकाल पातें है गोपशुओं और पर्यावरण के बीच गर्मी का आदान–प्रदान दो प्रकार से होता हैः

1. सेन्सिबल गर्मी हानि तंत्र   2. गुप्त ऊष्मा

सेन्सिबल गर्मी हानि तंत्र जिसमे चालन, संवहन और विकिरण शामिल है उदाहरण के लिए माने लें कि एक गाय की त्वचा का तापमान 86^0 फारेनाइट (30 डिग्री सेल्सियस) था। जैसे कि शुष्क बल्ब का तापमान 80 डिग्री फारेनाइट से 84 डिग्री फारेनाइट तक बढ़ता है, गाय चालन और संवहन द्वारा अपने शरीर से ऊष्मा निकालना शुरू कर देती है। जब शुष्क बल्ब का तापमान 90 डिग्री फारेनाइट हो जाता है तब गोपशु एक निश्चित मात्रा में वातावरणीय गर्मी को अवशोषित करना प्रारम्भ कर देती है और गर्मी तनाव का अनुभव करती है। उदाहरण से पता चलता है कि जब वातावरणीय तापमान और गाय की त्वचा का तापमान घटता है तब गर्मी तंत्र तथा गुप्त उष्मा हानि Predominates होती है। गुप्त ऊष्मा हानि पानी के वाष्पीकरण से अभिव्यक्त की जाती है। गुप्त उष्मा हानि केवल शुष्क बल्ब तापमान पर निर्भर नही करती है, बल्कि यह आसपास की हवा की नमी पर भी निर्भर करती है। बहुत अधिक नमी में गोपशु पसीने और हाँफने पर भी उर्जा को निकालते है। गर्मी विनिमय के भौतिक का उपयोग करके गाय की गर्मी कम करने के लिए विभिन्न तरीकों का विकास किया गया है (तालिका–1)

1– प्रधान वैज्ञानिक, डी.सी.पी. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, डी.सी.पी. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3– शोध छात्रा, डी.सी.पी. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

तालिका–1 पशु ओर आसपास के वातावरण के बीच गर्मी विनिमय के साधनः

गर्मी के नुकसान का तरीका	गर्मी विनिमय की प्रकृति	पर्यावरणीय कारक जो गर्मी विनिमय की दर निर्धारित करते है।	गर्मी द्वारा होने वाले को विभिन्न सुविधाओं द्वारा बदलाव
चालन	गर्मी का एक गर्म पदार्थ से ठंडे पदार्थ की ओर बिना पदार्थ में चालकता आये स्थानातंरण / उदाहरण गर्मी गाये से हवा में।	शुष्क बल्ब तापमान, पदार्थ का स्वंपिदह के लिये सतह का तापमान गर्मी का आदान प्रदान सामग्री की चालकता	एयर कंडीशनिंग
सवंहन	गर्मी का एक गर्म पदार्थ से ठंडे पदार्थ की ओर स्थानातंरण जहां पर पदार्थ में चालकता होती है। उदाहरण–गाय से हवा में।	शुष्क बल्ब तापमान, हवा की गति, गर्मी का आदन–प्रदान सामग्री की चालकता	एयर कंडीशनिंग और पंखे
विकिरण	विद्युत चुम्बकीय विकिरण पशुओं की त्वचा की सतह पर अवशोषित होती है। उदाहरण–दीप्तिमान ऊर्जा का गाय और सूरज या गाय और फर्श, छत, पेड़ आदि जैसे वस्तुओं के बीच	त्वचा का तापमान, छाया, रात को आसमान में बादल	शेड
वाष्पीकरण	ऊष्मा की पानी से गैसीय पानी में बदलने की आवश्यकता। उदाहरण पसीना, त्वचा को गीला करना और श्वसन शामिल है।	हवा की आर्द्रता, हवा की गति, वर्षा	स्प्रे, मिस्ट और ठंडे तालाब

गर्मी तनाव को कैसे मापें:–

दुनिया के गर्म क्षेत्रों में अधिकांश डेयरी पशुओं में गर्मी तनाव को कम करने के लिये कुछ सुविधायें विकसित की गई है। गर्मी तनाव की भयावता को गोपशु अनुभव करती है। आवास में गोपशुओं को रखकर भी गर्मी तनाव को कम किया जा सकता है। यद्यपि शीतलन प्रणाली का मूल्यांकन करना मुश्किल नहीं है।

तापमान आर्द्रता सूचकांक (THI)

तापमान आर्द्रता सूचकांक एक गणितीय सूत्र है, जो शुष्क बल्ब तापमान और नमी पर आधारित है, जिससे गर्मी तनाव के परिणाम का अनुमान लगाया जाता है। सामान्यतः तापमान आर्द्रता सूचकांक की गणना निम्नलिखित फार्मूले से ज्ञात की जाती है।

$THI = 0.72 (Tdb + Twb) + 40.6$

यहां पर– Tdb = शुष्क बल्ब तापमान (डिग्री सेल्सियस में)

Twb = नम बल्ब तापमान (डिग्री सेल्सियस में)

पर्यावरण कक्ष मे दुधारू गायों पर अध्ययन के विश्लेषण से यह अनुमान लगाया गया कि जब तापमान आर्द्रता सूचकांक 65 या उससे अधिक होता है, तब गायें गर्मी का अनुभव करती है, उनमें भूख में कमी हो जाती है तथा जिसके कारण दूध उत्पादन में गिरावट पायी गई। जब तापमान आर्द्रता सूचकांक 80 तक पहुंच जाये तब गायों पर शीतलन प्रणाली का प्रयोग शुरू कर देना चाहिए।

शरीर का तापमानः

गर्मी तनाव की भयावहता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है, तापमान की आर्द्रता पर छाया, हवा का सुचारू रूप से आदान–प्रदान वेंटिलेशन और शीतलन प्रणाली का ज्यादा प्रभाव नही पड़ता है। गर्मी तनाव के दौरान तापमान आर्द्रता सूचकांक की तुलना में गुदा तापमान 102.2 डिग्री फारेनाइट है तो गायों में कम दुग्ध उत्पादन और प्रजनन क्षमता में गिरावट के खतरे बढ़ जाते है। गायों के शरीर का तापमान मापना बहुत ही आसान होता है। व्यावसायिक रूप से गुदा तापमान थर्मामीटर उपलब्ध हैं जिसके माध्यम से गायों का शरीर का तापमान दोपहर में 3.00 बजे से 5.00 बजे के बीच के समय मापना लगाना चाहिए, क्योंकि इस समय गायों का शारीरिक तापमान सबसे अधिक होता है। थर्मामीटर को मलाशय में पूरे एक मिनट के लिये और तापमान स्थिर होने तक इन्तजार करना चाहिए। इसी समय पर श्वसन दर को भी मापा जाना चाहिए। जैसे 30 सैकंड के लिये श्वास गति (Flank Movements) को गिनकर उसे 2 से गुणा कर देते है, यदि श्वसन दर 1 मिनट में 60 से ज्यादा है तो इससे पता चलता है कि गाय गर्मी तनाव में है।

शीतलन रणनीति :

गर्मियों में गर्भित गायों के लिए कुछ खास तैयारी करनी पड़ती है।

1. वातावरणीय अधिक तापक्रम अण्डाशय में विकसित होने वाले अण्डाणुओं के विकास को विपरीत रूप से प्रभावित करता है।
2. अण्डाशय से अण्डाणु के निकलने के बाद वातावरण का अधिक तापक्रम अण्डाणुओं की अण्डाजनन व सामान्य आकृति को नुकसान पहुँचाता है।
3. शुरू के दिनों में भ्रूण पर भी गर्मी तनाव का विपरीत प्रभाव पड़ता है, जो कि लगभग पशु की गर्भधारण के 3 दिन पश्चात तक रहता है जिसके बाद भ्रूण पर मातृ अतिताप का अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है।

"ओवम सिंक्रोनाइजेशन" एवं "कृत्रिम गर्भाधान" बांझ पशु से भी जनन, दुग्धोत्पादन की सौगात

ओ.पी. सिह[1] व आलोक कुमार सिंह[2]

प्राचीन काल से भारत एक कृषि प्रधान देश है व वर्तमान समय में भी कृषि यहाँ के लगभग 68 प्रतिशत जनमानस का पेशा (परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप में) कृषि ही है। जहाँ पशुओं को भारतीय कृषि की बैक बोन अर्थात मेरू दण्ड/रीढ़ की हड्डी कहा जाता है। वर्तमान समय में कृषि का लगभग 14 प्रतिशत हिस्सेदारी में विभिन्न कृषि के स्त्रोतों में से अकेले पशुपालन क्षेत्र का योगदान 30 प्रतिशत से अधिक है। फलस्वरूप पशुपालन क्षेत्र को 'बैक बोन' की संज्ञा सत्य प्रतीत होती है।

परन्तु आज प्राकृतिक कारणों, बीमारियों, कुपोषण, पशुपालन के कुप्रबन्धन के कारण पशुओं में बांझपन की एक प्रमुख समस्या उभर कर पशुपालकों के सम्मुख आ रही है। फलस्वरूप जो पशुपालक पशुओं के मादा बच्चों को व्यवसायिक पशुपालन की दृष्टि से पालता था परन्तु किन्ही समस्याओं के कारण उनका पशु गर्भित नहीं हो पा रहा है, अथवा बांझ है। उस पशुपालक के वर्षों पशुपालन में लगी पूंजी, श्रम एवं समय सब बर्बाद हो जाता है। अब वह (बांझ पशु) पशुपालक के ऊपर बोझ प्रतीत होने लगता था। पशुपालक बांझ पशु के अनुपयोगी गैर लाभ खर्चों से बचने हेतु पशु को औने–पौने दामों पर पशु वध के लिए क्रय करने वालो के हाथों बिक्री कर देता था फलस्वरूप पशुपालन भी एक जुआ प्रतीत होने लगा था। परन्तु विज्ञान के निरंतर शोध, प्रयोगों, समस्याओं के निवारण के प्रयोगों प्रयासों के फलस्वरूप आज वर्तमान मे पशुपालन क्षेत्र की उभरती प्रमुख समस्या पशुओं में बांझपन के समाधान में "ओवम सिक्रोनाइजेशन" व कृत्रिम गर्भाधान के कारण एक रोमांचकारी परिदृश्य परिवर्तन पशुपालन क्षेत्र में दृष्टिगोचर हो रहा है।

क्या है ओवम सिकोनाइजेशन तकनीक : – इस तकनीक के द्वारा बांझ पशुओं से भी दुग्ध प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की गयी है। उक्त तकनीक में "रिसेप्टाल" व "ल्यूटेलाइज" हारमोन अपना विशेष भूमिका निभाते है। जब पशु गर्मी में नहीं आता बांझ प्रतीत होता है तब पशु को सर्वप्रथम रिसेप्टाल हारमोन का प्रथम खुराक सुई के माध्यम से पशु के शरीर में दिया जाता है। तदोपश्चात 8वें दिन ल्यूटेलाइज हारमोन व पुनः 10वें दिन रिसेप्टाल हारमोन दिया जाता है। जिससे पशु 11वें दिन गर्मी में आ जाता है। जिससे अब बांझ पशु से भी दुग्ध प्राप्त किया जा सकता है। अभी उपरोक्त दोनों हारमोन द्वारा दुग्ध प्राप्ति के सपने को बांझ पशु से भी साकार करने हेतु पशुपालकों को 1100–1200 रूपये खर्च करने पड़ेंगे परन्तु भविष्य में वैज्ञानिकों की मदद से उपरोक्त लागत मे कमी आने की संभावना बनी हुई है। जिससे देश का प्रत्येक पशुपालक लाभांन्वित हो सके व देश में उपलब्ध पशुधन जो मनुष्यों के आय में अपनी अहम भूमिका निभाते है वो बांझ सिद्ध न हों साथ ही स्वस्थ पशु, दुग्धोत्पादन हेतु वैज्ञानिक दृष्टिकोण, तकनीकों के माध्यम से उपयुक्त होने के बाद भी पशु वध के लिए कौड़ियों के दाम बिक्री न की जा सके।

कृत्रिम गर्भाधान :– कृत्रिम गर्भाधान का प्रयोग सैकड़ों वर्षों से होता आ रहा है परन्तु पश्चिमी देशों के सापेक्ष्य अब भी हमारा देश कृत्रिम गर्भाधान के व्यापक आयोग से सुदूर खड़ा है विशेषतः भारत के वे ग्रामीण जन जो कृत्रिम गर्भाधान के लाभों से अनभिज्ञ है कृत्रिम गर्भाधान प्रजनन की वह विधा है जिसमे उत्तम सांड/चयनित नर का वीर्य एकत्र कर उसके परीक्षण एवं तनुकरण के तदोपरान्त वीर्य से प्रजनन योग्य शुक्राणुओं की उपयुक्त संख्या के अनुसार खुराक (डोज) बनाकर मदकालीन मादा पशु के

1– प्रोफेसर, विस्तार शिक्षा विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस
2– शोध छात्र, विस्तार शिक्षा विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

जननांग में उचित समय व स्थान का ध्यान रखते हुए उपकरणों के माध्यम से वीर्य अंतरित करने की कला को कृत्रिम गर्भाधान कहा जाता है। उपरोक्त विधि का प्रयोग जब पशुपालक का मादा पशु गर्भित होने मे समस्याग्रस्त हो, अपाहिज हो, नस्ल सुधार, उच्च कोटि का आयातित वीर्य द्वारा आगामी उन्नत संतति की चाह, संतति लिंग निर्धारण इत्यादि अनेको कार्यों में प्रयुक्त होता है।

विश्व में कृत्रिम गर्भाधान का इतिहास वैज्ञानिक रूप से कृत्रिम गर्भाधान को सर्व प्रथम सन् 1917 में इटली के ''स्पैलेन्जनी'' नामक व्यक्ति ने कुत्तों में अपनाया था। उन्होंने अपने उस प्रयोग मे सफलता भी प्राप्त की थी रूस में इस कार्य का शुभारम्भ 1907 में ही आरम्भ किया गया, परन्तु जनमानस में विश्वास उत्पन्न न कर पाने के कारण व्यापक प्रसार रूप धारण न कर सका। सन् 1938 के अंत तक कृत्रिम गर्भाधान के विभिन्न प्रयोगों, प्रमाणों की पुष्टि, प्रदर्शन के फलस्वरूप जनमानस का विश्वास प्राप्त हुआ व रूस में इस विधि द्वारा 1.25 लाख घोड़ी, 12 लाख गायें, एवं भारी संख्या में भेडों को गर्भित कराया गया था डेनमार्क में कृत्रिम गर्भाधान का पहला केन्द्र सन् 1936 में खोला गया। अमेरिका में भी इस विधि पर कार्य तो सन् 1911 में ही प्रारम्भ किया था परन्तु पहली संस्था सन् 1938 में स्थापित हो सकी। सन 1946 तक अमेरिका मे कृत्रिम गर्भाधान एक विस्तृत रूप धारण कर चुका था। आज कृत्रिम गर्भाधान का प्रयोग विश्व के अनेकों देश जिसमें प्रमुख रूप से डेनमार्क, स्विटजरलैंड, जर्मनी, स्वीडन, इटली, कनाडा, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, इंग्लैण्ड, रूस और चीन जैसे अनेकों देशों में विस्तृत रूप मे अपनाया जा रहा है।

भारत के संदर्भ मे कृत्रिम गर्भाधान :– भारत में सर्व प्रथम कृत्रिम गर्भाधान का कार्य डा. संपत कुमार ने किया था। इन्होने भी कृत्रिम गर्भाधान में कुतिया का प्रयोग किया था। भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली (आई.वी. आर.आई) द्वारा सन् 1942 में पहला कृत्रिम गर्भाधान संपादित किया था। कृत्रिम गर्भाधान में सफलता मिलने के बाद उत्तर प्रदेश के विभिन्न स्थानों मथुरा, लखनऊ, मेरठ, गाजीपुर, देवरिया इटावा आदि स्थानों पर कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र खोले गये थे कृत्रिम गर्भाधान की सफलता व प्रसिद्धि के फलतः सन् 1972 मे मेरठ मे 19 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र, 130 गर्भाधान उपकेन्द्र तथा 3 कृत्रिम विधि द्वारा वीर्य संग्रहण केन्द्र स्थापित हो चुके थे।

परन्तु आज भी विश्व के अन्य देशों के सापेक्ष्य भारत में कृत्रिम गर्भाधान का उज्ज्वल भविष्य होने के बाद भी प्रचार प्रसार जागरूकता की कमी के कारण पशुपालक कृत्रिम गर्भाधान पशुपालन में लाभ लेने से वंचित हैं। जबकि उपरोक्त दोनों ''ओवम सिकोनाइजेशन'' तथा कृत्रिम गर्भाधान तकनीक द्वारा बांझ, गर्भित होने में समस्याग्रस्त मादा पशुओ को भी गर्भित कर पशुपालन को एक उच्च आय का व्यवसाय, वांछित गुणों युक्त संतति प्राप्ति इत्यादि जैसे अनेकों लाभ पशुपालक को प्रदान कर सकता है। जिससे अब देश का कोई भी किसान, पशुपालक को बांझ पशु के दंश के कारण पशुपालन मे घाटा, कौड़ियों के मोल स्वस्थ्य पशु की कटाई हेतु बिक्री की स्थिति से बचाया जा सकता है।

गर्म मौसम में डेयरी पशु प्रबन्धन

अश्विनी कुमार रॉय तथा महेंद्र सिंह

भारतवर्ष में दूध की बढती हुई मांग को देखते हुए इसके अधिक उत्पादन हेतु नवीनतम तकनीकियों का विकास करना आवश्यक है। डेयरी गायों में दूध की गुणवत्ता एवं इसका उत्पादन अधिक ताप से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। प्राइवेट डेयरियों में आजकल संकर नस्ल की गाय अधिक दुग्ध–उत्पादन हेतु लोकप्रिय हो रही है। इन गायों को स्वदेशी नसलों की तुलना में ताप के कारण होने वाले तनाव की संभावना भी अधिक होती है। गर्म मौसम कई विभिन्न कारकों जैसे वायु का अधिक तापमान, वायु की गति, नमी एवं ऊष्मा विचलन दर पर निर्भर करता है। डेयरी पशुओं की उचित देखभाल हेतु वृक्षों की छाया, विद्युत पंखों, कूलरों तथा रात के समय चरागाह भेजने जैसी अनेक विधियाँ अपनाई जाती हैं। उष्मीय तनाव से पशु कम मात्रा में शुष्क पदार्थ ग्रहण करते हैं जबकि उन्हें अधिक ऊर्जा एवं प्रोटीन की आवश्यकता होती है। अतः ऐसी परिस्थितियों में पशुओं को अधिक ऊर्जा एवं प्रोटीन–युक्त आहार उपलब्ध कराए जाने की नितांत आवश्यकता है ताकि इनकी उच्च–उत्पादन क्षमता पर गर्मी का कोई प्रभाव न पड़े।

गर्म मौसम प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों प्रकार से पशुओं की उत्पादन क्षमता को प्रभावित करता है, अधिकतम आनुवंशिक क्षमता हेतु पर्यावरणीय परिस्थितियों के साथ–साथ पशुओं की खुराक में भी परिवर्तन लाना अतिआवश्यक है। दूध देने वाली संकर नस्ल की गायों के लिए लगभग 25 डिग्री सेल्सियस का तापमान आरामदेह होता है परन्तु इससे अधिक गर्मी होने पर इनकी दूग्ध–उत्पादन क्षमता काफी कम हो जाती है। गर्म मौसम में शारीरिक तापमान बढ़ जाता है जिससे दुग्ध–उत्पादन क्षमता, उर्वरता तथा शारीरिक वृद्धि दर में कमी आ जाती है। शरीर का तापमान, ऊष्मा लाभ एवं हानि पर निर्भर करता है। उच्च तापमान एवं नमी–युक्त वातावरण में ऊष्मा हानि कम हो जाती है जो दुग्ध–उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। अधिक ऊर्जा–युक्त आहार लेने से शरीर से उत्पन्न होने वाली ऊष्मा तथा दुग्ध उत्पादन दोनो ही बढ़ जाते है। अतः अधिक दूध देने वाली गायों में ऊष्मा उत्पादन बढ़ने से गर्म मौसम का विपरीत प्रभाव भी अधिक होता है। गर्म मौसम में पशुओं का तापमान नियंत्रित रखने के लिए आम–तौर पर निम्नलिखित विधियाँ अपनाई जाती है।

1 पशुओं के शेड का तापमान कम रखने के लिए इनकी संरचना में सुधार किया जाता है।

2 पशुओं पर फव्वारे द्वारा पानी डाल कर पंखे चलाए जाते हैं ताकि उनके शरीर को ठंडा रखा जा सके।

3 भोज्य ऊर्जा उपयोगिता की क्षमता बढ़ा कर खाने के समय उत्पन्न होने वाली ऊष्मा में कमी लाई जा सकती है।

गर्म मौसम में विभिन्न कारकों से पशुओं की उत्पादन क्षमता प्रभावित होती है।

वायु–ताप एवं नमी : वायु नमी के कारण त्वचा तथा श्वास नली से वाष्पोत्सर्जन द्वारा होने वाली ऊष्मा–हानि पर प्रभाव पड़ता है। अतः अधिक तापमान पर नमी, दुधारू पशुओं की उत्पादन क्षमता को काफी हद तक कम कर देती है। गर्मी एवं नमी में पशु अधिक समय तक खड़े रहते हैं, ताकि वाष्पोत्सर्जन द्वारा अपने शरीर से अधिकाधिक ऊष्मा वायु में छोड़ सकें ।

ऊष्मा विकिरण : सूर्य एवं पशुओं के आसपास मिलने वाले ऊष्मा विकिरणों के कारण ऊष्मा हानि प्रभावित होती है। गर्मियों के

1. वरिष्ठ वैज्ञानिक, पशु शरीर क्रिया विज्ञान प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2. प्रधान वैज्ञानिक, पशु शरीर क्रिया विज्ञान प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

मौसम में पशुओं के शेड के अत्यधिक ऊष्मा विकिरण निकलते हैं जिससे इनके दुग्ध उत्पादन में कमी आ जाती है। धूप में पशुओं की त्वचा ऊष्मा सोख लेती है। जिससे इनका शारीरिक तापमान बढ़ जाता है। गर्मी से मुक्ति पाने के लिए पशु तीव्रता से सांस लेते हैं। पशु कम मात्रा में शुष्क पदार्थ ग्रहण करते हैं तथा इनके ऊष्मा उत्पादन में भी कमी आ जाती है। इस प्रकार गर्मी झेलने वाले पशुओं में दुग्ध उत्पादन लगभग बीस प्रतिशत तक कम हो सकता है।

हवाओं का चलना : हवाओं के कारण पशुओं के शरीर से होने वाली ऊष्मा हानि संवहन तथा वाष्पोत्सर्जन द्वारा होती है। कम तापमान पर हवाओं के चलने से दुग्ध उत्पादकता प्रभावित नहीं होती परन्तु अधिक तापमान पर हवा चलने से पशुओं को लाभ होता है। गर्मियों के मौसम में पशुओं द्वारा उत्पन्न की गई ऊष्मा ताप–तनाव का मुख्य कारण होती है। जब ताप नमी सूचकांक 72 (21 डिग्री से. तापमान पर सामान्य नमी) से अधिक होता है तो दुग्ध उत्पादन घटना शुरू हो जाता है। ताप नमी सूचकांक की प्रत्येक इकाई के बढ़ने पर दूध की मात्रा लगभग 250 ग्राम प्रतिदिन तक कम हो जाती है।

गर्म मौसम में पशुओं की उत्पादक क्षमता पर प्रभाव : अधिक दूध देने वाली संकर गायों में अपेक्षाकृत कम तापमान पर ही श्वास दर बढ़ने लगती है जबकि कम दूध देने वाले पशुओं में अधिक तापमान सहने की क्षमता पाई जाती है क्योंकि अधिक दुग्ध–उत्पादन करने वाली गायों में चयापचय दर एवं ऊष्मा उत्पादन भी अधिक होती है। इसी प्रकार शुष्क पदार्थों की कम खपत भी दुग्ध–उत्पादन में कमी लाती है।

यदि सावधानीपूर्वक डेयरी पशुपालन प्रबन्धन किया जाए तो अधिक दूध देने वाले पशुओं को उच्चतम दुग्ध–उत्पादन स्तर पर भी गर्मी के कारण होने वाले तनाव से निजात दिलाई जा सकती है। विशेष प्रकार के फव्वारे तथा पंखे चलाकर पशुओं को गर्मी से बचाया जा सकता हैं।

धूप से सीधे बचाव के लिए साधारण शेड का प्रयोग किया जा सकता है। शेड के आसपास पेड़–पौधे लगा कर इसे और भी अधिक ठंडा एवं प्रभावशाली बनाया जा सकता है। शेड के कारण डेयरी पशुओं का शारीरिक तापमान एवं श्वसन दर सामान्य बनी रहती है। इसी तरह कम तापमान पर तेजी से चलने वाली हवा के कारण पशुओं के शरीर से ऊष्मा अधिक तीव्रता से निकलती है। इससे न केवल सामान्य ताप एवं श्वसन दर बनी रहती है अपितु पशुओं के भार में वृद्धि के साथ–साथ उच्च गुणवत्ता–युक्त अधिक दूध प्राप्त होता है। परन्तु अधिक तापमान युक्त हवा से पशुओं की त्वचा का तापमान अधिक हो जाता है तथा ताप–तनाव के कारण इनकी उत्पादकता में भी कमी आ जाती है। यदि पशुओं के सर एवं गर्दन को ठंडा रखा जाए तो ये अधिक चारा ग्रहण करते हैं जिससे दुग्ध–उत्पादन बढ़ जाता है। यदि पशुओं को रात के समय चरने दिया जाए तो इन्हें सूर्य की गर्मी से बचाया जा सकता है।

गर्म मौसम में पशु–पोषण आवश्यकताएँ : गर्म मौसम में पशुओं के रख रखाव एवं उत्पादन हेतु ऊर्जा की मांग तो अधिक होती है जबकि सकल ऊर्जा की कार्यक्षमता कम हो जाती है। तापमान अधिक होने पर भी चारे की खपत कम हो जाती है। अतः गर्म मौसम में पशुओं की ऊर्जा आवश्यकता पूर्ण करने हेतु इनको अधिक ऊर्जायुक्त आहार खिलाने की आवश्यकता पड़ती है। गर्मियों में गायों से अधिक दूध प्राप्त करने के लिए उन्हें अधिक वसा–युक्त आहार खिलाए जा सकते है। ऐसे आहार खिलाने से इनके शारीरिक तापमान में कोई वृद्धि नहीं होती तथा श्वसन दर भी सामान्य बनी रहती है। अधिक मात्रा में प्रोटीन–युक्त आहार लेने से ऊष्मा का उत्पादन भी बढ़ जाता है जिसका प्रजनन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। गर्म मौसम में दूधारू गायों को अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है। पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन न मिलने से इनकी शुष्क पदार्थ ग्रहण करने की क्षमता कम हो जाती है। गायों को को बाई पास प्रोटीन देने से इसकी उपलब्धता अधिक होती है जिससे दूध में वसा की मात्रा एवं दुग्ध–उत्पादन में वृद्धि होती है। पशुओं को ताप–जनित तनाव से मुक्ति दिलाने के लिए बहुत से अनुसंधान किए जा रहे है परन्तु अभी भी दुग्ध उत्पादकता को

प्रभावित किए बिना इस समस्या का पूर्ण निदान नहीं हो पाया है। जलवायु तन्यक कृषि आधारित अनुसन्धान इस दिशा में एक सार्थक पहल हो सकती है। यदि मौसम के दुष्प्रभावों से बचने के साथ साथ पशुओं की खुराक एवं रख रखाव प्रबन्धन पर ध्यान दिया जाए तो इस में आशातीत सफलता भी मिल सकती है।

भैसों में सफल कृत्रिम वीर्यरोपण के लिए महत्वपूर्ण सुझाव

विवेक कुमार सिंह[1], राज कुमार[1], संजय शर्मा[1] तथा सुरेश कुमार अत्रेजा[2]

पशुधन की उत्पादकता को बढाने में सहायता प्रजनन एक महत्वपूर्ण साधन है तथा कृत्रिम वीर्यरोपण सहायता प्रजनन का एक अभिन्न अंग है, लेकिन कृत्रिम गर्भाधान की सफलता अनेक कारकों पर निर्भर करती है जैसे कि उचित नर व मादा एवं वीर्य रोपण के लिए निपुण व्यक्ति का चुनाव, वीर्यरोपण के लिए सही समय का चुनाव, वीर्य की उर्वरता की जाँच व गर्भवती मादा का उचित रखरखाव। इन कारणों की अपर्याप्त जानकारी से गर्भाधान दरों में कमी आ सकती है। असफल गर्भाधान से कृषकों को भारी आर्थिक क्षति पहुँचती है। अतः निम्नलिखित जानकारी सहायता प्रजनन की सफलता व कृषकों की आमदनी को बढ़ा सकती है।

जानवरों में वीर्यरोपण सिर्फ मद्काल के दौरान ही करना चाहिए। यही नहीं यह भी सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि वीर्यरोपण में प्रयुक्त होने वाले वीर्य के गुणवत्ता की जाँच प्रयोगशाला में की गयी हो। सरल मानकों द्वारा वीर्य के गुणवत्ता की जांच की जा सकती है। मद्काल के दौरान मादा विशेष लक्षण दर्शाती है जिससे उसके मद्काल में होने का पता चलता है।

भैसों में मद्काल के दौरान प्रकट होने वाले लक्षण

1. मादा को भूख ना लगना
2. पशु का रांभना
3. मादा का विचलित व अधीर होना
4. मादा का रूक रूक कर मूत्र विसर्जन करना
5. मादा की योनि में सूजन व गाढ़े सफेद रंग का स्राव
6. मादा का पूंछ ऐंठना
7. मादा का दूसरे पशुओं के साथ आलंबन।

मादा के मद्काल मे होने का पता टीजर बैल से भी लगाया जा सकता है। टीजर बैल को मादा के पास ले जाने पर वह विशेष लक्षण दर्शाता है। टीजर बैल तथा मादा के व्यवहार के आधार पर मादा के मद्काल में होने का पता चल जाता है।

टीजर बैल से मद्काल दर्शाती मादा की पहचान

1. बैल का मादा के पुट्ठे पर ठुड्डी रखना
2. बैल का फ्लेह्मन प्रतिक्रिया दर्शाना
3. बैल का मादा के साथ आलंबन

एक बार मादा की मदकाल में सही पहचान हो जाए तो दूसरा महत्वपूर्ण कार्य वीर्यरोपण में निपुण व्यक्ति का चुनाव है। पर जो बात सबसे ज्यादा ध्यान देने योग्य है वह यह कि वीर्यरोपण के लिए अच्छे वीर्य का प्रयोग हो। प्रयोगशाला में हिमीकृत वीर्य का गुणनिर्धारण गुनगुने पानी (37 डिग्री सेल्सियस) में 45 से 60 सैकेंड तक पिघला कर सरल मानकों द्वारा किया जा सकता है। शुक्राणुओं की प्रगामी गतिशीलता, जिव्यता तथा प्लाविका झिल्ली की अखंडता उसकी उर्वरता से सहसंबंधित है।

कृत्रिम वीर्यरोपण में उपयुक्त होने वाले वीर्य की उर्वरता की जाँच।

1. वीर्य में शुक्राणुओं की गतिशीलता लगभग 40 प्रतिशत या उससे अधिक होनी चाहिए।

1– सभी शोध छात्र, ए.बी.सी प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक, ए.बी.सी प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

2. शुक्राणुओं की गतिशीलता प्रगामी होनी चाहिए।
3. शुक्राणुओं की प्लाविका झिल्ली अखंडित होनी चाहिए।
4. शुक्राणुओं में वीर्यरोपण के समय धारिता की दर कम होनी चाहिए।
5. शुक्राणुओं में धारिता को प्राप्त करने की क्षमता की जाँच (भैसों के ताजा स्खलित वीर्य मे 6 धंटे तथा हिमीकृत वीर्य में 4 घंटे)।

मादा जननांगों की जानकारी व वीर्यरोपण की सही जगह भी गर्भाधान दर को सुनिश्चित करती है वीर्यरोपण मादा के गर्भाशय में ही होनी चाहिए।

हिमीकरण—हिमद्रवण प्रक्रिया शुक्राणओं में ऊनघातक क्षति पहुँचाती है। अंडपित्त युक्त वीर्य विस्तारक मे ये क्षति ज्यादा होती है तथा जीवाणुओं और विषाणुओं से होने वाली बीमारीयों का खतरा भी होता है जबकि सोयाबीन दूध युक्त वीर्य विस्तारक में यह क्षति तुलनात्मक कम होती है। सोयाबीन दूध, सोयाबीन से बनाया जाता है और पौधे से निर्मित होने के कारण ये जीवाणुओं और विषाणुओं से होने वाली बीमारियों के खतरे को भी टालता है।

ग्राफीन

ग्राफीन से जुड़े विभिन्न शोधों का पेटेंट कराने को लेकर दुनिया भर में इन दिनों होड़ मची हुई है। पेटेंट की इस होड़ में चीन पहले नंबर पर तो अमेरिका दूसरे और दक्षिण कोरिया तीसरे नंम्बर पर, जबकि ब्रिटेन चौथे स्थान पर है।ग्राफीन शुद्ध कार्बन के अणुओं से बना एक एक पृष्ठीय पदार्थ है, जिसकी संरचना मधुमक्खी के छत्ते की तरह द्विआयामी होती है। इसके अणु ग्रेफाइट के अणुओं की तरह षट्कोणीय ढ़ग से व्यवस्थित होते हैं। यह बहुत हल्का होता है इसकी एक वर्गमीटर की चादर का वजन मात्र 0.77 मिलीग्राम होता है। यह ग्रेफाइट के पदार्थों का बुनियादी घटक होता है। इसे ग्रेफाइट से अलग किया जा सकता है हालांकि इसका पता एक्स –रे क्रिस्टलोग्राफी के अविष्कार के बाद लग गया था, लेकिन 2004 में मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में आंद्रेई जेइम एवं कोंस्तांतिन नोवोसोलेव नामक दो वैज्ञानिकों ने संयुक्त रूप से ग्रेफाइट से अलग किया और इसकी अनूठी विशेषताओं से लोगों का परिचय कराया, इसके लिए उन्हें संयुक्त रूप से 2010 में नोबल पुरस्कार और फिर ब्रिटेन का नाइटहुड सम्मान भी दिया गया। अपनी अद्भुत विशेषताओं के कारण इससे संबधित तकनीकों को विकसित करने की विभिन्न देशों में होड़ लगी है। यह हीरे से भी मजबूत, तांबे से भी ज्यादा सुचालक एवं रबर की तरह लचीला है। वैज्ञानिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि व्यावसायिक दृष्टि से भी आने वाले दिनों में इसकी उपयोगिता बढ़ने वाली है। इसका उपयोग सूचना तकनीक से लेकर ऊर्जा क्षेत्र एवं दवाओं में भी किया जा सकता है। फ्लेक्सिबल टचस्क्रीन एवं उन्नत बैटरी संभवतः इसके पहले अनुप्रयोग होंगे

घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन से अधिक लाभ

प्रमोद मडके[1], के.वी.सिंह[2], शशिकांत[1] व रमेश चन्द्रा[2]

भारत जैसे विकासशील देश में जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। यहां के निवासियों का जीवन स्तर शहरों में रहने वालों की तुलना में अपेक्षाकृत समृद्ध नहीं है। विगत वर्षो में भारत सरकार ने कुक्कुट पालन को ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुधारने का एक उत्तम साधन मानते हुए इसके विकास हेतु अनेक प्रयास किये है। आज मुर्गीपालन एक दृढ़ उद्योग का रूप ले चुका है। वैज्ञानिकों द्वारा किये जा रहे अनुसंधानों से विकसित नवीनतम प्रौद्योगिकी को अपनाने से मुर्गीपालन के क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई है। व्यवसायिक प्रजातियों के विकास से प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति अण्डों एवं मॉस की उपलब्धता 1961 में 7 अण्डे व 188 ग्राम से बढ़कर वर्तमान में लगभग 45 अण्डे व 1000 ग्राम अनुमानित है। यद्यपि इसमें वास्तविक वृद्धि हुई है पर ग्रामीण लोगों को इसकी उपलब्धता कम व अत्यन्त उच्च कीमतों पर होती है। भारत में कुपोषण एवं गरीबी की समस्या को दूर करने के लिए पारम्परिक मुर्गी पालन अथवा घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन की यह पद्धति प्राचीन काल से प्रचलित है। इसमें प्रायः 5–20 मुर्गियों का छोटा सा समूह एक परिवार के द्वारा पाला जाता है, जो घर एवं उसके आस–पास में अनाज के गिरे दाने, झाड़–फूसों के बीच कीड़े–मकोड़े, घास की कोमल पत्तियॉ तथा घर या होटल/ढाबे की जूठन आदि खाकर अपना पेट भरती है। केवल प्रतिकूल परिस्थितियों में निम्न कोटि का थोड़ा सा अनाज खिलाने की आवश्यकता होती है। इसके रात्रि विश्राम के लिए घर के टूटे–फूटे भाग व खंडहर काम में लाये जाते है। इस प्रकार घर के रख–रखाव एवं खाने–पीने पर कोई खास खर्च नही आता है। साथ ही ग्रामीण परिवारों के लिए उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन स्रोत उपलबध हो जाता है एवं कुछ मात्रा में मांस व अण्डा बेच लेने से परिवार को अतिरिक्त आमदनी हो जाती है।

नस्ल का चुनावः वास्तव में पारम्परिक कुक्कुट पालन की भारत में अधिक प्रांसगिकता है। इस पद्धति से मुर्गी पालन के लिए उपलब्ध 11 प्रजातियों में वनराजा, ग्रामप्रिया, कृष्णा जे, नन्दनम–ग्रामलक्ष्मी प्रमुख है। देशी प्रजाति के पक्षियों की वृद्धि दर व उत्पादन कम होने की वजह से इनकी लोकप्रियता घटती गई। हाल ही में केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान इज्जतनगर, बरेली में देशी और उन्नत नस्ल की विदेशी प्रजाति की मुर्गियों को मिलाकर कुछ संकर प्रजातियॉ विकसित की गई है। इनमें कैरी श्यामा, कैरी निर्भीक, हितकारी एवं उपकारी प्रमुख है। ये प्रजातियां भारत के वातावरण एवं परिस्थितियों में अच्छा उत्पादन देने में सक्षम साबित हुई है और इनकी वार्षिक उत्पादन क्षमता लगभग 180–200 अंडे की है।

आहार व्यवस्थाः अच्छा उत्पादन एवं अधिक लाभ प्राप्त करने के लिये कुक्कुट पालकों को मुर्गियों के आहार पर ध्यान देना चाहिए। प्रायः देखा गया है कि किसी विशेष मौसम में उत्पादित होने वाला एक विशेष प्रकार का अनाज ही मुर्गियों को खिलाया जाता है, जिससे पक्षियों को आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में प्राप्त नही होते है। अतः पक्षियों को वर्ष के दौरान पैदा होने वाले अनाजों को मिश्रित करके खिलाना चाहिए। यदि सम्भव हो तो सम्पूर्ण आहार के रूप में उन्हें प्रोटीन, खनिज लवण व विटामिन भी देना चाहिए। सम्पूर्ण आहार की मात्रा क्षेत्रीय उपलब्धता के आधार पर घटाई या बढ़ाई जा सकती है।

1. सहा. प्रो. सरदार बल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ
2. वरिष्ठ वैज्ञानिक, एल.पी.एम., राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

मुर्गी आहार बनाने की विधि:

खाद्य अवयव	मॉस के लिए मुर्गी आहार	मुर्गियों को बेचने से 10 दिन पहले देने वाला आहार	चूजे बढ़ने के लिए आहार	चूजों को डेढ़ माह बाद वाला आहार	अंडा देने वाली मुर्गी का आहार
मक्का	44.25	44.10	32.00	27.00	30.80
ज्वार			11.00		
चावल की पॉलिस	10.00	20.00	16.80	40.00	35.00
मुंगफली की खल	15.00	11.00	11.00	15.00	
सूरजमुखी की खल	15.00	11.00	15.00	5.00	11.50
सरसों की खल	––	––	11.00	5.00	11.50
मछली का चूर्ण	6.00	5.50	12.00	06.00	04.00
मॉस का चूर्ण	6.00	5.50	––	––	––
एल–लॉसीन	0.15	––	––	––	––
वसा	2.00	1.25	––	––	––
हड्डी का चूरा	0.75	0.60	0.70	0.60	1.00
चूना (खड़िया)	0.50	0.70	––	0.80	5.60
नमक	0.25	0.25	0.40	0.40	0.50
खनिज लवण	0.10	0.10	0.10	0.10	0.10

प्रजनन व्यवस्था: प्रायः ऐसा देखा जाता है, कि एक बार मुर्गी खरीदने के बाद एक झुंड में उन्हीं से बार–बार प्रजनन करवाया जाता है, जिससे इन ब्रीडिंग (अन्तः प्रजनन) के दुष्प्रभाव सामने आते है। इससे अण्डों की संख्या निषेचन एवं प्रस्फुटन में कमी आती है तथा बच्चों की मृत्यु दर बढ़ती है। अतः इन्हें प्रतिवर्ष बदल देना चाहिए। इससे अण्डा उत्पादन व प्रजनन क्षमता में वृद्धि के साथ–साथ चूजों की मृत्यु दर में कमी आती है।

मुर्गियों की सुरक्षा के आवश्यक उपाय:–

बीमारियों से बचाव के सम्बन्ध में जानकारी रखना प्रत्येक मुर्गीपालक के लिए आवश्यक हो जाता है।

1. मुर्गियों को तेज हवा, आँधी, तूफान से बचाना चाहिए।
2. मुर्गियों के आवास का द्वार पूर्व या दक्षिण पूर्व की ओर होना अधिक ठीक रहता है जिससे तेज चलने वाली पिछवा हवा सीधी आवास में न आ सके।
3. आवास के सामने छायादार वृक्ष लगवा देने चाहिए ताकि बाहर निकलने पर मुर्गियों को छाया मिल सके।

4. मुर्गियों का बचाव हिंसक प्राणी कुत्ते, गीदड़, बिलाव, चील आदि से करना चाहिए।
5. आवास का आकार बड़ा होना चाहिए ताकि उसमें पर्याप्त शुद्ध हवा पहुँच सके और सीलन न रहे।
6. मुर्गियाँ समय पर चारा चुग सकें इसलिए बड़े–बड़े टोकरे बनाकर रख लेने चाहिए।
7. कुछ व्याधियाँ मुर्गियों में बड़े वर्ग से फैलकर भंयकर प्रभाव दिखाती है जिसमें वे बहुत बड़ी संख्या में मर जाती है। अतः बीमार मुर्गियों को अलग कर देना चाहिए। उनमें वैक्सीन का टीका लगवा देना चाहिए।
8. मुर्गी फार्म की मिट्टी समय–समय पर बदलते रहना चाहिए और जिस स्थान पर रोगी कीटाणुओं की संभावना हो वहॉ से मुर्गियों को हटा देना चाहिए।
9. एक मुर्गी फार्म से दूसरे मुर्गी फार्म में दूरी रहनी चाहिए।
10. मुर्गियॉ खरीदते समय उनका उचित डॉक्टरी परिक्षण करा लेना चाहिए तथा नई मुर्गियों को कुछ दिनों तक अलग रखकर यह निश्चय कर लेना चाहिए कि वह किसी रोग से ग्रस्त तो नहीं है। पूर्ण सावधानी बरतने पर भी कुछ रोग हो ही जाये तो रोगानुसार चिकित्सा करें।

रोगों से बचाव एवं रोकथामः मुर्गियों को विभिन्न प्रकार से संक्रामक रोगों से बचाने के लिए कुक्कुट पालकों को मुर्गियों में टीकाकरण अवश्य करा देना चाहिए। जहां तक संभव हो एक गांव या क्षेत्र के सभी कुक्कुट पालाकों को एक साथ टीकाकरण करवाने का प्रबन्ध करना चाहिए, इससे टीकाकरण की लागत में कमी आती है। बर्ड फलू जैसी भयानक बीमारीयों से बचने के लिए मुर्गीयों को बाहरी पक्षियों/पशुओं के संपर्क से बचाना चाहिए। यदि कोई मुर्गी बीमार होकर मर गई हो तो उसे स्वस्थ पक्षियों से तुरन्त अलग कर देना तथा निकटस्थ पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर मरी मुर्गी का पोस्टमार्टम करवाकर मृत्यु के सम्भावित कारणों का पता लगाना चाहिए तथा अन्य मुर्गियों को बचाने के लिए उपयुक्त कदम उठाना चाहिए। इस प्रकार आधुनिक तकनीक अपनाकर पारम्परिक ढंग से मुर्गी पालन कर ग्रामीण परिवारों में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ–साथ अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है।

मैंक्स भाषा

यूनेस्को ने 1990 के दशक में मैंक्स भाषा को आधिकारिक तौर पर एक दुर्लभ भाषा घोषित कर दिया था, और माना जा रहा था कि यह जल्दी विलुप्त हो जायगी, लेकिन मान द्वीप पर एक ऐसा स्कूल है, जिसने इस भाषा को नया जीवन दिया है। यह द्वीप आइरिश सागर स्थित ब्रिटिश राजवशं का स्वायत्तशासी उपनिवेश है। मैंक्स भाषा इंडो– यूरोपियन भाषा परिवार से जुडी एक गैलिक भाषा है, जो ऐतिहासिक रूप से मान द्वीप पर रहने वाले जातीय समूह मान द्वारा बोली जाती है। यह आइरिश एवं स्कॉटिश भाषा के काफी निकट है, जो 13 वीं से 14 वीं शताब्दी के बीच एक स्वतंत्र भाषा के रूप में उभरी थी। एक समय द्वीप की पूरी आबादी की यह प्रमुख भाषा थी, लेकिन 1765 में ब्रिटिश राजवंश का उपनिवेश बनने के बाद इसका पतन शुरू हो गया ,जो 19 वी सदी के मध्य की आर्थिक मंदी के दौरान काफी बढ़ गया। द्वीप के काफी लोग रोजगार की तालाश में इंग्लैंड चल गए। 1960 के दशक में करीब दो सौ लोग ऐसे थे, जो मैंक्स भाषा जानते थे। लेकिन 1974 में इसके आखिरी मूल भाषी नेड मैड्रैल की मृत्यु हो गई, लेकिन मान द्वीप की सरकार के प्रयासों से यह भाषा फिर से जो उठी है। वर्ष 1985 में मैंक्स के इतिहास में पहली बार द्वीप की संसद ने इस भाषा को सीमित सरकारी मंजूरी दी। वहां की सरकार मैंक्स हेरिटेज फाउंडेशन एवं मैंक्स गैलिक एडवाइजरी काउंसिल चलाती है, जो इस भाषा के कार्यालयी उपयोग का नियंत्रित एवं मानकीकरण का काम करती है। इसी का नतीजा है कि पचास वर्ष पहले विलुप्ति के कगार पर खड़ी इस भाषा में आज रोड साइन, रेडियो शो, मोबाइल फोन एप्स और उपन्यास उपलब्ध हैं।

महिला श्रमशक्ति के विषय के कुछ रोचक तथ्य : एक संकलन

कविता शर्मा[1], आशुतोष[2], अमरेन्द्र कुमार[1],
मंजू आशुतोष[2] व सोहनवीर सिंह[3]

आधुनिकीकरण व वैश्वीकरण के इस दौर में महिलाओं की छवि में आमूलचूल परिवर्तन स्पष्ट नजर आ रहे हैं। कहां एक तरफ महिलाओं की पुरातन तस्वीर थी। घर की देहरी तक सिमटी, सहमी सी, पर्दे की ओट में अत्याचारों, भेदभाव व प्रताड़नाओं को सहती, निरक्षर व निर्णयाधिकारों से वंचित कहां आज के इस युग में देश की महिलाओं की तस्वीर बिल्कुल परिवर्तित हो गई है — आत्मविश्वास, आत्मस्वाभिमान व आत्म गौरव से ओतप्रोत, घर के बाहर कदम रखते हुए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी सक्रिय सहभागिता दर्ज कराते हुए निरन्तर सफलता के सोपानों पर अग्रसर, शिक्षित व निर्णयाधिकारों से लैस। निःसन्देह महिलाओं की यह परिवर्तित छवि देश के लिए गौरव की बात है, समानतामूलक सामाजिक व्यवस्था की आधारशिला है, महिला सशक्तिकरण का प्रतिबिंब है, विकास प्रक्रिया की नींव है।

हर्ष का विषय है कि आज देश की युवा महिलाएं एक तरफ उच्च शिक्षण—प्रशिक्षण के मार्ग पर अग्रसर होते हुए व्यापलटव के रूप में आकाश की असीम ऊंचाईयों को नाप रही है, अंतरिक्ष अभियानों में अपनी सफलता के झंडे गाड़ रही है, सेना जैसे क्षेत्र में भी विभिन्न पदों की कमान बखूबी संभालते हुए देश की रक्षा हेतु अपनी कुर्बानी देने को तत्पर है, राजनीतिक पटल पर भी अपनी उपस्थिति दर्ज करवा रही है, साहित्य, कला व संगीत जैसे क्षेत्रों में पदार्पण करके अपने हुनर, कला प्रवीणता, सृजनात्मकता व लगन का परिचय दे रही है। आज की युवा महिलाएं अपने जीवन को अधिक बेहतर और सम्मानजनक बनाने के सपनों को साकार कर रही है और अब घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर बाहर की दुनिया में भी अपनी उपस्थिति को बड़ी ही कुशलता व सफलता से दर्ज करवा रही है। आंकडो के आधार पर इस तथ्य को पुष्ट किया गया है कि भारतीय महिलाएं शिक्षा के प्रति अमरीकी महिलाओं की अपेक्षा अधिक जागरूक व कटिबद्ध है इसी भांति विश्वभर में उच्च पदों पर आसीन महिलाओं की सर्वाधिक संख्या भारत में है। श्रमशक्ति मे महिलाओं की बढती सहभागिता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि प्रत्यक्ष श्रमशिक्त में 40 प्रतिशत तथा अप्रत्यक्ष श्रमशक्ति में 90 प्रतिशत योगदान महिलाओं का ही है। साथ ही नारी शक्ति आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर मानसिक गुलामी की त्रासदी से विमुक्त हो रही है। निसंदेह ये सब परिवर्तन महिला सशक्तिकरण के परिचायक है, महिला सशक्तिकरण के मार्ग को सुगम व सुलभ बना रहे है। आज का युवा वर्ग भी संकीर्ण मानसिकता का परित्याग करते हुए घरेलू व पारिवारिक कार्यों में साझेदारी का निर्वाह करते हुए महिलाओं को विकास व सशक्तिकरण के लिए नये आयाम प्रदान कर रहा है।

भारत में महिलाएं अब सभी तरह की गतिविधियों जैसे कि शिक्षा, राजनीति, मीडिया, कला और संस्कृति, सेवाक्षेत्र, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आदि में हिस्सा ले रही हैं आज की महिलायें हर क्षेत्र में कामयाबी की मंजिलों को छूती जा रही है। किसी भी क्षेत्र में उन्हें कम नहीं आंका जा सकता, महिलाओं की श्रमशक्ति की शुरूआत घर से होती हैं। वे घर की नींव का काम करती है। घर के चूल्हे—चौके के काम से लेकर बच्चों के पालन पोषण के काम तक वे अपनी जिम्मेदारियां बखूबी निभाती है। महिलायें हर कठिन परिस्थियों में अपने लिए रास्ता बना सकती है। यदि हम इतिहास पर एक नजर डालें तो ज्ञात होगा कि नारी शक्ति का किसी न किसी रूप में अतुलनीय योगदान रहा हैं। काम करने की लगन व त्याग की भावना होने के कारण नारी ने सामाजिक दायित्व को बाखूबी निभाया है। देश में खेती बाड़ी व कठिनाइयों का सामना करती हैं तो इसका सीधा प्रभाव खेती व पशु उत्पादकता पर

1— शोध छात्र, डी.सी.पी., राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2— वरिष्ठ वैज्ञानिक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3— प्रधान वैज्ञानिक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पड़ता है। एक अनुमान के अनुसार संसार की कुल कृषि श्रम शक्ति की 43 प्रतिशत भागीदारी केवल महिलाओं की है। तकरीबन 60 करोड़ महिलायें, जो कि विश्व की कामकाजी महिलाओं की संख्या के आधे से भी अधिक है, असुरक्षित रोजगार में लगी है। ऐसे काम श्रम–सुरक्षा के कानूनों के दायरे से अक्सर बाहर होते है।

आम धारणा के विपरीत महिलाओं का एक बड़ा प्रतिशत कामकाजी है। राष्ट्रीय आंकड़ा संग्रहण एजेंसियां इस तथ्य को स्वीकार करती हैं कि श्रमिकों के रूप में महिलाओं की भागीदारी को लेकर एक गंभीर न्यूनानुमान है। हालांकि पारिश्रमिक पाने वाली महिला श्रमिकों की संख्या पुरूषों की तुलना में बहुत ही कम है। शहरी भारत में महिला श्रमिकों की एक बड़ी संख्या मौजूद है। एक उदाहरण के तौर पर सॉफ्टवेयर में 30 प्रतिशत कर्मचारी महिलाएं है। वे पारिश्रमिक और कार्यस्थल पर अपनी स्थिति के मामले में अपने पुरूष सहकर्मियों के साथ बराबरी पर है। ग्रामीण भारत में कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में कुल महिला श्रमिकों के अधिक से अधिक 89.5 प्रतिशत तक को रोजगार दिया जाता है। कुल कृषि उत्पादन में महिलाओं की औंसत भागीदारी का अनुमान कुल श्रम का 55 प्रतिशत से 66 प्रतिशत तक है। 1991 की विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में डेयरी उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी कुल रोजगार का 94 प्रतिशत है। वन आधारित लघु स्तरीय उद्यामों मे महिलाओं की संख्या कुल कार्यरत श्रमिकों का 51 प्रतिशत है।

• विश्व स्तर पर देखें तो औपचारिक रोजगार में लगी या उसमें काम खोजने वाली महिलाओं (कामकाजी उम्र की) का अनुपात साल 2009 में 53 फीसदी था। यह आंकड़ा साल 1991 से लगातार स्थिर बना हुआ है।

• दक्षिण अफ्रीका और उप–सहारीय अफ्रीका में अधिकतर महिलाऐं खेतिहर मजदूर है। हर इलाके में महिलायें पुरूषों की तुलना में कहीं ज्यादा अभुगतेय (नान पेड) काम करती है। महिलाओं को पुरूषों के मुकाबले कम वेतन दिया जाता है।

• दक्षिण एशिया और उप–सहारीय अफ्रीका में असुरक्षित श्रेणी के कामों में लगी महिलाओं की तदाद 80 फीसदी है। लाखों की तादाद में महिलायें अर्थव्यवस्था के अनौपचारिक क्षेत्र में घर बैठे किसी और के लिए काम करने वाले के रूप में या घरेलू नौकरानी के रूप में काम करती है।

• सिर्फ दक्षिण एशिया में ही घर बैठे किसी दूसरे के लिए काम करने वाले लोगों की तादाद 5 करोड़ से ज्यादा है। इनमें प्रति 5 व्यक्ति में चार महिलायें है। घर बैठे किसी दूसरे के लिए किए जाने वाले कामों में शामिल है–सिलाई–बुनाई–कटाई, रस्सी बांटना, काजू का प्रसंस्करण, जूते तैयार करना, रबड़ या प्लास्टिक के कुछ सामान तैयार करना आदि। ये काम हाथ से किए जाने वाले होते हैं और अत्यधिक परिश्रम की मांग करते है। इन कामों के लिए महिलाओं को ना तो सामाजिक सुरक्षा के नाम पर कुछ मिलता है, ना पैंशन और ना ही न्यूनतम मजदूरी।

• अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा प्रस्तुत 18 देशों के आंकड़े 1 से 1.25 फीसदी का है। विकासशील देशों में घरेलू कामकाज को रोजगार के लिए बतौर पेशा अपनाने वाले लोगों में 74 से 94 फीसदी है। अंतर्राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अनुसार अर्जेन्टीना में स्त्री–पुरूष के बीच भुगतान के मामले में अंतर 29 फीसदी का है। इस तथ्य का एक इशारा यह भी है कि ज्यादातर महिलायें कम भुगतान वाले कामों में लगी हैं।

• 83 देशों के आंकड़ों के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की सूचना है कि महिलाओं को समान काम के लिए पुरूष की तुलना में 10 से 30 फीसदी कम भुगतान हासिल होता है।

• जिन 25 देशों के बारे मे आंकड़ें उपलब्ध हैं उनमें 22 देशों में पाया गाया है कि पुरूषों की तुलना में महिलाओं में गरीबी ज्यादा है। महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा अधिक समास्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

• 48 देशों में विधान है कि महिलाएं सभी उद्योगों में काम कर सकती है उन्हें परिभाषित किया गया है। इन देशों में कानूनन

प्रावधान है कि जिन कामों में भारी बोझा उठाना पड़ता है, श्रम अत्यधिक करना पड़ता है, जिन कामों से महिलाओं के शारीरिक मानसिक सेहत को प्रत्यक्ष हानि पहुंचती है, उनमें महिलाएं काम नहीं कर सकती। 11 देशों में कुछ कामों में महिलाओं का प्रवेश यह कहकर प्रतिबंधित किया गया है कि ये काम महिलाओं की शुचिता नैतिकता के खिलाफ है।

• जब महिलाये श्रम बाजार में पहुंचती है तो इस बात की संभावना बड़ी कम होती है कि उन्हें एक गरिमापूर्ण काम हासिल होगा। वैश्विक रूप से देखें तो महिला श्रम शक्ति का 53 फीसदी हिस्सा ऐसे कामों में लगा है जिसे श्रम कानूनों के लिहाज से असुरक्षित काम कहा जाएगा, यानी ऐसा काम जिसमें किसी किस्म की सामाजिक सुरक्षा हासिल नहीं है और ना ही न्यूनतम मजदूरी ही हासिल होती है। दक्षिण एशिया और उपसहारीय अफ्रीकी देशों में ऐसी महिलाओं की तादाद 80 फीसदी है।

• देश की महिला श्रमशक्ति (वर्कफोर्स) मे खेतिहर महिलाओं की तादाद (साल 2004–05) बहुत ज्यादा (72.8) है। खेतिहर पुरूषों की तादाद 48 फीसदी है।

• खेतिहर कामों में लगी महिलाओं में विशुद्ध रूप से कृषि सम्बंधित कार्यों में लगी महिलाओं की संख्या शुरूआती सालों में पुरूषों की तुलना में अपेक्षाकृत कम थी (एंप्लायमेंट अनएंप्लायमेंट सर्वे, एनएसएसओ)। बहरहाल साल 2004–05 तक स्थिति बदली और कृषि सम्बंधित कार्यों में लगी स्त्रियों की संख्या पुरूषों के बराबर हो गई (महिला 64.4 फीसदी, पुरूष 64 फीसदी)।

• छोटे किसानों (कम जोत वाले) मे 62 फीसदी पुरूष और 85 फीसदी स्त्रियां या तो निरक्षर है या फिर उन्हें प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा हासिल हुई है। छोटे किसानों में मात्र 20 फीसदी पुरूष और 6 फीसदी महिलायें ही माध्यमिक या उससे ऊंचे दर्जे की शिक्षा हासिल कर पाये है।

• ग्रामीण इलाकों में खेतिहर मजदूरी करने वाली महिलाओं की तादाद साल 1999–2000 में 36.5 प्रतिशत थी जो साल 2004–05 में घटकर 29.2 प्रतिशत हो गई।

• साल 2004–05 में बाल खेतिहर महिला मजदूरों की तादाद (2.4 प्रतिशत) बाल पुरूष मजदूरों (1.5 प्रतिशत) से ज्यादा थी।

• खेतिहर क्षेत्र में लैंगिक भेदभाव बहुत ज्यादा है। साल 1993–94 के बाद के आंकड़ों से पता चलता है कि खेतिहर मजदूरी में पुरूषों को स्त्रियों की तुलना में 1.4 गुना ज्यादा मजदूरी मिलती है।

• साल 1993–94 में महिला खेतिहर मजदूर को 196 दिन की दिहाड़ी मजदूरी हासिल थी जबकि साल 2004–05 मे ं इसकी संख्या घटकर 184 दिन हो गई।

• साल 2000 तक खेती का स्त्रीकरण (यानी खेतिहर कामों में स्त्रियों की संख्या वृद्धि) नहीं हुआ था लेकिन 2004–05 के आंकड़े कहते है कि खेतिहर कामों में लगी महिलाओं की संख्या में बढ़ोतरी हुई है और यह संख्या वृद्धि महिला किसानों में नहीं बल्कि खेतिहर महिला मजदूरों में हुई है।

• साल 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में कुल श्रमशक्ति की तादाद 40 करोड़ है जिसमें 68.37 प्रतिशत पुरूष और 31.63 प्रतिशत महिला कामगार है।

• भारत में खेतिहर कामगारों की संख्या 2,34,270,000 है (साल 2011 की जनगणना के अनुसार)। इसमें 38.99 हिस्सेदारी महिला श्रमशक्ति की और 60.93 प्रतिशत हिस्सेदारी पुरूष श्रमशक्ति की है।

• भारत में खेतिहर क्षेत्र लैंगिक भेदभाव से भरा हुआ है। तकरीबन 75.38 प्रतिशत महिला श्रमशक्ति खेती किसानी के कामों में संलग्न है। खाद्यान के उत्पादन में जितनी श्रमशक्ति लगती है उसका 33 प्रतिशत महिला श्रमशक्ति है। गन्ना आौर चुकंदर उत्पादन में लगी कुल श्रमशक्ति में महिला श्रमशक्ति की हिस्सेदारी 25.5 फीसदी है।

• पशुपालन में महिला श्रमशक्ति का 7.03 प्रतिशत हिस्सा परोक्ष रूप से रोजगार देने वाला है।

• खेती व पशुपालन के साथ एक खास बात यह है कि इसमें ज्यादा कौशल की जरूरत नहीं है और खेती के काम को घर के काम के साथ–साथ आसानी से किया जा सकता है, इस वजह से खेतिहर काम ग्रामीण महिलाओं के लिए रोजगार का एक अच्छा साधन है।

• साल 2004–05 की एनएसएस रिपोर्ट के अनुसार विभिन्न खेती सम्बंधित गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी प्रतिशत पैमाने पर निम्नलिखित हिसाब से है – खेत जोतना–1.23 फीसदी, 4.2 फीसदी बीज डालना, 6.13 फीसदी रोपाई, 23.82 फीसदी ओसवानी दौनी, 23.64 फीसदी फसल कटाई तथा शेष 40.98 फीसदी फसल संबंधी अन्य कामों में।

• चूंकि हल चलाने के काम में पुरूषों की संख्या ज्यादा है इसलिए लैंगिक भेदभाव के तर्क से इस काम में मजदूरी भी अपेक्षाकृत ज्यादा है जबकि निराई व गुड़ाई, ओसवन–दौनी आदि काम जिसमें महिलाओं की तादाद ज्यादा है, वहां मजदूरी कम हैं ऐसे कामों में भी पुरूष और महिला की आमदनी के बीच, 9.46 रूपये की कमाई (प्रतिदिन) का अन्तर है। निराई व गुड़ाई से महिलाओं को जो मजदूरी मिलती है वह हल जोतने के काम से हासिल होने वाले पैसे से (जिसमें पुरूषों की संख्या ज्यादा है) 21.47 रूपयें कम है।

• ग्रामीण इलाके में दिहाड़ी करने वाली किसी स्त्री को पुरूष की कमाई की तुलना में महज 70 फीसदी ही हासिल हो पाता है। फिर स्थान, शिक्षा, हैसियत और उम्र के हिसाब से भी कमाई में अंतर देखा गया है।

शायद ही कभी किसी महिला के हिस्से में उसके नाम पर जायदाद होती है। अगर जायदाद महिला के नाम पर हो, तब भी जायदाद (खासकर खेत) पर उसका वास्तविक नियंत्रण नहीं होता। खेत में बोयी–रोपी जाने वाली फसल से लेकर जमीन की खरीद–बिक्री तक के फैसले महिला से पूछकर नहीं होते। भारत व संविधान सभी भारतीय महिलाओं को समान अधिकार (अनुच्छेद 14), राज्य द्वारा कोई भेदभाव नहीं करने (अनुच्छेद 15(1)), अवसर की समानता (अनुच्छेद 16), समान कार्य के लिए समान वेतन (अनुच्छेद 39 (घ)) की गारंटी देता है। इसके अलावा यह महिलाओं और बच्चों के पक्ष में राज्य द्वारा विशेष प्रावधान बनाए जाने की अनुमति देता है (अनुच्छेद 15 (3)), महिलाओं की गरिमा के लिए अपमानजनक प्रथाओं का परित्याग करने (अनुच्छेद 51 (ए)(ई)) और साथ ही काम की उचित एवं मानवीय परिस्थितियां सुरक्षित करने और प्रसूति सहायता के लिए राज्य द्वारा प्रावधानों को तैयार करने की अनुमति देता है। (अनुच्छेद 42) भारत सरकार ने 2001 को महिलाओं के सशक्तीकरण वर्ष के रूप में घोषित किया था महिलाओं के सशक्तीकरण की राष्ट्रीय नीति 2001 में पारित की गयी थी। अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के एक दिन बाद, 9 मार्च 2010 को राज्यसभा ने महिला आरक्षण बिल को पारित कर दिया जिसमें संसद और राज्य की विधान सभाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था है। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आइएलओ) और एशियाई बैंक (एडीवी) द्वारा तैयार एक संयुक्त रिपोर्ट में कहा गया है कि एशियाई देशों में महिलाओं के लिए बेराजगारी से भी बड़ी चुनौती उन्हें कम गुणवत्ता वाले हल्के रोजगार दिया जाना है।

द ईयू इंडिया एफटीए इन एग्रीकल्चर एंड लाइकली इम्पैक्ट ऑन इंडियन विमेन नामक दस्तावेज के अनुसार

पर्यावरणीय प्रदूषण: विनाश की तरफ बढ़ता कदम

अतीन्द्र कुमार पाण्डेय[1], सुनीता मीणा[1], मगन सिंह[1]

पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या से आज भारत ही नहीं बल्कि विश्व के समस्त देश त्रस्त है। यह विडम्बना ही है कि समस्त देश इस समस्या से अनजान न होते हुए भी कोई सार्थक कदम नहीं उठा रहे हैं। ग्रीन–हाउस प्रभाव, भूमंडलीय तापवृद्धि, जैव–विविधता इत्यादि जैसे वैज्ञानिक शब्दावली के शब्द भले ही लोगों को ठीक से समझ में न आते हों लेकिन पर्यावरण प्रदूषण के फलस्वरूप पर्यावरण पर मंडराते खतरे के चलते विनाश की आहट अब साफ–साफ सुनाई पड़ने लगी है। मौसम के बदलते मिजाज की वजह से सुनामी जैसी घटनाएं, ग्लेशियरों का पिघलना, नदियों का सूखना, वाहनों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि की वजह से ज़हरीली हुई जीवनदायनी हवा, उस पर प्रदूषण का भार, बरसात के दिनों में मेंढ़कों की संख्या अत्यन्त कम दिखाई पड़ना, खेतों में केचुओं की संख्या में अत्यन्त कमी होना, चील गिद्ध व अन्य उड़ते पक्षियों का झुंड दिखाई देना बन्द होना विनाश के साफ संकेत नहीं तो क्या है ?

मानवीय क्रिया–कलाप इस घटना के लिए पूर्ण रूप से ज़िम्मेदार है जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष असर लोगों के बसने और विस्थापन को प्रभावित कर सकता है। जहां कुछ क्षेत्रों में भंयकर बरसात हो सकती है, वहीं कुछ क्षेत्रों में सूखा पड़ने की उतनी ही संभावना बनी है। समुद्र में सुनामी जैसी घटना आम हो सकती है क्योंकि तेजी से बदलती पर्यावरणीय दशाओं के साथ वातावरणीय समायोजन में बिल्कुल समर्थ नहीं होगें। पर्यावरणीय परिवर्तन का असर लोगों के स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर पड़ने वाला हैं जो कि प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता है। अधिक सूखे क्षेत्रों में मिटट्ी का खारापन बढ़ने की वजह से फसल उत्पादकता प्रभावित होगी तो वहीं मछली उत्पादन में भी कमी आने की संभावना बनी रहेगी। वायुमंडल में तेजी से बढ़ता कार्बन डाई–आक्साइड का मिश्रण समुद्र के पानी को भी प्रभावित कर रहा है। समुद्र जैव विविधता का महत्वपूर्ण हिस्सा है, फलस्वरूप जैव विविधता प्रभावित होगी। कोरल जिसको इस बदलती प्राकृति के चलते ही नुकसान पहुॅंच रहा है। कोरल की चट्टानें यदि खत्म हो जाएं और उस पर आश्रय वाली वनस्पतियों को हटा लिया तो पूरा इकोसिस्टम ही नष्ट हो जाएगा।

हमारी अरण्यक संस्कृति वृक्षों का प्राचीन काल से ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारी वर्तमान में संस्कृति ने वृक्षों की समस्या से मानों सन्यास ले लिया है। आज के विकासवादी युग में जंगलों का नष्ट होना व अनगिनत बड़े–बड़े वृक्षों का काटना आम बात है, जिसका दुष्प्रभाव हमें विभिन्न रूपों में मिलता है तथा प्रदूषण बढ़ाने में मदद करता है। तेजी से बढ़ रहे प्रदूषण से संक्रमण रोगों के बढ़ने पर भी कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए और इस कारण कुछ जीव–जन्तुओं की प्रजातियां समूल नष्ट भी हो सकती है।

इस विनाश कारक प्रदूषण से बचने का एक मात्र उपाय है कि मनुष्य स्वयं जागरूक बने व जन जागरूकता के लिए अनवरत प्रयास करें और लोगों को पर्यावरण व परिस्थितिकी के ह्रास–क्षरण के दूरगामी प्रभावों से परिचित कराया जाए। यदि हमें इस विनाश से बचना है तो पर्यावरणीय अनुकूल माहौल बनाने के लिए अपनी सुख–सुविधाओं में कमी करनी ही पड़ेगी।

[1] राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

दुधारू पशुओं के चयन में सावधानियां

संजीव सिंह[1], इंद्रजीत गांगुली[2] एवं एस. पी. सिंह[3]

पशुपालन एवं डेयरी व्यवसाय में दुधारू पशुओं के दूध देने की क्षमता का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसलिए गाय/भैंस की खरीदारी करते समय कुछ विशेष जानकारी होना आवश्यक हो जाता है। दुधारू पशु की खरीद में बहुत बड़ी पूंजी खर्च होती है और इनके अच्छे गुणों के ऊपर ही डेयरी व्यवसाय का भविष्य निर्भर करता है। क्योंकि अच्छी नस्ल और गुणवत्ता के दुधारू पशुओं से ही अधिक दुग्ध उत्पादन हासिल कर पाना सम्भव हो पाता है। इसलिए दुधारू पशु का चयन एवं खरीददारी करते समय अच्छी नस्ल, दोष रहित पूर्णतः स्वस्थ्य पशु, लंबे ब्यांत, हर साल बच्चा और अधिक दूध देने वालीगाय/भैंस को ही प्राथमिकता देनी चाहिए, जिससे व्यवसाय में लगाई गई पूंजी से अधिक से अधिक मुनाफा प्राप्त किया जा सके। अतः पशुपालक निम्न बातों को अमल में लाकर अच्छी दुधारू गाय/भैंस का चयन कर सकते हैं।

तिकोने आकार की गाय अधिक दुधारू होती है। ऐसी गाय की पहचान के लिए उसके सामने खड़े हो जाएं। इससे गाय का अगला हिस्सा पतला और पिछला हिस्सा चौड़ा दिखाई देगा। शरीर की तुलना में गाय के पैर एवं मुंह–माथे के बाल छोटे होने चाहिए। दुधारू पशु की चमड़ी चिकनी, पतली और चमकदार होनी चाहिए। आंखें चमकली, स्पष्ट और दोष रहित होनी चाहिए।अयन पूर्ण विकसित और बड़ा होना चाहिए। थनों और अयन पर पाई जाने वाली दुग्ध शिरायें जितनी उभरी और टेड़ी–मेड़ी होंगी पशु उतना ही अधिक दुधारू होगा। दूध दोहन के उपरांत थन को पूरी तरह से सिकुड़ जाना चाहिए। चारों थनों का आकार एवं आपसी दूरी समान होनी चाहिए। गाय/भैंस के पेट पर पाई जाने वाली दुग्ध शिरा जितनी स्पष्ट, मोटी और उभरी हुई होगी पशु उतना ही अधिक दूध देने वाला होगा। दुधारू पशु को खरीदते समय हमेशा दूसरे अथवा तीसरे ब्यांत की गाय/भैंस को ही प्राथमिकता देनी चाहिए। क्योंकि इस दौरान दुधारू पशु अपनी पूरी क्षमता के अनुरूप खुलकर दूध देने लगते हैं और यह क्रम लगभग सातवें ब्यांत तक चलता है। इसके पहले अथवा बाद में दुधारू पशु के दूध देने की क्षमता कम रहती है। दूसरे–तीसरे ब्यांत के पशु को खरीदते समय प्रयास यह होना चाहिए कि गाय/भैंस उस दौरानएक माह की ब्याही हुई हो और उसके नीचे मादा बच्चा हो। ऐसा करने से उक्त पशु के दूध देने की क्षमता का पूरा ज्ञान होने के साथ ही मादा पड़िया अथवा बछड़ी मिलने से भविष्य के लिए एक गाय/भैंस और प्राप्त हो जाती है, जोकि भविष्य की पूंजी है।दुधारू पशु को खरीदते समय लगातार तीन बार दोहन करके देख लें। क्योंकि व्यापारी चतुराई से काम लेते हैं और आपको पशु खरीदते समय मात्र एक बार सुबह अथवा शाम को ही दोहन करके दिखायेंगे। ऐसा करने से आप को प्रतीत होगा कि यह पशु अधिक दूध देने वाला है, लेकिन सच्चाई यह नहीं होती है। व्यापारी एक समय का दोहन नहीं करता अथवा कम दुग्घ दोहन करता है जिससे दूध की मात्रा अयन में रह जाती है। इस कारण लगता है कि गाय/भैंस अधिक दूध देने वाली है। इसलिए दुधारू पशु की खरीददारी करते समय तीन बार लगातार दुग्ध दोहन अपने सामने अवश्य करा लेना चाहिए।

दुधारू पशु का चयन करते समय उसकी सही आयु का पता लगाना आवश्यक होता है। पशु की सही आयु का पता लगाने के लिए उसके दांतों को देखा जाता है। मुंह की निचली पंक्ति में स्थायी दांतों के चार जोड़े होते हैं। ये सभी जोड़े एकसाथ नहीं निकलते हैं। दांत का पहला जोड़ा पौने दो साल की उम्र में, दूसरा जोड़ा ढाई साल की उम्र में, तीसरा जोड़ा तीन साल के अन्त में और चौथा जोड़ा चौथे साल के अन्त की उम्र में निकलता है। इस प्रकार से दांतों को देखकर नई और पुरानी गाय/भैंस की सटीक पहचान की जा सकती है। औसतन एक गाय/भैंस 20–22 वर्षों तक जीवित रहती है। गाय/भैस की उत्पादकता उसकी उम्र के साथ–साथ घटती चली जाती है। दुधारू पशु अपने जीवन के यौवन और मध्यकाल में अच्छा दुग्ध उत्पादन करता है। इसलिए दुधारू पशु का चयन करते समय उसकी उम्र की सही जानकारी होना अत्यंत आवश्यक है।

1 वरिष्ठ वैज्ञानिक,एन.बी.एजी.आर., आई.सी.ए.आर., करनाल।
2 वरिष्ठ वैज्ञानिक, एन.बी.एजी.आर., आई.सी.ए.आर., करनाल।
3 वैज्ञानिक, पशुपालन एवं डेरी कृषि विज्ञान केन्द्र, बिचपुरी, आगरा।

भैंस के सींग के छल्ले भी आयु का अनुमान लगाने में सहायक होते हैं। प्रथम छल्ला सींग की जड़ पर प्रायः तीन वर्ष की आयु में बनता है। इसके बाद प्रतिवर्ष एक–एक छल्ला और आता रहता है। सींग पर छल्लों की संख्या में दो जोड़कर भैंस की आयु का अनुमान लगाया जा सकता है। परंतु देखने में आया है कि कुछ लालची लोग अधिक रूपया कमाने के चक्कर में दुधारू पशु खरीददार को धोखा देने के लिए रेती से छल्लों को रगड़ देते हैं। इसलिए यह विधि विश्वसनीय नहीं कही जा सकती है।दूध देने वाले वाले दुधारू गाय/भैंस में सींग पशु की नस्ल की पहचान का मुख्य चिन्ह होते हैं। यद्यपि सींग के होने या नहीं होने का पशु के दुग्ध उत्पादन की क्षमता पर कोई असर नहीं पड़ता है।भैंस की मुर्रा नस्ल आज भी अपने मुड़े सींगों के कारण ही पहचानी जाती है।

पशु की सेहत देखकर पशु की आयु का अनुमान लगाया जा सकता है। बूढ़े पशु की अस्थि सन्धियां कमजोर हो जाती है और पशु धीमी गति से चलता है। उसकी त्वचा ढीली हो जाती है और मुंह से दांत गिर जाते हैं। बूढ़े पशु की आंख के पीछे तथा कान के बीच के टेम्पोरल क्षेत्रों में गड्ढ़ा बन जाता है। इसके विपरीत युवा अवस्था की भैंसों व गायों का शरीर सुन्दर, सुडौल, चुस्त, चमकदार त्वचा तथा चर्बी कम होती है। अच्छी खुराक होने पर भी बूढ़े पशु और स्वस्थ पशु में अंतर कर पाना संभव नहीं हो पाता है। कई बार व्यापारी ऑक्सीटोसिन इंजैक्शन लगाकर दूध दोहन कराते हैं। इससे बचने के लिए जब भी दुग्ध दोहन कराये तो अपने सामने कम से कम आधा घंटा व्यापारी से बात करने में गुजार दें फिर इसके बाद ही दोहन करायें।

खुले बाजार, मेलों, हाट पेंठ आदि से पशुओं को खरीदनें में कभी–कभी पशु की पहचान करने में धोखा हो जाता है। अतः खरीदते समय उक्त स्थान पर यदि गर्भ की जांच करने वाला कोई जानकार या पशु चिकित्सक हो तो उससे गर्भ जांच करा लेना चाहिए। भैंस के सींगों का बारीकी से निरीक्षण करलें कि कहीं दरातीं से घिसे हुए तो नहीं हैं। त्वचा की चमक पर धोखा खाने से पहले देख लेना चाहिए कि भैंस पर चमक पैदा करने के लिए काला तेल तो नहीं चुपड़ दिया गया है। कई बार चालाक किस्म के लोग बकरी गाय/भैंस के नीचे किसी दूसरी अनुपयोगी गाय/भैंस का नवजात लवारा बांध देते हैं तथा उसे ताजी ब्याही बताकर अधिक कीमत में बेचकर धोखा दे देते है। इससे बचने के लिए बच्चे को उसकी मां के नीचे लगाकर देखना चाहिए। दूध बढ़ाने के लिए चीनी, गुलकंद, जलेबी की चासनी, ओवर फीडिंग करके भी व्यापारी दूध की मात्रा में वृद्धि करके दिखा देते हैं। अतः इसकी पहचान अनुभवी पशुपालकों के माध्यम से अथवा संभव हो तो तीन–चार दिन नजर रखकर की जा सकती है। भैंस के रंगे खुर तथा काजल लगी आंखों को सफेद कपड़े से पोछकर पता किया जा सकता है।

दुधारू गाय/भैंस की खरीद करते समय अयन और थनों की बारीकी से जाचं कर लेनी चाहिए, जिससे थनैला बीमारी के बारे में भली प्रकार से पता चल सके। यदि थन में गांठ, सूजन आदि के लक्षण हैं तो थनैला हो सकता है। ऐसे पशु को भूलकर भी नहीं खरीदना चाहिए। फूल देने वाली गाय/भैंस की जांच हेतु उसे ढलान वाले स्थान पर पीछे का हिस्सा करके बिठाकर देखने से पता लगाया जा सकता है। कई बार व्यापारी कमजोर पशु में तथा उसके अयन में हवा भरवा देते हैं, जिससे वह हष्टपुष्ट, गर्भवती अथवा अधिक दूध देने वाली प्रतीत हो सके। ऐसे पशु के पेट, अयन आदि फूले लग रहे अंगों पर दबाब देकर देख लेना चाहिए। हमेशा ऐसे पशुओं को खरीदने का प्रयास करना चाहिए जिनका जन्म, प्रजनन आदि से लेकर उत्पादन आदि का रिकार्ड रखा गया हो। लेकिन ऐसा रिकार्ड केवल सरकारी फार्मों, कामर्शियल डेरी फार्मों एवं प्रजनन संबंधी शोध केन्द्रों पर ही रखा जाता है। अतः इन केन्द्रों से भी नीलामी अथवा बिक्री के दौरान दुधारू पशुओं को खरीदा जा सकता है। यदि पशुपालक बताई गई बातों को अमल में लाकर दुधारू पशुओं का चयन करेंगे तो अधिक लाभ कमाने के साथ ही धोखा खाने से बच सकते हैं।

बरसीम एवं लूसर्न के लिए खर–पतवार प्रबन्धन

मगन सिंह[1], अमरजीत सिंह हरीका[2] एवं उत्तम कुमार[3]

बरसीम एवं लूसर्न हरे, रसदार एवं स्वादिष्ट चारे के लिए रबी (शीत ॠतु) में सिंचित क्षेत्रों की महत्वपूर्ण फसलें हैं। ये फसलें वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का भूमि में स्थिरीकरण करके भूमि की उर्वरता बढ़ाती है। ये पोषण की दृष्टि से उच्च गुणवत्ता वाली चारे की फसलें हैं। ये दुधारू पशुओं के लिए अत्यन्त उपयोगी होती है। बरसीम एवं लूसर्न में प्रोटीन, खनिज पदार्थ मुख्यतः कैल्सियम तथा फास्फोरस, विटामिन आदि के महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। दोनों फसलों की औसत पाचनशीलता 60–70 प्रतिशत तक पायी जाती है। बरसीम फसल की उच्च गुणवत्ता के कारण इसे 'चारे की फसलों का राजा' कहा जाता है। लूसर्न (रिजका) एवं बरसीम की फसलों में खर–पतवार (अवांछित पौधे) काफी संख्या में उग आते हैं जो कि इनकी पैदावार एवं गुणवत्ता के लिए हानि पहुँचाते हैं। कई खर–पतवारों के कारण पशु अच्छी तरह से इनके चारे को नहीं खाते हैं।

वर्षा ॠतु वाले कुछ खर–पतवार शीत ॠतु के आरम्भ में ही बरसीम एवं लूसर्न के खेतों में उग जाते हैं तथा जैसे ही शीत ॠतु आरम्भ होती है, ये खरपतवार तब तक अपनी संख्या बढ़ाकर इन चारे की फसलों के साथ रोशनी, नमी एवं पोषक पदार्थो के लिए प्रतियोगिता (संघर्ष) शुरू कर देते हैं। कुछ खरपतवार जैसे पत्थरचट्टा (ट्राइन्थेमा मोनोगायना), तंगला (डाइजेरा आरवेन्सिस), जंगली चौलाई (अमरेन्थस विरिडिस), ओइनोथेरा स्पीसीज, सफेद दुद्धी (यूफोरविया हिरटा), बथुआ (चीनोपोडियम अल्बम), सफेद सेंजी (मेलिलोटस इंडिका), पिटपारा (कोरोनोपस डिडिमस), सतगठिया (स्परगुला आरवेंसिस), वनसोया (फ़्यूमेरिया पारवीफ़्लोरा), रानी फूल (पाली गोनम एवीक्यूलेयर), जंगली पालक (पोर्टूलाका ओलरेसिया) आदि इन खेतों में प्रायः पाये जाते हैं तथा इनके अतिरिक्त तीन मुख्य प्रकार के खर–पतवार इन फसलों की प्रभावी हानिकारक घासें है, इनमें कासनी/चिकोरी (चिकोरियम इन्टिबस), अमरबेल (कसकुट्टा कम्प्रेस्ट्रिस) तथा ब्यूइन घास (पोआ एनुआ)। इनमें से पिटपारा एवं कासनी बरसीम से अधिक संबंधित हैं, जबकि अमरबेल, लूसर्न फसल का परजीवी एवं लपेटने वाली खर–पतवार है। यदि चिकोरी को लगातार कई दिनों तक दूध देने वाले जानवरों को खिलाया जाए तो दूध एवं दूध उत्पादों में से दुर्गन्ध उत्पन्न होती है। अतः इसका नियंत्रण भूमि स्तर पर ही करना चाहिए और यह किसी भी हालत में बरसीम एवं लूसर्न के साथ मिश्रित नहीं होना चाहिए।

खर–पतवार प्रबन्धनः–

चारे की अच्छी पैदावार के लिए खर–पतवार प्रबन्धन निम्न विधियों द्वारा करना चाहिए।

1. बुवाई के पहले पलेवा करके खेत की जुताई द्वाराः–

इस तकनीक से खर–पतवार की फसल के प्रति प्रतियोगिता (संघर्ष) को पहले ही खत्म करना चाहिए। इसके लिए सबसे पहले खेत का पलेवा करने के पश्चात् जिस समय खर–पतवार अच्छी तरह से उग आयें तब खेत की जुताई करके उन्हें नष्ट कर दें और उसके पश्चात बरसीम एवं लूसर्न की बुवाई कर देने से खर–पतवारों की समस्या को काफी कम किया जा सकता है अथवा ग्रमेक्सोन या ग्लाईसेल (अवशेष न छोड़ने वाले) खर–पतवार नाशक दवाओं का छिड़काव करके खर–पतवारों को नष्ट करने के पश्चात् इन फसलों की बुवाई करने से खर–पतवारों को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

1– वरि. वैज्ञानिक, चारा अनुसंधान एवं प्रबन्धन केन्द्र, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रभारी, चारा अनुसंधान एवं प्रबन्धन केन्द्र, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3– तकनीकी अधिकारी, चारा अनुसंधान एवं प्रबन्धन केन्द्र, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

2. **साफ सुथरा एवं शुद्ध बीजों द्वाराः—** हमेशा साफ सुथरा शुद्ध एवं अच्छी जामन वाला बीज बोना चाहिए। यह प्रक्रिया खर—पतवारों से एक बचाव के रूप में तथा अमरबेल (कसक्यूटा,) जैसे खर—पतवार को लूसर्न से बाहर निकालने में उपयोगी है। बरसीम तथा लूसर्न चारे वाली फसलें होने के कारण इनमें खर—पतवार के नियंत्रण पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है और कभी कभार ही मुश्किल से इसे खेत से निकाला जाता है और बहुतायत खर—पतवार खेत में उगने से कटाई के समय इनको चारा फसलों के साथ काटकर जानवरों को खिला दिया जाता है। कटाई के बाद मड़ाई करते समय बरसीम एवं लूसर्न के बीजों के साथ मिलकर खर—पतवारों के बीज पुनः अगली बुवाई में उग आते हैं और ये निरन्तर एक वर्ष से दूसरे वर्षों में उगते रहते हैं। अधिकांश किसानों द्वारा यह छिड़कवॉ विधि से बो दिया जाता है और उनके लिए खर—पतवार का उचित प्रबन्धन करना काफी कठिनाई भरा होता है। इसके लिए बरसीम एवं लूसर्न के बीज को 10 प्रतिशत नमक के घोल में 5 मिनट तक डुबाना चाहिए जिससे खर—पतवारों (अमरबेल, कासनी और पटवारा) के बीज हल्के होने के कारण घोल के सतह पर तैरने के पश्चात अच्छी तरह छानकर निकाल लेने चाहिए। उसके बाद तह में बैठे बरसीम एवं लूसर्न के बीज को घोल से निकालकर साफ पानी से अच्छी तरह धोकर बुवाई करनी चाहिए।

3. **अधिक बीजदर एवं कतारों में बुवाई द्वाराः—** सामान्य से अधिक बीज दर बढ़ाकर बोने से खर—पतवार की वृद्धि कम हो जाती है। कतारों में बुवाई करने से खर—पतवारों पर नियंत्रण एवं अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। अतः यह छिडकवॉ विधि से बुवाई की अपेक्षा कतारों में बोना अधिक लाभदायक है।

4. **फसल चक्र द्वाराः—** फसल चक्र द्वारा परजीवी एवं समस्या उत्पन्न करने वाले खर—पतवारों से होने वाले नुकसान को काफी कम किया जा सकता है। रबी की फसलें जैसे गेहूँ, चना, मसूर, आलू आदि को फसल चक्र में अपनाने से वार्षिक खर—पतवारों, सहफसली खर—पतवारों तथा परजीवी खर—पतवारों को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

5. **खर—पतवार नाशक दवाओं द्वाराः—**

(अ) बुवाई के पहले मिट्टी के उपचार द्वाराः—

- बेनफ्लूरालिन या फ्लूक्लोरालिन को 0.75 कि0ग्रा0 प्रति हे0 की दर से मिट्टी में छिड़काव करने के बाद भूमि की ऊपरी 2 से0मी0 की सतह में मिलाने से चौड़ी पत्ती वाले वार्षिक खर—पतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।
- एपटाम (ई0पी0टी0सी0) की मात्रा 1.0—1.5 कि0ग्रा0 प्रति हे0 की दर से मिट्टी की ऊपरी सतह में मिलाने पर चौड़ी पत्ती वाले वार्षिक खर—पतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है परन्तु इसे खरीफ के उन खेतों में प्रयोग नहीं करना चाहिए जिसमें कि पहले बोयी गई फसलें मक्का, ज्वार और बाजरा में यदि एट्राजीन या सिमाजीन (खरपतवार नाशक) का प्रयोग पहले ही किया गया है तो उस खेत में एपटाम का प्रयोग कतई नहीं करना चाहिए।

(ब) जमाव के पहले उपचारः—

- अमरबेल के प्रभावी नियंत्रण के लिए क्लोरप्रोफाम को 6—7 कि0ग्रा0 प्रति हे0 की दर से उपयोग करना चाहिए।
- पेन्डीमेथालिन की 0.5—0.75 कि0ग्रा0 प्रति हे0 की दर से छिड़काव करने से वार्षिक एवं चौड़ी पत्ती वाले खर—पतवारों के नियंत्रण के लिए उपयोगी है।
- आक्साडायजोन की 0.5 कि.ग्रा.प्रति हे0 की मात्रा बहु जातीय खर—पतवारों को नियंत्रित कर सकती है।
- ब्यूटाक्लोर 2 कि0ग्रा0 प्रति हे0 की दर से प्रयोग करने पर खर—पतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

(स) जमाव के बाद उपचारः—

- डाईक्लोफाप—मेथिल की 0.5—1.0 कि0ग्रा0 प्रति हे0 का छिड़काव करने से एक वर्षीय एवं बहुवर्षीय खर—पतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।

- परसूयित, आरसेनल, चोपर आदि का प्रयोग 60–100 ग्राम प्रति हे0 की दर से लूसर्न में प्रयोग करने से खर–पतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।
- लूसर्न एवं बरसीम की 3–4 पत्ती की अवस्था पर 2,4–डी0बी0 या एम0पी0बी0 (थिसट्राल) की 0.5 कि.ग्रा. प्रति हे0 की मात्रा को छिड़काव करने से खर–पतवारों पर नियंत्रण किया जा सकता है।

ब्यूइन (पोआ एनुआ) बरसीम का एक अत्यन्त कष्टदायक खर–पतवार है और यह बरसीम की वृद्धि के दौरान फसल के साथ गंभीर संघर्ष करता है जिससे फसल की उपज पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसको प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए फ्लूक्लोरालिन को 400 मिली0 को 200 लीटर प्रति एकड़ की दर से पानी में मिलाकर बरसीम के लिए तैयार खेत में छिड़काव करने के पश्चात फसल की बुवाई करनी चाहिए। जिन खेतों में पथरचट्टा घास की समस्या है उस खेत मे बरसीम के साथ राया/राई का बीज बरसीम के बीज के साथ मिलाकर बोने से राया/राई की अच्छी वृद्धि से खर–पतवार दब जाते हैं और जहां पर पथरचट्टा की समस्या अधिक हो उसमें बुवाई देरी से यानि अक्टूबर के दूसरे सप्ताह में करनी चाहिए, जिससे कि तापमान घटने से इस खर–पतवार की संख्या में कमी हो जाती है। उचित खर–पतवार प्रबन्धन से न केवल बरसीम एवं लूसर्न की उपज बढ़ायी जा सकती है, बल्कि इनके गुणवत्ता में भी अमूल परिवर्तन लाया जा सकता है जो कि पशुपालकों के लिए लाभकारी सिद्ध होगा।

खर–पतवार पर नियंत्रण पाओ, अपने पशुओं की उत्पादकता बढ़ाओ।।

पेट के लिए सही है दही

दूध–दही के सेवन का सेहत से बहुत पुराना रिश्ता है। कुछ लोग दूध का सेवन तो नियमित रूप से करते हैं, लेकिन दही को आहार में शामिल नहीं करते हैं, जबकि दही के सेवन से दूध की अपेक्षा ज्यादा फायदा होता है। दूध की अपेक्षा दही में प्रोटीन, लैक्टोज, कैल्शियम, लोहा, फॉस्फोरस आदि कई विटामिन्स होते है।, इसलिए दही के अधिक पोषक तत्व शरीर के लिए एंटीबायोटिक का काम करते हैं। इससे बीमारी फैलने से बचाव होता है। अब गर्मियां आने वाली हैं, तो अच्छी सेहत के लिए दही का सेवन करना जरूरी है।

- ✶ दही में मौजूद कैल्शियम की वजह से हड्डियां और दांत मजबूत होते हैं। ऑस्टियोपोरोसिस जैसी बीमारी से लड़ने में भी दही काफी मददगार है।
- ✶ दही के नियमित सेवन से शरीर में कोलेस्ट्रॉल को कम किया जा सकता है।
- ✶ हाई ब्लड प्रेशर के रोगियों को रोजाना दही का सेवन करना चाहिए।
- ✶ पेट की किसी भी तरह की तकलीफ में दही का सेवन बहुत लाभदायक है।
- ✶ जिन लोगों को दूध हजम नहीं होता है, इन्हें दही या मट्ठा लेना चाहिए।
- ✶ दही के रोजाना सेवन से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
- ✶ गर्मी के मौसम में लू से बचाव के लिए भी दही की छाछ या लस्सी बनाकर पीने से पेट की गर्मी शांत होती है।
- ✶ मुंह में छाले होने पर दही के कुल्ले करने से छाले ठीक हो जाते है।
- ✶ उच्च रक्तचाप और हृदय के रोगियों के लिए दही बहुत उपयोगी है।

संपादक मंडल

दक्ष खेती: सुनहरा भविष्य

सुनीता मीणा, वी. के. सिंह, श्रुति शरण

वर्तमान युग की कृषि सम्बन्धी चुनौतियों का सामना करने के लिए दक्ष खेती एक उत्तम तकनीक है। यह खेती की एक एकीकृत प्रणाली है और प्रबन्धन छोटे से खेत में फसल की वास्तविक आवश्यकताओं पर आधारित है। इस खेती की आदर्श परिस्थितियाँ यह हैं कि खेत काफी विस्तृत और विभिन्नताओं से युक्त होना चाहिए।

दक्ष खेती के प्रमुख भाग निम्नलिखित है:

भूमण्डलीय स्थिति प्रणाली:– यह एक उपग्रह आधारित दिशा सूचक प्रणाली है। इसका रिसीवर मोबाइल हैण्डसेट जैसा दिखता है जो कि लगभग पाँच मीटर तक की यथार्थता देने में सक्षम है।

सुदूर संवेदक:– यह तकनीक दूर स्थान के आँकड़े अर्जित करती है। इस कार्य में इलैक्ट्रॉनिक कैमरा, वायुयानों द्वारा सर्वेक्षण और उपग्रह की विशेष भूमिका होती है। इस प्रणाली का प्रयोग आँकड़े बनाने में किया जाता है जिसका विश्लेषण भौगोलिक सूचना प्रणाली द्वारा होता है। कच्चे आँकड़े संसाधित किए जाने के बाद प्रसंस्कृत चित्र क्षेत्र मानचित्र के निर्देशांक अनुरूप बनाये जाते हैं तत्पश्चात उसकी व्याख्या की जाती है।

भौगोलिक सूचना प्रणाली:– यह दक्ष खेती का प्रमुख भाग है व प्रबन्धन की एक तकनीक है जिसकी सहायता से हम एक ही बार में खेती की स्थिति का जायज़ा ले सकते है। यह प्रणाली सही निर्णय देने में सहायक होती है।

स्वचलित कृषि प्रणाली:– इस प्रणाली में कृषि संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वचालितमान यंत्रों द्वारा होती है। दक्ष खेती को कार्यान्वित करने के लिए 50 से 60 एकड़ या उससे भी बड़े खेत को 2–3 एकड़ के छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित किया जाता है उसके पश्चात् भूमण्डलीय स्थिति प्रणाली द्वारा खेत का सर्वेक्षण करते हैं। प्रत्येक छोटे–छोटे खेतों के टुकड़ों का अवलोकन करने के बाद नमूने एकत्रित किए जाते हैं व उनका विश्लेषण होता है।

साधारणत: विश्लेषण निम्नलिखित लक्षणों को दर्शातें है:–

मृदा– अम्लता मापक ऊपरी सतह की मिट्टी की गहराई, कठोर सतह, एन.पी.के और सूक्ष्म पोषक तत्व, फसल तत्व, रोग और कीट प्रतिरोधक क्षमता इत्यादि। इस प्रकार के अध्ययनों से खेत की अच्छी फसल हेतु आवश्यकताओं की सही जानकारी हो जाती है।

विविधदर आधारित यह तकनीक स्थान सम्बन्धी पदार्थों के प्रयोग से अभिप्रेरित हैं जैसे कि बीज, पादपनाशक, कीटनाश्क, खाद और संशोधन। इसमें एक चलायमान को क्षेत्रीय कंप्यूटर, जी.पी.एस रिसीवर, संबंधित प्रयोगिक मानचित्र उत्पाद चित्रण नियंत्रक द्वारा खेत की आवश्यकता के अनुरूप पदार्थ की मात्रा अथवा प्रकार में परिवर्तन किए जाते हैं। परिवर्तनीय गति तकनीक का अग्रिम रूप है–ओन–द–गो सैनसिंग। यह मानचित्र प्रयोग के माध्यम से भूमण्डलीय स्थिति प्रणाली को निर्देशांकित करता है जो नियंत्रण विभाग पर कार्य करता है और सामग्री पर नियंत्रण रखता है।

दक्ष खेती के कुछ लाभ इस प्रकार है– उच्च उत्पादन, कम लागत में अधिक लाभ, प्राकृतिक संसाधनों का प्रभावशाली इस्तेमाल, सीमित श्रम शक्ति, पर्यावरण सुरक्षा, उत्पादकता और अनुकूलतम लाभ।

अमेरिका, इंग्लैंड, कनाड़ा, फ्रांस, ऑस्ट्रेलिया जैसे विकसित देशों में यह तकनीक 1980 से चलन में है। भारत में इस तकनीक को अपनाने के प्रमुख बाधक हैं– छोटे कृषि क्षेत्र और सीमित निवेश, परन्तु उन्नतिशील किसान, भू–भाग और उद्यान विज्ञान, अनुबन्धित खेती, कृषि अर्थशास्त्रीय और नियति क्षेत्र में दक्ष खेती की स्वीकृति की आशा है।

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पशु पालकों की गम्भीर समस्या– दुधारू पशुओं में बांझपन

मनोज कुमार, के.पी.एस.सांगू, राजबीर सिंह एवं सुखदेव सिंह

हमारा देश भारत एक कृषि प्रधान देश हैं। कृषि के साथ–2 पशुपालन भी आय की दृष्टि से अच्छा वयवसाय है । ये दोनों व्यवसाय एक दूसरे पर पूर्णतया निर्भर हैं । कृषि के बगैर पशुपालन सम्भव नहीं है और पशुपालन के बिना कृषि। सच कहें तो ये दोनों एक दूसरे की रीढ हैं। वैसे तो हमारा देश भारत पिछले 8–10 वर्षों से दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में प्रथम स्थान पर है लेकिन यदि प्रति पशु दुग्ध उत्पादन देखा जाये तो विदेशों की तुलना में काफी कम हैं वैसे तो पशु संख्या के आधार पर हमारे देश मे सबसे अधिक पशु पाले जाते है। प्रति पशु दुग्ध उत्पादन कम होने के कुछ मुख्य कारण हैं एक तो हमारे देश में अशुद्व नस्ल के पशु अधिक संख्या में हैं दूसरा मुख्य कारण है दुधारू पशुओं में बांझपन। पशु के बांझ हो जाने के कारण अच्छी नस्ल के पशु भी कत्लखानों में काट दिये जाते है जिससे न केवल किसानों को भारी आर्थिक क्षति होती है बल्कि श्रेष्ठ जनन द्रव्य भी नष्ट हो जाता है जिससे दिन प्रतिदिन अच्छे पशुओं की संख्या लगातार घट रही है। बांझपन का नाम सुनकर ही पशुपालकों के दिमाग में एक भय सा उत्पन्न हो जाता है। बांझपन से आशय है कि हमारे दुधारू पशु को एक वर्ष मे एक बच्चा देना चाहिये या यों कहें के कि पशु को एक साल के अन्दर ब्याह जाना चाहिये और ये तभी संम्भव है जब पशु ब्याने के 45 –75 दिन के बीच गर्भित हो जाये और गर्भ रूक जाये यदि इस समय या अवधि में पशु गर्मी में नहीं आता हे तो हमें मान लेना चाहिये कि हमारा दुधारू पशु (गाय व भैस) बांझपन की तरफ बढ रहा हैं । कभी कभी तो पशु गर्मी में तो हर 21 दिन बाद आता है लेकिन गर्भ नहीं ठहरता है। ये भी बांझपन का एक लक्षण है। दुधारू पशुओं में बांझपन के अनेक कारण हैं इनमें मुख्य कारण है कि दुधारू पशुओं को आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति न हो पाना क्योंकि दुधारू पशु के दूध में सभी आवश्यक पोषक तत्व (वसा,प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, केल्शियम, मेग्नीशियम, आयरन आदि) मौजूद रहते है । यदि पशु के शरीर में इन पोषक तत्वों की कमी हो जाती है तो पशुओं में अस्थाई बांझपन आ जाता है। दूसरा मुख्य कारण है कि पशुओं के पेट में कीडे हो जाते हें कीडे होने के कारण भी पशुओं में बांझपन आ जाता है।क्योकि जो पोषक तत्व हम अपने पशुओं को खिलाते हैं वे पोषक तत्व कीडे चूस लेते हैं और पशुओं को उनकी आपूर्ति नहीं हो पाती हैं । तीसरा मुख्य कारण है कि दुधारू पशुओं के लिये हरे चारे की उचित व्यवस्था न होना । हरे चारे की कमी के कारण भी पशुओं में बांझपन आ जाता हैं क्योंकि हरे चारे में सभी आवश्यक पोषक तत्व मोजूद रहते हैं जिससे पशुओं को सभी पोषक तत्व मिल जाते हैं। और हरे चारे आसानी से पच भी जाते है। सूखे चारे को पचाने में भी पशु की उर्जा अधिक खर्च होती है। और इनसे पोषक तत्व भी बहुत कम मात्रा में मिल पाते है और कुछ सूखे चारे जैसे घान की पुआल दुघारू पशुओं को खिलाने से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है।इससे दुग्ध उत्पादन में कमी ब कभी कभी पशु की पूंछ सूख जाती है।जिससे पशु पालक को आर्थिक हानि उठानी पडती है। चौथा मुख्य कारण है कि पशु की ओवरी में सिस्ट बन जाते हैं। सिस्ट बनने के कारण पशु गर्मी में तो नियत समय पर आता है लेकिन गर्भ नहीं ठहरता है। इस कारण दुधारू पशु बांझपन का शिकार हो जाता हैं । पांचवा मुख्य कारण है कि पशुओं का उचित व्यायाम न हो पाना । प्रायः देखने में आया है कि कभी कभी पशु में कोई भी कमी स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं देती है लेकिन फिर भी पशु को गर्भ नहीं ठहरता हैं। दुधारू पशओं में बांझपन के निदान के लिये यदि हम कुछ विशेष सावधानी बरते तो इस समस्या का निदान हो सकता हैं। इस समस्या के निराकरण के लिये सबसे पहले हमें दुधारू पशुओं के खानपान व रहन सहन पर घ्यान देना होगा इसके लिये हमें अपने दुधारू पशु को सन्तुलित आहार खिलाने की आवश्यकता है। और सन्तुलित आहार पशु के दुग्ध उत्पादन के आधार पर खिलाना चाहिये । दुधारू भैंस को दो लीटर दूध पर 1 किग्रा राशन व गाय को 2.5 लीटर दूध पर

1– सभी शोध छात्र, ए.बी.सी प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक, ए.बी.सी प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

सूखे चारे से पशओं का गिरता स्वास्थ्य

हरा चारे खिलाने से पशुओं का उत्तम स्वास्थ्य

1 किग्रा राशन खिलाना चाहिये। इसके अलावा 1–1.5 किग्रा राशन जीवन निर्वाह के लिये देना चाहिये। सन्तुलित आहार देने का उचित तरीका अपनाना चाहिये पशु को दाना खिलाने के लिये सुबह का दाना शाम को और शाम का दाना सुबह को भिगो देना चाहिये। पशु पालकों को ध्यान रखना चाहिये कि अधिकतर पशुपालक गाभिन पशु को दाना या अच्छा चारा तब तक ही देते हैं। जब तक पशु दूध देता हैं दूध से हटने के बाद पशु को सूखे चारे या तूड़ी पर छोड देते है। जब कि इस समय पशु को और अधिक अच्छे चारे व दाने की जरूरत हैं क्योंकि यह वह समय है जिसमें पशु को अगले ब्यांत के लिये भी तैयार होना है और पेट में पल रहे बच्चे का भी भरण पोषण करना है। पशुओं के पेट में कीड़े होने के मुख्य लक्षण पशुओं की चमडी खुरदरी, गोबर में बदबू व पशु का दुग्ध उत्पादन पशु की क्षमता के अनुरूप नहीं हो पाता है। पेट में कीड़ों के लिये दुधारू पशु को 60–90 मिलीलीटर एल्बोमार पिला देनी चाहिये और 15–21 दिन के अन्तराल पर दोबारा दवा पिला देनी चाहिये ऐसा करने से पशु के पेट के सभी कीडे नष्ट हो जाते हैं। दुधारू पशु को हरे चारे की आपूर्ति के लिये हरे चारे को इस क्रम में उगाना चाहिये कि वर्ष भर इसकी पूर्ति अच्छे तरीके से होती रहे इसके लिये हमें सस्यक्रम अपनाने की आवश्यकता पड़ेगी। मई जून माह में मक्का, ज्वार, बाजरा आदि सितम्बर अक्टूबर में बरसीम, सरसों, जई , फरबरी मार्च माह में मक्का के साथ लोबिया बोया जा सकता हैं। यदि इस तरीके से हम फसलों को बोयेंगे तो एक चारा समाप्त होने से पहले दूसरा चारा तैयार हो जायेगा। इसके लिये हमें दो चीजों की आवश्यकता पड़ेगी

हरे चारे के रूप में मक्का

बरसीम

जई

एक तो जमीन पर्याप्त हो और दूसरा पानी का साधन अच्छा हो यदि इनमें किसी भी चीज की कमी है तो हम सस्य क्रम को नहीं अपना सकते है। पशु पालकों को घ्यान रखना चाहिये कि ज्वार का हरा चारा बुवाई के बाद जल्दी नहीं खिलाना चाहिये कम अवघि वाले पैाघों में ग्लूकोसाइड होता है जिसे धूरिन भी कहते हैं वह पशु के पेट में जाकर प्रूसिक या हाइड्रोसायनिक अम्ल के रूप में बदल जाता है। ज्वार की बुबाई के 30 दिन की उम्र वाले पैाघों तथा तमीन की सतह के पास नयी शाखाओं में यह अम्ल बहुत अघिक मात्रा में होता है। पेडी वाली फसल भी छोटी अवस्था में पशुओं के लिये जहरीली होती है । फसल को फूल लगने के समय काटा जाना चाहिये । गलूकोसाइड पत्तियों में तनों का अपेक्षा अधिक मात्रा मे होता है । यदि ज्वार की बुवाई के समय ऩत्रजन वाली उर्वरको की अधिक मात्रा खेत मे डाल दी जाये तो कम उम्र वाले पौघों में नाइट्रेट अधिक मात्रा में जमा हो जाता हैं तथा घूरिन की मात्रा भी बढ जाती है। सूडान धास में ग्लूकोसाइड ज्वार की अपेक्षा बहुत कम होता है। 30 दिन के ज्वार के पौधें में ग्लूकोसाइड इतनी अघिक मात्रा में जमा रहती है कि यदि गाय को 4–5 किग्रा हरा चारा खिला दिया जाये तो उसकी मृत्यु तक हो सकती हैं। ऐसी फसल में जिसमें पानी की कमी रही हो घूरिन की मात्रा बढ जाती है। इसलिये पशुपालको को सलाह दी जाती हैं कि वे फसल की अवस्था (40–45 दिन बुवाई के बाद) को घ्यान में रखकर ही पशुओं को खिलायें यदि बरसात न हुई हो तो फसल में कम से कम दो पानी लगाने के बाद ही पशुओं को खिलायें क्योकि पानी लगाने से हाइड्रोसाइनिक अम्ल जडों के माध्यम से घुलकर जमीन में चला जाता है ।

कभी कभी पशुओं की ओवरी में सिस्ट बन जाते हैं सिस्ट बनने का मुख्य कारण है कि पशुओं के ब्याने के बाद पशु की अच्छे से सफाई न हो पाना । ब्याने के 10–15 दिन बाद पशु छटाव (मैला) डालता है। यदि इस समय ओवरी की सफाई अच्छे से नहीं हो पाती है तो पशु की ओवरी में मैल रूकने से सिस्ट बन जाते हैं सिस्ट बनने का मुख्य कारण ये भी है कि जब पशु ब्याहता है तो कभी कभी बच्चा फस जाता है या पशुओं में जेर रूक जाती हैं। इस स्थिति में पशुपालक किसी भी अनभिज्ञ व्यक्ति को बुलाकर जबरदस्ती बच्चे को बाहर खींच लेता है या जेर को भी जबरदस्ती निकालने की कोशिश करता है तो इसमें जेर का कुछ टुकडा टूटकर अन्दर ही रह जाता है जेर अन्दर रहने के कारण इसमें अन्दर ही अन्दर सड़न हो जाती है।यदि अधिक मात्रा में जेर रह जाती है तो सेपटिक बन जाता है और कम मात्रा में रहने पर सिस्ट बनने की सम्भावना बढ़ जाती है। इसलिये पशु जितने आराम से ब्याता हैं पशु और पशुपालक के लिये इतना ही लाभकारी है। यदि पशु जेर डालने में देर करता हे।तो पशु को जेरसाफी , एक्सापार या यूट्रोटोन आदि दवाई पिलाई जा सकती है।इससे पशु जेर जल्दी ही डाल देगा और उसके गर्भाशय की सफाई अच्छी तरीके से हो जायेगी । प्रायः ऐसा देखा गया है कि जिन पशुओं का व्यायाम नहीं होता हैं। उन पशुओं मुं भी बांझपन के लक्षण आ जाते हैं। इसलिये दुघारू पशुओं के लिये व्यायाम बहुत जरूरी है । प्रायः ऐसा देखने में आया है कि जो बांझ पशुओ को पशुपालक छुट्टा छोड देता है कुछ सयम पश्चात वे अपने आप ही ग्याभिन हो जाते है और उनका गर्भ भी ठहर जाता है । व्यायाम के साथ साथ स्वच्छ व ताजा पानी भी बहुत आवश्यक है। भैसों में गर्मी के महीनों में गर्भ नहीं ठहरता है प्रयोगों द्वारा यह सिद्व किया जा चुका है कि यदि भैंसों को 3–4 घन्टे ठन्डे पानी में नहलाया या लेटाया जाये तो इससे भैंसों में सीजनल बांझपन को कुछ हद तक कम किया जा सकता है। दुघारू पशुओं में बांझपन का एक मुख्य कारण ओर है जिन पशुओं के बच्चे मर जाते हैं। उन पशुओं को आक्सीटोसिन इन्जेक्सन लगाकर उनका दूध जबरदस्ती निकाला जाता है। इससे पशु दूध तो दे देता है लेकिन उनमें बांझपन व कभी कभी पशु का अबोरशन (बच्चा गिरा देना) भी हो जाता है। इन सबके साथ साथ दुधारू पशुओं के लिये मिनरल मिक्चर भी बहुत जरूरी हे। मिनरल मिक्चर से पशुओं में सूक्ष्म पोषक तत्वो की आपूर्ति हो जाती है। मिनरल मिक्चर दुधारू पशुओं को 35–40 ग्राम प्रति दिन खिलाना चाहिये ।

दूध से क्रीम निकालने की प्रक्रिया और विभिन्न महत्वपूर्ण बातें:

प्रविन्द्र शर्मा[1], रामकुमार[2] एवं खजान सिंह[2]

दूध कई उपयोगी पदार्थो का मिश्रण है। इसमें वसा, प्रोटीन, चीनी, विटामिन और कई प्रकार की धातुएं होती है। हम मोटे तौर पर दूध को दो हिस्सों में बांट सकते हैं एक तो वसा वाला भाग जिसे वसा कहते है और दूसरा वसा रहित पदार्थ जिसे एस0एम0एफ0 कहते है। दूध की क्रीम में फैट दूध के अनुपात में काफी होता है। दूध से क्रीम निकालने के दो तरीके है एक तो दूध को गर्म करके उसको कुछ समय तक रखने से दूध पर मलाई आ जाती है जिसमें वसा की मात्रा दूध के अनुपात से अधिक होती है और यह तरीके बहुत कम मात्रा में दूध से वसा अलग कर सकते है और इस तरीके से काफी समय भी लगता है।

दूसरा तरीका क्रीम स्प्रेटर से दूध की क्रीम को निकालना, यह एक ऐसी मशीन है जो दूध की वसा का 66 प्रतिशत भाग क्रीम के रूप में दूध से अलग कर देती है। इस मशीन से दूध को काफी तेजी से घुमाया जाता है जिसके कारण वसा जो दूसरे भाग एस.एन.एफ. से हल्की होती है दूध से अलग हो जाती है। यह मशीन बिजली या हाथ से चलाई जाती है। छोटे पैमाने पर दूध का व्यवसाय करने वाले लोग इस मशीन का प्रयोग ज्यादातर करने लगे है। यह मशीन 5000 रूपये (हाथ से चलाने वाली) तक प्राप्त की जा सकती है।

क्रीम स्प्रेटर से अच्छी तरह क्रीम कैसे निकालें

क्रीम स्प्रेटर के सही उपयोग के लिए हमें निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना होगा:–

1. क्रीम स्प्रेटर का सही रूप से किसी भारी आधार के साथ नट बोल्टों की सहायता से पक्का कर देना चाहिए ताकि जब उसे चलाया जाए तो हिले नही। हिलने से स्प्रेटा दूध मे फैट (वसा) की मात्रा अधिक जाती है।
2. स्प्रेटर का हर हिस्सा साफ सुथरा होना चाहिए और इस्तेमाल के बाद इसको खोल कर अच्छी प्रकार से गर्म पानी से धोना और सुखा लेना चाहिए।
3. स्प्रेटर में दूध डालने से पहले यदि दूध को हल्का गर्म किया जाए तो क्रीम में वसा अधिक मात्रा में निकलेगी।
4. क्रीम स्प्रेटर को कम वोल्टेज पर नहीं चलाना चाहिए कम वोल्टेज से उसकी स्पीड में अन्तर आ जाता है और सप्रेटे दूध में अधिक फैट की मात्रा की हानि होती है।
5. स्प्रेटर में गेयर आयल का ध्यान रखना चाहिए और इसे समय–समय पर बदलते रहना चाहिए।
6. स्प्रेटर के विभिन्न हिस्सों को सावधानी और कुशलता से जोड़ना और खोलना चाहिए क्योंकि एक भी डिस्क खराब हो जाती है तो क्रीम स्प्रेटर अच्छी तरह काम नहीं करेगा।

क्रीम स्प्रेटर की कुशलता का मापदंड:–

क्रीम स्प्रेटर कितनी मात्रा में दूध की वसा (फैट) को क्रीम में प्रवर्तित करता है यह पता लगाने के लिए निम्नलिखित फार्मूले का प्रयोग किया जाता है।

प्रतिशत वसा की मात्रा जो क्रीम से प्राप्त हुई

$$= \frac{\text{किलोग्राम में क्रीम की मात्रा} \times \text{किलो वसा एक किलो क्रीम में}}{\text{किलोग्राम में दूध की मात्रा} \times \text{किलो वसा एक किलो दूध में}}$$

1– तकनीकी अधिकारी, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

उदाहरणः—

यदि 100 किलो दूध में जिसमें 7.5 प्रतिशत वसा है हमें क्रीम स्प्रेटर से 14.1 किलोग्राम क्रीम 52.5 प्रतिशत वसा वाली प्राप्त हुई। क्रीम स्प्रेटर की कार्य क्षमता का मूल्यांकन करें।

$$\text{कार्य योग्यता} = \frac{14.1 \times (52.5/100)}{100 \times (7.5/100)} = 68.7$$

क्रीम की मात्रा की गणनाः—

क्रीम स्प्रेटर से निकलने वाली क्रीम की मात्रा (किलोग्राम में) की गणना करने के लिये निम्नलिखित फार्मूले का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{सी} = \text{एम} \times \frac{\text{एफ एम—एफ एस}}{\text{एफ सी—एफ एस}}$$

सी = क्रीम की मात्रा (किलोग्राम)

एम = दूध की मात्रा (किलोग्राम)

एफ एम = दूध का प्रतिशत वसा

एफ एस = स्प्रेटा दूध का प्रतिशत वसा

एफ सी = क्रीम का प्रतिशत वसा

उदाहरणः—

100 किलो दूध जिसका फैट 7 प्रतिशत है उसमें हमें 50 प्रतिशत वाली कितनी क्रीम प्राप्त होगी जब स्प्रेटे दूध में 0.2 प्रतिशत वसा है।

$$\text{सी} = 100 \times \frac{7 - 0.2}{50 - 0.2}$$

$$\text{सी} = 100 \times \frac{6.8}{49.8} = 13.7 \text{ किलो}$$

परिवर्तनशील जलवायु परिप्रेक्ष्य में पशुपालक महिलाओं की परिवर्तित भूमिका

ऋतु चक्रवर्ती[1], आर.सी. उपाध्याय[2], व खजान सिंह[3]

परिवर्तन तो हर क्षेत्र में ही हो रहा है। किसी विद्वान ने सही कहा है कि, ''यदि इस संसार में कुछ चीज़ स्थाई है, तो वो है परिवर्तन।'' यह परिवर्तन कभी तो मनुष्य के परिश्रम द्वारा होता है, कभी उसके दुष्कर्मो से और कभी–कभी, मनुष्य की इसमें कोई भूमिका नही रहती। लेकिन, तब भी, परिवर्तन तो होता ही है। हमारा कृषि क्षेत्र तथा पशुपालक क्षेत्र भी, इस परिवर्तन से अछूते नहीं है और इसका मुख्य कारण है जलवायु परिवर्तन। भारत में देखा गया है कि गत् 100 वर्षो में औसतन 0.60^{0} सेटीग्रेड तापमान बढ़ गया है व आगे भी और बढ़ेगा। इस के कारणवश, पानी की कमी, खाद्यान्न की कमी, चारे की कमी चुनौतियों के रूप में हमारे सामने प्रकट होंगी। इस जलवायु परिवर्तन से हमारे कृषि क्षेत्र पर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में प्रभाव पड़ता है।

क्योंकि हमारा देश कृषि प्रधान है, हम समझ सकते हैं कि भविष्य में हमारी जीविका व खाद्य सुरक्षा डगमगा सकती है। यह जलवायु परिवर्तन भारत जैसे उन्नतिशील देशों के लिए अधिक हानिकारक साबित हो सकता है, क्योंकि अब भी हमारे अधिकांश कृषक व पशुपालक, लघु व सीमांत वर्ग के हैं तथा पूँजी की कमी से ग्रस्त हैं। इस जलवायु के बदलते परिप्रेक्ष्य में, उन्हें अगर अपनी कृषि व डेरी की उत्पादकता को बनाए रखना है, तो आज से ही उन्हें कार्य आरंभ करना होगा। हर्ष की बात यह है कि, भारत सरकार ने बहुत पहले ही इस बदलते जलवायु परिप्रेक्ष्य पर विचार कर, एक राष्ट्र–स्तर की परियोजना चलाई है, जिसके अन्तर्गत किसानों के लाभ हेतु शोध–कार्य व किसानों को जागरूक बनाने का कार्य आरंभ किया गया है। सरकार तो अपना कार्य कर ही रही है–अब हमारे किसानों व किसान–बहनों को अपना कार्य आरंभ करना है– क्योंकि, ताली एक हाथ से तो नहीं बजती। यह बात तो अब सब जानते हैं कि पशुपालन के क्षेत्र में सब से अधिक व अंह भूमिका महिलाओं की होती है। इसलिए, अपने पशुओं को जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से बचाने का, तथा पशु उत्पादन बनाए रखने में भी सब से अंह भूमिका भी महिलाओं की ही होती है। महिलाएं तो हमेशा से ही प्रकृति से जुड़ी रही हैं, वे प्रकृति को, जलवायु को, जलवायु परिवर्तन को समझ सकती है। इससे पहले कि हम महिलाओं की नई व परिवर्तित भूमिका की बात करें, यह जानना जरूरी है कि जलवायु परिवर्तन का हमारे डेरी पशुधन पर क्या प्रभाव हो रहा है–अथवा हो सकता हैः–

- दूध उत्पादन में गिरावट
- प्रजनन क्षमता में कमी
- पशुओं के स्वास्थ्य में गिरावट
- रोग, कीट या परजीवी रोगों में वृद्धि
- पानी पीने की तीव्रता का बढ़ जाना
- खुराक कम हो जाना
- पशुओं का श्वसन दर बढ़ जाना
- पशुओं की वाहक क्षमता में कमी
- विदेशी व संकर नस्ल के पशु अधिक प्रभावित होते है।

इन प्रभावों से अपने पशुओं को बचाने व उनकी उत्पादक क्षमता व स्वास्थ्य को बनाए रखने में, महिलाएं अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं, क्योंकि, पशुपालन का अधिकांश कार्यभार महिलाओं पर निर्भर होता है। इस भूमिका को निभाते हुए, महिलाओं को कुछ ऐसे उपाय अपनाने होंगे, जिन के द्वारा वे अपने पशुओं को बढ़ते तापक्रम के प्रभावों से बचा कर रख सकें, जैसेः

1– वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, डी.सी.पी. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3– प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

- पशुओं को आश्रय / बाड़ों में रखें
- पशुओं को नियमित रूप से नहलाना, पानी में छोड़ना या पानी की उन पर बौछार करना जरूरी है।
- उन्हें ठंडा व साफ पानी पिलाएं– पशु जब चाहें, पानी पी सकें।
- पंखें, पर्दे, कूलर, या छायादार वृक्षों के नीचे पशुओं को रखें।
- फुव्वारे, शीतलन प्रणाली व अन्य साधनों का यथासंभव उपयोग करें।
- हरा चारा खिलाएँ ।
- कीट व परजीवी नियंत्रण प्रणाली का सही–उपयोग करें।
- पशुओं को सही समय पर, संक्रामक रोगों से बचाव के टीके (वैक्सीनेश्न) लगवाएं।

उपरोक्त बातों का अगर महिलाएं ध्यान रखें तो परिवर्तनशील जलवायु परिप्रेक्ष्य में भी वे अपने पशुधन को अच्छी आय का स्त्रोत बनाए रख सकती है।

लेकिन, इस भूमिका को और भी महत्वपूर्ण बनाने के लिए, और भी अधिक सक्रिय बनाने के लिए, हमारी पशुपालक बहनों को कुछ अन्य बातें भी ध्यान में रखनी होगीं व प्रयोग में लानी होंगी, जैसेः–

- केवल पशुपालन में भूमिका निभाना और सक्रिय ढंग से नवीन भूमिका निभाने में जो अंतर है, उसे समझ कर, बहनों को चाहिए कि वे हर प्रयत्न करें अपनी कार्य–कुशलता को बढ़ाने के लिए।
- सबसे पहले, वे अपनी जागरूकता बढाएं व अपने पशुपालन से जुड़े ज्ञान की वृद्धि करती रहें चाहे कृषि व पशुपालन पत्रिकाओं द्वारा, अथवा रेड़ियों या टी.वी. पर प्रसारित कार्यक्रमों द्वारा।
- पशुपालन / डेरी के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लें व पशुपालन के विभिन्न आयामों में अपनी कौशलता, निपुणता बढाएं।
- आजकल तो 'कंप्यूटर युग' है–इसलिए, कंप्यूटर (जो आजकल ग्रामीण क्षेत्र में भी प्रायः हर घर में, कम से कम बच्चों के पास है) चलाना सीखें– इस काम में परिवार के बच्चे ही गुरू बन सकते है। कंप्यूटर चलाना सीखकर, इसका प्रयोग रिकार्ड रखने में व ज्ञान / जानकारी प्राप्त करने में करें। एक महिला सीखे और अन्य पांच महिलाओं को सिखाएं–इससे महिलाओं की पशुपालन में भूमिका और भी सशक्त होगी।
- जब भी कोई विस्तार विभाग का कार्यकर्ता अथवा पशु चिकित्सक आए या बुलाया जाए तो महिलाएं बिना किसी हिचकिचाहट के, जानकारी प्राप्त करें, एक बार में यदि कुछ बात समझ में न आई हो, तो दुबारा पूछें, व अपनी आशंका दूर करें।
- अपने पशुपालन को एक उद्योग का रूप देने की कोशिश करें।
- पशुपालक महिलाएं जो लघु–सीमांत वर्ग के परिवारों की हैं, वे 15–20 इक्कठी होकर स्वयं सहायता समूह गठित कर, पशुपालन में अपनी भूमिका को परिवर्तित कर, लाभ उठा सकती हैं।

इन सभी बातों पर अगर महिलाएं ध्यान दें तो, वे पशुपालन में केवल एक घरेलू मज़दूर या केवल देखभाल करने वाली की भूमिका से हट कर, जैसे अपना घर–बार चलाती है एक प्रबन्धक की तरह, वैसे ही, पशुपालन कार्यो में उनको एक परिवर्तित–एक नवीन भूमिका निभानी पड़ेगी– एक प्रबधंक की। इस लिए अपनी क्षमता, कार्यकुशलता, आत्म–निर्भरता, निर्णय लेने की क्षमता, समय उपलब्धी के अनुसार कार्य करने की कौशलता, ज्ञान इत्यादि को बढ़ाने की आवश्यकता है, इस के साथ–साथ, परिवर्तनशील जलवायु परिप्रेक्ष्य में, पशुधन को जलवायु परिवर्तन के प्रकोप से बचाए रखने व उनकी उत्पादन क्षमता को बनाए रखने के लिए नवीनतम तकनीकियों को अपनाना होगा, जिससे न केवल उनके परिवार की जीविका का स्त्रोत बना रहेगा, अपितु महिलाएं अपनी परिवर्तित भूमिका निभाती हुई, स्वयं अपनी व अपने पड़ोस, ग्राम की नज़रों में भी बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त करेंगी।

गहन डेरी विकास कार्यक्रमः हरियाणा राज्य में स्थिति और उपलब्धि

_f"kdkr flg[1] ch-,l-pnny[2] fu'kkr dekj[3] jkt dekj ;kxh[5] ,o] i!'kkr feJ[4]

वर्तमान में 1.2 लाख ग्रामस्तरीय सहकारी समितियां देश के 265 जिलों में काम कर रही हैं और रोजाना 21 मिलियन लीटर दूध एकत्रित और लग भग 18 मिलियन लीटर दूध का विवणन कर रही है ये राष्ट्रीय दूध ग्रिड (National Milk Grid) का एक हिस्सा है ये ग्रिड पूरे देश में दुग्ध उत्पादकों को 700 कस्बों और शहरों के उपभोक्तओं के साथ जोड़ता है। डेरी क्षेत्र की इस सफलता का श्रेय 1970 में भारत सरकार एवं एन.डी.डी.बी द्वारा शुरू किये गए ऑपरेशन फलड को जाता है।

ऑपरेशन फलड कार्यक्रम विश्व खाद्य कार्यक्रम द्वारा वित्तपोषित किया गया और 1970 से 1996 के बीच तीन चरणों (ऑपरेशन फलड प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय) में शुरू किया गया था इस परियोजना में देश के कुल 500 में से 262 जिलो को शामिल किया गया ऑपरेशन फलड कार्यक्रम में केवल देश के प्रमुख दुग्ध उत्पादक राज्यों को शामिल किया गया

OFP के कार्यान्वयन के दौरान, जिन राज्यों में यह परियोजना शुरू नहीं की गयी थी, वहां डेरी विकास की गतिविधियां राज्य सरकार द्वारा नियंत्रित की गयी उन राज्यों में पूर्वोत्तर राज्य, उड़ीसा इत्यादि शामिल थे।

एकीकृत डेरी विकास परियोजना (Integrated Dairy Development Project)

समय बीतने के साथ जिन राज्यों में ऑपरेशन फलड कार्यक्रम शुरू नहीं हुआ था, वहां की सरकारें सीमित संसाधनों की वजह से डेरी विकास कार्यक्रमों को बहुत ज्यादा बढ़ावा नहीं दे सकी। यह सारे क्षेत्र डेरी विकास में बेहद पिछड़ गए। देश के दूर–दराज के राज्यों, पिछड़े और पहाड़ी क्षेत्रों में डेयरी विकास की जरूरत को ध्यान में रखते हुए, पशुपालन और डेयरी विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने 1992–93 में एकीकृत डेयरी विकास परियोजना (IDDP) का शुभारंभ किया ।

वर्तमान में यह परियोजना 22 राज्यों और संघ शासित क्षेत्र में निम्नलिखित के साथ लागू है।

क) दुधारू पशुओं का विकास

ख) तकनीकी सेवाओं द्वारा दुग्ध उत्पादन में बढ़ोतरी

ग) दूध की खरीद, प्रसंस्करण और विपणन में सुधार के लिए बुनियादी ढ़ांचे का निर्माण

घ) दुग्ध उत्पादकों को लाभकारी मूल्य सुनिश्चित करना

ई) अतिरिक्त आय और रोजगार के अवसर उत्पन्न करना

च) अपेक्षाकृत सुदूर और पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों की समाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार

उक्त उदेश्यों की प्राप्ति के लिए इस योजना में जिन चीजों की परिकल्पना की गयी उनमें प्रसंस्करण और द्रुतशीतन संयंत्रों का निर्माण, ग्राम स्तरीय सहकारी डेयरी समितियों का निर्माण, उनके प्रबंधकीय और परिचालक समर्थन का विस्तार, डेयरी दुग्ध सहाकरी संघ और राज्य सहकारी फेडरेशन से संबद्धता तथा सदस्यों के समर्थन के लिए उन्हें उच्च उत्पादन वाले दुधारू पशु, कृत्रिम गर्भाधान, टीकाकरण एवं किसानों का प्रशिक्षण, चारा किट जैसी सुविधाएं प्रदान की जाती है। इस योजना ने डेयरी विकास, पशुपालन, कृषि और सहकारिता विभाग में उपलब्ध सुविधाओं के एकीकरण पर जोर दिया इस परियोजना के तहत केन्द्र

1– वैज्ञानिक, डी.एस.ई.एम. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– प्रधान वैज्ञानिक, डी.एस.ई.एम. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3– वैज्ञानिक, एल.पी.एम, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
4– वैज्ञानिक, डी.ई. प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
5– शोध छात्र, एल.पी.एम, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

सरकार ने राज्यों को वित्तीय सहायता के रूप में 100 प्रतिशत सहायता अनुदान प्रदान किया

गहन डेयरी विकास कार्यक्रम: (Intensive Dairy Development Programme)

इस योजना को मार्च 2005 के दौरान संशोधित किया गया था और नया नाम गहन डेयरी विकास कार्यक्रम (Intensive Dairy Development Programme) दिया गया। इसका उद्देश्य उन क्षेत्रों में डेयरी विकास गतिविधियों को तेज करना था जो OFP में शामिल नहीं थे तथा जिन जिलों को OFP के दौरान 50 लाख से कम अनुदान प्राप्त हुआ। इस योजना की धनराशि को राज्य डेयरी महासंघ जिला दुग्ध संघ को सौपा गया ।

IDDP योजना के शुरूआत से ही 89 परियोजनाओं को मंजूरी दे दी गयी थी। उन 89 परियोजनाओं में 39 परियोजनाएं पूरी हो चुकी है तथा शेष 50 परियोजनाएं अभी भी कार्यान्वित है। मार्च 2010 के अंत तक इस योजना में 27 राज्यों एवं 1 केंद्र शासित प्रदेश के 209 जिलों को शामिल किया गया जिसमें कुल लागत 507 करोड़ रूपए थी । इस परियोजना में प्रतिदिन 27 लाख लीटर दूध बेचा गया जिसमें विभिन्न 37 राज्यों के 27797 गावों के 29 लाख किसान 49 लाभान्वित हुए। इस योजना के तहत प्रतिदिन 21.38 लाख लीटर दुग्ध शीतन क्षमता एवं 27.44 लाख लीटर दुग्ध प्रसंस्करण क्षमता विकसिकत की गयी।

हरियाणा राज्य में गहन डेरी विकास कार्यक्रम का प्रदर्शन

गहन डेरी विकास कार्यक्रम हरियाणा राज्य में 2768.18 लाख रूपए के व्यय के साथ चार चरणों में लागू किया गया था (तालिका 1) पहला चरण वर्ष 1995–96 में दो जिलों, भिवानी और महेन्द्रगढ़, में लागू किया गया था बाद में यह परियोजना झज्जर, सोनीपत, रेवाड़ी, कुरूक्षेत्र, करनाल, कैथल, और पंचकूला जिलों में भी लागू की गयी कुल मिलाकर इस परियोजना में राज्य के कुल 21 जिलों में से 9 जिलों को कवर किया गया।

तालिका 1 : IDDP के अंतर्गत कबर किए गए जिलों का विवरण (31/03/2010 **को**)

dk;kUo;u d pj.k	Lohdfr o"k	vuekfnr 0;; (Ykk[k :Ik,)	doj fd;s x, ftyk dh l[;k	fTku ftyk dk doj fd;k x;k	fLFkfr
pj.k I	1995-96	203.75	2	fHkokuh] egsUnzx<	iw.k
pj.k II	2005-06	1453.83	3	>Ttj lksuhir] vkSj jsokMh (nksgjk;k ftyk egsUnzx< vkSj fHkokuh)	Pky jgk
pj.k III	2006-07	823.22	3	d:{ks=] djuky vkSj dSFky	Pky jgk
pj.k IV	2006-07	287.38	1	ipdwyk	Pky jgk
dqy		2768.18	9		

लक्ष्य और उपलब्धिया :

परियोजना की उपलब्ध्यिों को–ऑपरेटिव डेयरी कंपनी सोसायटी, किसान सदस्यों का नामांकन, दूध की खरीद और विपणन और द्रुतशीतन क्षमता के विकास के संगठन के संदर्भ में विश्लेषण किया है।

डेयरी सहकारी समितियों को सगठन

इस योजना के अंतर्गत 2325 डेयरी सहकारी समितियों को संगठित करने का लक्ष्य रखा गया था जिनमें 1972 समितियों को विकसित किया गया (तालिका 2) इस कार्यक्रम में 814420 किसान सदस्यों को लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा गया जिसमें 52330 किसान सदस्य लाभान्वित हुए ।

तालिका 2: डेयरी सहकारी समितियों और किसानों के सदस्यों की सख्या संगठित नामांकित

(2010/03/31 पर के रूप में प्रतिवेदिन)

Lkfj;ktuk pj.k	DCS LkxfBr		fdlku lnL; (000)	
	ifj;ktuk dk vr y{;	miyfC/k	ifj;ktuk dk vr y{;	miyfC/k
pj.k I	75	73 (97.33)	3.00	2.76 (92)
pj.k II	1255	1213 (96.65)	51.00	34.1 (66.86)
pj.k III	840	585 (69.64)	23.07	13.44 (58.26)
pj.k IV	155	101 (65.16)	4.35	2.03 (46.67)
dqy	2325	1972 (84.84	81.42	52.33 (64.27)

dk"Bd esa vkadMk Yk{; EkkY;ksa ifr'kr ls lacaf/kr feyrk gS L=ksr % DAHD df"k ea=ky;

डेयरी सहकारी समितियों के संगठन और किसान सदस्यों के नामांकन द्वितीय चरण के दौरान उच्चतम थे जिनमें बाद में गिरावट आयी

दूध खरीद, विपणन और द्रुतशीतन क्षमता :

दूध खरीद, विपणन और द्रुतशीतन क्षमता की उपलब्धियों को तालिका 3 में दिया गया है।

Rkkfydk 3% n/k [kjhn] foi.ku] vkSj nzr'khru dk;Zde ds rgr LFkkfir {kerk
(2010/03/31 ij ds :Ik esa ifrofnr½

Lkfj;ktuk pj.k	n/k dh [kjhn (gtkj yhVj ifr fnu)		n/k foi.ku (gtkj yhVj ifr fnu)		nzr'khru {kerk (gtkj yhVj ifr fnu)	
	ifj;ktuk dk vr y{;	miyfC/k	ifj;ktuk dk vr y{;	miyfC/k	ifj;ktuk dk vr y{;	miyfC/k
pj.k I	40.00	26.92(67.30)	40.00	26.92 (67.30)	40.00	30 (75.00)
pj.k II	190.30	61.00(32.05)	47.72	40.30 (84.45)	152	100 (65.79)
pj.k III	83.00	26.60(32.05)	35.50	15.40 (43.38)	70.5	0 (0.00)
pj.k IV	15.33	5.09(33.20)	15.33	5.09 (33.20)	14.5	4.5 (31.03)
dqy	328.63	119.61(36.40	138.55	87.71 (63.31)	277	134.5(48.56)

dk"Vd esa vkadMk Yk{; EkkY;ksa ifr'kr ls lacaf/kr feyrk gS L=ksr % DAHD df"k ea=ky;

इस परियोजना के तहत कुल दूध खरीद का लक्ष्य 328.63 हजार लीटर प्रतिदिन था जिसमें कुल दूध खरीद 119 हजार लीटर थी 16.1 कुल दूध विपणन का लक्ष्य 138.55 हजार लीटर प्रतिदिन था जिसमें 87 लीटर प्रतिदिन की प्राप्ति हुई 71.1 राज्य के लिए दुग्ध द्रुतशीतन क्षमता का लक्ष्य 277 हजार लीटर प्रतिदिन रखा गया था जिसमें सिर्फ 134 हजार 5 लीटर प्रतिदिन की प्राप्ति हुई जो लक्ष्य का 50 प्रतिशत भी नहीं था। दूध की खरीद एवं विपणन बढ़ाने के लिए द्रुतशीतन क्षमता को बढ़ाए जाने की अत्यंत जरूरत है। प्रथम चरण के लक्ष्य प्राप्ति के मुकाबले बाकी के चरणों में लक्ष्य प्राप्ति में लगातार गिरावट रही है।

निष्कर्ष

यह परियोजना डेयरी सहकारी समितियों के संगठन तथा किसानों के सदस्य के रूप में नामांकन कराने में सफल रही है लेकिन दूध की खरीद के मामले में परियोजना का प्रदर्शन केवल 36 फीसदी उपलब्धियों के साथ खराब रहा है। द्रुतशीतन क्षमता के विकास में भी इसकी उपलब्धि 50 फीसदी से भी कम थी दूध की खरीद बढ़ाना एक महत्वपूर्ण गतिविधि है जो किसानों को सीधे लाभ पहुचाती है दूध की उच्च कीमत एंव बेहतर पशुपालन सेवाएं प्रदान करके डेयरी किसानों में आत्मविश्वास विकसित करने की आवश्यकता है ताकि अधिक से अधिक उत्पादक सदस्यों को दूध की आपूर्ति कर सके। परियोजना को बुनियादी ढ़ाचे के विकास के अलावा परिचालन पहलुओं पर मजबूत होने की जरूरत है।

चिपको आंदोलन

वर्तमान समय देश में जिस रफ्तार से जंगलों की कटाई हो रही है, उसे देखते हुए कई राज्यों में एक बार फिर 'चिपको आंदोलन' शुरू करने की जरूरत है। पर्यावरण संरक्षण की दिशा में चलाए गए आंदोलनों में चिपको आंदोलन का खास महत्व है। जंगलों की अंधाधुध कटाई के खिलाफ लोगों को जागरूक करने के लिए उत्तराखंड के गढ़वाल हिमालय क्षेत्र में 1970 के दशक में यह अहिंसक आंदोलन शुरू किया गया था। इस आंदोलन से जुड़ी सबसे अहम घटना 26 मार्च, 1974 को हुई, जब उत्तराखंड (तत्कालीन उत्तर प्रदेश के) चमोली जिले के रैंणी गांव की किसान महिलाओं के एक समूह ने पेड़ों से चिपककर ठेकेदारों को ललकारा, 'पहले हमें काटो, फिर इन पेड़ों को काटना, 1980 के दशक तक यह आंदोलन पूरे देश में फैला गया।

वैसे इस तरह के आंदोलन का सबसे पहला विवरण 1730 में मिलता है, जब जोधपुर जिले के खेजारली गांव में हरे खेजरी पेड़ो को बचाने के लिए अमृता देवी की अगुवाई में बिश्नोई समुदाय के 363 लोगों ने अपना बलिदान दिया था। माना जाता है कि गढ़वाल के चिपको आंदोलन को इसी से प्रेरणा मिली। चिपको आंदोलन मूल रूप से बन संरक्षण आंदोलन के बजाय एक जीविका आंदोलन था, जिसने आने वाले वक्त में अनेक पर्यावरणविदों और पर्यावरण से जुडे अनेक आंदोलनों को एक मंच प्रदान किया। 1987 में इस आंदोलन को सम्यक जीविका पुरस्कार दिया गया। ग्रामीण महिलोओं का इससे जुड़ना इसकी सबसे खास बात रही है। चिपको आंदोलन से जुड़े प्रमुख लोगों में गौरा देवी, सुदेशा देवी, चंडी प्रसाद भट्ट, सुंदरलाल बहुगुणा, गोबिन्द सिंह रावत, धूम सिंह नेगी, शमशेर सिंह बिष्ट और घनश्याम रतूड़ी शामिल हैं। इस आंदोलन में सराहनीय योगदान के लिए 1982 में चंडी प्रसाद भट्ट को मैगसैसे और सुंदरलाल बहुगुणा को 2009 में पद्म विभूषण पुरस्कार मिलें।

हरे चारे को संरक्षित करने की विधियाँ

बिजेन्द्र सिंह मीना[1], देवेन्द्र कुमार मीना[2] एवं खजान सिंह[3]

पशुओं से अधिकतम दुग्धउत्पादन प्राप्त करने के लिए उन्हें प्रर्याप्त मात्रा में पौष्टिक चारे की आवश्यकता होती है। इन चारों को पशुपालक या तो स्वयं उगाता हैं या फिर कहीं और से खरीद कर लाता है। चारे को अधिकांशतः हरी अवस्था में पशुओं को खिलाया जाता है तथा इसकी अतिरिक्त मात्रा को सुखाकर भविष्य में प्रयोग करने के लिए भंडारण कर लिया जाता है। ताकि चारे की कमी के समय उसका प्रयोग पशुओं को खिलाने के लिए किया जा सके। इस तरह से भंडारण करने से उसमें पोषक तत्व बहुत कम रह जाते है। इसी चारे का भंड़ारण यदि वैज्ञानिक तरीके से किया जाये तो उसकी पौष्टिकता में कोई कमी नहीं आती तथा कुछ खास तरीकों से इस चारे को उपचारित करके रखने से उसकी पौष्टिकता को काफी हद तक बढाया भी जा सकता है। चारों को भंडारण करने की निम्न विधियाँ है।

हे बनानाः हे बनाने के लिए हरे चारे या घास को इतना सुखाया जाता है जिससे कि उसमें नमी कि मात्रा 15–20 प्रतिशत तक ही रह जाए। इससे पादप कोशिकाओं तथा जीवाणुओं की एन्जाइम क्रिया रूक जाती है लेकिन इससे चारे की पौष्टिकता में कमी नहीं आती, हे बनाने के लिए लोबिया, बरसीम, रिजका, लेग्यूम्स तथा ज्वार, नेपियर, जवी, बाजरा, ज्वार, मक्की, गिन्नी, अंजन आदि घासों का प्रयोग किया जाता है लेग्यूम्स घासों में सुपाच्य तत्व अधिक होते हैं तथा इसमें प्रोटीन व विटामिन ए डी व ई भी प्रर्याप्त मात्रा में पाए जाते है। दुग्ध उत्पादन के लिए ये फसलें बहुत उपयुक्त होती हैं। हे बनाने के लिए चारा सुखाने हेतु निन्नलिखित तीन विधियों में से कोई भी विधि अपनायी जा सकती है

चारे को परतों में सुखानाः जब चारे की फसल फूल आने वाली अवस्था में होती है तो उसे काटकर परतों में पूरे खेत में फैला देते हैं तथा बीच–बीच में उसे पलटते रहते हैं जब तक कि उसमें पानी की मात्रा लगभग 15% तक न रह जाए। इसके बाद इसे इकट्ठा कर लिया जाता है तथा ऐसे स्थान पर जहां वर्षा का पानी न आ सके इसका भंडारण कर लिया जाता है।

चारे को गट्ठर में सुखानाः इसमें चारे को काटकर 24 घण्टों तक खेत में पड़ा रहने देते हैं इसके बाद इसे छोटी–छोटी ढेरियों अथवा गट्ठरों में बांध कर पूरे खेत में फैला देते हैं। इन गट्ठरों को बीच–बीच में पलटते रहते हैं जिससे नमी की मात्रा घट कर लगभग 18% तक हो जाए

चारे को तिपाई विधि द्वारा सुखाना –जहां भूमि अधिक गीली रहती हो अथवा जहां वर्षा अधिक होती हो ऐसे स्थानों पर खेतों में तिपाइयां गाढकर चारे की फसलों को उन पर फैला देते हैं इस प्रकार वे भूमि के बिना संपर्क में आए हवा व धुप से सूख जाती है कई स्थानों पर घरों की छत पर भी घासों को सुखा कर हे बनाया जाता है।

चारे का यूरिया द्वारा उपचारः सूखे चारे जैसे भूसा (तूड़ीपुराल आदि में पौष्टिक तत्व लिगनिन के अंदर जकड़े रहते है जोकि पशु के पाचन तन्त्र द्वारा नहीं किए जा सकते इन चारों को कुछ रासायनिक पदार्थो द्वारा उपचार करके इनके पोषक तत्वों को लिगनिन से अलग कर लिया जाता है इसके लिए यूरिया उपचार की विधि सबसे सस्ती तथा उत्तम है।

उपचार की विधि : एक क्विंटल सूखे चारे जैसे पुआल या तूड़ी के लिए चार किलो यूरिये को 50 किलो साफ पानी में घोल बनाते है चारे को समतल तथा कम ऊंचाई वाले स्थान पर 3–4 मीटर की गोलाई में 6 ऊंचाई की तह में फैला कर उस पर यूरिया के घोल का छिड़काव करते हैं चारे को पैरों से अच्छी तरह दबा कर उस पर पुनः सूखे चारे की एक और पर्त बिछा दी जाती है और उस पर यूरिया के घोल का समान रूप से छिड़काव किया जाता है इस प्रकार परत के ऊपर के परत बिछाकर 25 क्विंटल की ढेरी बनाकर उसे एक पोलीथीन की शीट से अच्छी तरह ढक दिया जाता है। यदि पोलीथीन की शीट उपलब्ध न हो तो उपचारित चारे की ढेरी को गुम्बदनुमा बनाते हैं। जिसे ऊपर से पुआल के साथ मिट्टी का लेप लगाकर ढक दिया जाता है

1– वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– शोध छात्र, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3– प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

उपचारित चारे को 3 सप्ताह तक ऐसे ही रखा जाता है जिससे उसमें अमोनिया गैस बनती है जो घटिया चारे को पौष्टिक तथा पाच्य बना देती है इसके बाद इस चारे को पशु को खालिस या फिर हरे चारे के साथ मिलाकर खिलाया जा सकता है

यूरिया उपचार से लाभ

1. उपचारित चारा नरम व स्वादिष्ट होने के कारण पशु उसे खूब चाव से खाते हैं तथा चारा बर्बाद नहीं होता

2. पांच या 6 किलों उपचारित पुआल खिलाने से दुधारू पशुओं में लगभग 1 किलों दूध की वृद्वि हो सकती है

3. यूरिया उपचारित चारे को पशु आहार में सम्मिलित करने से दाने में कमी की जा सकती है जिससे दूध के उत्पादन की लागत कम हो सकती है

4.बछड़े बच्छियों को यूरिया उपचारित चारा खिलाने से उनका वजन तेजी से बढ़ता है तथा वे स्वस्थ दिखायी देते है

सावधानियाँ :

1. यूरिये का घोल साफ पानी में तथा यूरिया की सही मात्रा के साथ बनाना चाहिए

2. घोल में यूरिया पूरी तरह से घुल जाना चाहिए

3. उपचारित चारे को 3 सप्ताह से पहले पशु को कदापि नहीं खिलाना चाहिए

4. यूरिया के घोल का चारे के ऊपर समान रूप से छिड़काव करना चाहिए

साइलेज बनाना : हरा चारा जिसमें नमी की पर्याप्त मात्रा होती है को हवा की अनुपस्थिति में जब किसी गडढे में दवाया जाता है तो किण्वन की क्रिया से वह चारा कुछ समय बाद एक अचार की तरह बन जाता है जिसे साइलेज कहते हैं। हरे चारे की कमी होने पर साइलेज का प्रयोग पशुओं को खिलने के लिए किया जाता हैं।

साइलेज बनाने योग्य फसलें: साइलेज लगभग सभी घासों से अकेले अथवा उनके मिश्रण से बनाया जा सकता है जीन फसलों में घुलनशील कार्बोहाईड्रेटस अधिक मात्रा में होते हैं जैसे कि ज्वार मक्की, गिन्नी घास नेपियर सिटीरिया आदि, साइलेज बनाने के लिऐ उपयुक्त होती है फली दार जिनमें कार्बोहाइड्रेट्स कम तथा नमी की मात्रा अधिक होती हैं को अधिक कार्बोहाइड्रेटस वाली फसलो के साथ मिलाकर अथवा शीरा मिला कर साइलेज के लिए प्रयोग किया जा सकता है साइलेज बनाने के लिए चाहिए साइलेज बनाते समय चारे में नमी की मात्रा 55% होनी चाहिए

साइलेज के गड्ढे साइलोपिट्स: साइलेज जिन गड्ढों में भरा बनाया जाता है उन्हें साइलोपिट्स कहते है। साइलोपिट्स कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे ट्रेन्च साइलो बनाने में सस्ते व आसान होते हैं। आठ फुट गहराई वाले गड्ढे में 4 पशुओं के लिए तीन माह तक का साइलेज बनाया जा सकता है। गड्ढा (साइलो) ऊंचा होना चाहिए तथा इसे भली प्रकार से कूटकर सख्त बना लेना चाहिए। साइलो के फर्श व दीवारें पक्की बनानी चाहिए और यदि ये सभव न हो तो दीवारों की लिपाई भी की जा सकती है।

साइलेज बनाने की विधिः साइलेज बनाने के लिए जिस भी हरे चारे का इस्तेमाल करना हो उसे उपयुक्त अवस्था में खेत से काट कर 2 से 5 सेन्टीमीटर के टुकड़ों में कुटटी बना लेना चाहिए ताकि ज्यादा से ज्यादा चारा साइलो पिट में दबा कर भरा जा सके कुटटी किया हुआ चारा खूब दबा–दबा कर ले जाते हैं। ताकि बरसात का पानी ऊपर न टिक सके फिर इसके ऊपर पोलीथीन की शीट बिछाकर ऊपर से 18–20 सेमी मोटी मिटटी की पर्त बिछा दी जाती है इस परत को गोबर व चिकनी मिटटी से लीप दिया जाता है दरारें पड़ जाने पर उन्हें मिटटी से बन्द करते रहना चाहिए ताकि हवा व पानी गड्ढे में प्रवेश न कर सकें लगभग 45 से 60 दिनों मे साइलेज बन कर तैयार हो जाता है जिसे गड्ढे को एक तरफ से खोलकर मिटटी व पोलोथीन शीट हटाकर आवश्यकतानुसार पशु को खिलाया जा सकता है साइलेज को निकालकर गड्ढे को पुनः पोलीथीन शीट व मिटटी से ढक देना चाहिए तथा धीरे–धीरे पशुओं को इसका स्वाद लग जाने पर इसकी मात्रा 20–30 किलो ग्राम पति पशु तक बढ़ायी जा सकती है ।

सेवा और स्वामिभक्ति की उम्दा मिसाल है : पशुजगत

आर.एस.गौतम[1], तथा रमेश चंद्रा[2]

मनुष्य और पशु का रिश्ता उतना ही पुराना है जितनी पुरानी हमारी सभ्यता। जब खाने और ओढ़ने को कुछ नही था, तब आदि मानव पशु का मांस खाकर ही जिंदा रहता था। पशु की खाल से अपना तन ढंकता था और पशुओं की हड्डियों से ही हथियार बनाकर अपनी रक्षा करता था। अपने वजूद के लिए इस रॉकेट युग में भी मनुष्य जितना पशु पर निर्भर करता है, पशु उतना मनुष्य पर नहीं। जिंदा रहने के लिए पशु की जरूरतें तो नाममात्र की ही है, जिन्हें वह मनुष्य के बिना भी पूरी कर सकता है। खाने के लिए घास चाहिए या मांस दोनों उसे कुदरत की ओर से भरपूर मात्रा में मयस्सर है। जल और थल में करोड़ों जानवर है, जो मनुष्य की संगत में नहीं रहते, लेकिन खूब मजे से जिंदा है। पर मनुष्य की जरूरतों की कोई सीमा नहीं। उसे जरूरत से कहीं ज्यादा सामान अपने ऐशो आराम के लिए चाहिए। लिहाजा पशु तो मनुष्य के बिना रह सकता है और हर दौर में बखूबी रहता आया है। लेकिन तमाम मशीनी और हाई–फाई उपलब्धियों के बावजूद मनुष्य का पशु के बिना रहना असंभव है।

जिंदगी में कदम–कदम पर काम पड़ता है पशु से मनुष्य का। कहीं–कहीं पर तो पशुओं पर निर्भरता इतनी अधिक है कि ये न हों तो इनसानी जिंदगी ठहर सी जाए। जिस्म को चमकाने दमकाने वाले कई क्रीम और लोशन तो बनते ही पशुओं की चर्बी से है। इकॉनोमी में पशुओं के योगदान का हिसाब लगाने बैठे तो बात अरबों में जाकर बैठेगी। वह जीवित अवस्था में तो काम आता ही है, मरे पशु का चमड़ा और हड्डियां भी मनुष्य के कई काम संभाल जाती है।

आलसी या कामचोर नही है जानवर। सो वह हड़ताल पर नहीं जाता, गद्दारी नहीं करता। शरीर में चाबुक पर चाबुक खाकर और तेज भागते घोड़े की तस्वीर। इंसान की दुनिया में मूर्खता और हंसी का पात्र समझे जाने वाले गधे को देखिए। मालिक की खिदमत में सदा सिर झुका रहता हैं उसके जैसा अदब दुनिया में कहां है ? इतनी खामोश खिदमतगारी। इसके बिल्कुल उलट अक्सर पशु के मुकाबले इन्सान का अकृतज्ञ स्वभाव देखने को मिलता है, जैसा कि फिल्म 'मेरा नाम जोकर' के युग के एक गाने की ये लाइनें – 'माल जिसका खाता है उसके ही सीने में घोंपता कटार हैं।' चारा खाकर अमृत समान दूध देने के पशु स्वभाव को गुरूवाणी कहती है – 'पशु मिले चंगयाईआं खल खावे अमृत देई'। इस धरा पर पशु तो अनगिनत है, लेकिन चालाक आदमी ने उन्हीं पशुओं के साथ दोस्ती की पेंग बढ़ाई, उन्ही पशुओं को पाला–पोसा जिनसे उसे कुल फायदा होता है। कुत्ते से लेकर घोड़ा, गाय, बैल, हाथी, ऊंट वगैरह तक किसी की भी मिसाल लीजिए– सब आदमी के कामगार है, उपयोगी कामगार, बल्कि गुलाम कहना चाहिए।

अवसाद में पशु से बेहतर कोई दोस्त नहीं हो सकता। मालिक के प्रति उसके प्रेम प्रदर्शन के पीछे कोई स्वार्थ नहीं होता। लेकिन क्या मनुष्य ने जानवर के उपकारों के लिए उनके प्रति उतनी ही कृतज्ञता प्रकट की ? नहीं कतई नहीं। बल्कि आपस में गाली गलौज के लिए उन्हीं पशुओं के नाम इस्तेमाल किए, जिनसे वह बीसियों काम लेता है। इस अकृतज्ञता को क्या कहा जाए ? वफादारी और कृतज्ञता में पशुओं का कोई सानी नहीं। एक पालतु कुत्ते को घर के बाहर बांध कर आप जितने चैन की नींद सो सकते है, उतने निश्चिंत दस बंदूकधारी रख कर नहीं हो सकते । गली के कुत्ते को एक बासी रोटी ही डाल दीजिए। आपके दरवाजे पर तन कर बैठ जाएगा। मजाल है, कोई दहलीज लांघ पाए।

1– उपनिदेशक (राजभाषा), राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2– वरिष्ठ वैज्ञानिक, एल.पी.एम, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

विकसित तकनीक व उच्च गति द्वारा रेशों का गुणवत्ता मूल्यांकन

श्री चित्रनायक

1. भूमिका

आज विज्ञान और तकनीक ने इतनी उन्नति कर ली है कि उसके अन्वेषणों और आविष्कारों को निहार कर आदमी चमत्कृत हुए बिना नहीं रह पाता। इन अनेक प्रकार के चमत्कारों, अन्य नयी खोजों की ओर बढ़ते कदमों के कारण ही आज के युग को विज्ञान का, उसके चमत्कारों का युग कहा जाने लगा है। विज्ञान का ये चमत्कार कोई दो–चार दिन की उपलब्धि नहीं है, इंसान को यहाँ तक पहुँचने के लिए सालों तक अथक परिश्रम करना पड़ा है। हम पाते है कि स्वतंत्रता–प्राप्ति से पहले आधुनिक विज्ञान के क्षेत्र में भारत की अपनी गति–दिशा लगभग शून्य थी। सूई से लेकर हवाई जहाज, रेलवे इंजन, यहाँ तक कि रेल के डिब्बे भी आयात किये जाते थे। उन आयातित वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से ही देश का परिचय विश्व के आधुनिक विज्ञान के साथ संभव हो पाया। धीरे–धीरे आज स्थिति इतनी बदल चुकी है कि छोटे–बड़े प्रत्येक सामान, यंत्र, उपकरण आदि का निर्माण भारत में होने लगा है। इतना ही नहीं आज भारत कई तरह की मशीनरी, यंत्रों, वैज्ञानिक उपकरणों की वैज्ञानिक तकनीक आदि का आस–पास के अनेक छोटे–बड़े देशों को निर्यात भी करने लगा है। इन उद्योग व कल–कारखाने जिन्हें विश्वस्तरीय उत्पाद निर्मित करने है, विकसित व उच्च तकनीकों को अपनाते हुए निर्माण कार्य करते हैं। तकनीकी विकास के दौरान मूल सिद्धांत नहीं बदलते है, सिर्फ उपयोगिता आधारित तकनीक व विधि में सुधार एवं परिवर्तन होते रहते हैं। समय की बचत, लागत में कमी, अधिक उत्पादन की क्षमता, न्यूनतम व कम मजदूरों की आवश्यकता आदि आजकल उद्योगों की मुख्य जरूरतें हैं। वर्तमान समय की कड़ी प्रतिस्पर्धा के युग में हर उत्पाद की पूरी लागत बाजार में पहुँचने से पहले इतनी ही होनी चाहिए, जिससे निर्माता अपना लाभ भी कमा सके। हर उत्पाद के निर्माण की लागत में कमी हेतु उत्पादन की उच्च गति व उत्पादन क्षमता में वृद्धि दोनों ही आवश्यक हैं। निरंतर एक समान उत्पादों के निर्माण द्वारा भी उत्पादन की गति व मात्रा दोनों में वृद्धि की जा सकती है। मुख्य बात है, इन वस्त्रों व उत्पादों को पूरे विश्व के बाजार में सफलतापूर्वक स्वीकार करने की, जिसके लिए महत्वपूर्ण आवश्यकता है – गुणवत्ता। हर उत्पाद को विश्वव्यापी बनाने हेतु अपने गुणवत्ता में निरंतर सुधार करना परमावश्यक होता है। उत्पादों की गुणवत्ता निरंतर बरकरार भी रहनी चाहिए अन्यथा प्रतिस्पर्धा के मार्केट में अच्छे उत्पादों की कमी बिलकुल नहीं है। विकसित उपकरणों के द्वारा उत्पादों के द्वारा उत्पादों व कच्चे मालों का गुणवत्ता मूल्यांकन करके हर उद्योग उत्तम उत्पाद निर्मित कर लाभ कमा सकता है व निरंतर विकसित हो सकता है।

2. आधुनिक उपकरण बनाम पारम्परिक पद्धति द्वारा परीक्षण

वर्तमान में अधिकतर आधुनिक उपकरण बिजली से चलने वाले इलेक्ट्रानिक उपकरण हैं, जिनके संचालन व परीक्षण की विधि सरल होती है। इनके द्वारा प्रांप्त परिणामों का प्रिंट प्राप्त किया जा सकता है व ये मान सीडी अथवा पेन ड्राइव में संचित भी किए जा सकते हैं, ताकि इनका उपयोग दूसरे कम्प्यूटर आदि पर किया जा सके। इस मानों का कम्प्यूटर द्वारा सांख्यिकी विश्लेषण कर ग्राफ आदि बनाए जा सकते हैं व इन मानों में त्रुटियों आदि की प्रतिशतता आदि निकाली जा सकती है। पारम्परिक पद्धति में तकनीकी विशेषज्ञ बिलकुल सीधे सीधे सिद्धान्तों का प्रयोग कर परीक्षण करते हैं व प्राप्त मान प्रायः सही होते हैं, पर मानवीय गल्तियों की संभावना हमेशा रहती है। आधुनिक व स्वचलित यंत्रों के मान ज्यादा सटीक हो सकते हैं एवं इनसे काफी

वरिष्ठ वैज्ञानिक, केन्द्रीय कपास प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मुंबई

अधिक परीक्षण अपेक्षाकृत काफी कम समय में किए जा सकते हैं, पर परिणामों में अनिश्चितता अधिक रहती है। हर मानों व परीक्षणों का पुनरावलोकन संभव नहीं होता है, जबकि पारम्परिक पद्धति के परीक्षणों व मानों का कई बार अवलोकन कर के ही अंतिम परिणाम व मान प्राप्त किए जाते हैं जिससे परीक्षण के परिणामों की अनिश्चितता अपेक्षाकृत कम होती है। पारम्परिक परीक्षण पद्धति सिद्धांत के अनुसार सरल व आसान हैं एवं इनके परीक्षण को प्रायः शोध कार्यों में उपयोग किया जाता है क्योंकि इनके द्वारा प्राप्त मानों में त्रुटियों की संभावनाओं को कम किया जा सकता है व ये मान विश्वसनीय होते हैं। पारम्परिक पद्धति में परीक्षण हेतु समय अपेक्षाकृत ज्यादा लगता है एवं हर उपकरण व परीक्षण हेतु तकनीकी विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। कई बार ऐसा भी होता है कि विशेषज्ञ तकनीकीगण के आभाव में परीक्षण नहीं हो पाता है। इन परिस्थितियों से निपटने हेतु ही आधुनिक उपकरणों का विकास होता गया जिनके द्वारा समय की बचत के साथ–साथ तकनीकी विशेषज्ञों की जरूरतों में भी कमी हुई । पारम्परिक पद्धति द्वारा प्राप्त मान अपेक्षाकृत कम सटीक हो सकते हैं पर ये मान अत्याधुनिक यंत्रों द्वारा प्राप्त मान से ज्यादा विश्वसनीय होते हैं। पारम्परिक यंत्रों में समय व विशेषज्ञों की आवश्यकता अधिक होती है पर प्रायः इनका रखरखाव आसान होता है व इनके संचालन में विद्युत आदि की कम खपत होती है। इतने आधुनिक अपकरणों व यंत्रों के उपलब्ध होने पर भी कई बार परिणामों की विश्वसनीयता हेतु पारम्परिक पद्धतियों व उपकरणों द्वारा प्राप्त मानों को हीं शोध कार्यों में वरीयता दी जाती है। पारम्परिक उपकरणों के द्वारा परीक्षण करने पर प्राप्त मान अधिक विश्वस्नीय होते है यदि उनमें मानवीय भूल न हो। रेशों के गुणवत्ता परीक्षण करने हेतु पारम्परिक पद्धति में रेशों के हर गुणों के लिए अलग–अलग उपकरण हैं व उनके द्वारा परीक्षण करने हेतु तकनीकी विशेषज्ञ भी।

3. रेशों के गुणवत्ता मूल्यांकन हेतु विकसित तकनीक के उपकरण

उत्तम गुणवत्ता वाले वस्त्रों के निर्माण हेतु जिस प्रकार धागों का एकरूप व मजबूत होना जरूरी है उसी प्रकार उत्तम धागों के निर्माण हेतु रेशों के उत्तम गुणवत्ता भी बहुत महतवपूर्ण है। रेशों की गुणवत्ता उनके चार–पांच मुख्य गुणधर्मों पर निर्भर करती है, साथ ही इनके उत्पादों की गुणवत्ता भी क्रमशः प्रभावित होती है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण है रेशों की लंबाई जो प्रायः मिलीमीटर में दर्शायी जाती है। रेशों की औसत या स्टेपल लंबाई अधिक होने पर उन्हें समानान्तर व एकरूप बनाना सरल होता है, जिनसे कताई प्रक्रिया अच्छी तरह हो पाती है और गांठ रहित धागों का निर्माण हो पाता है। गांठ रहित धागों से वस्त्र भी उत्तम निर्मित होते हैं और वस्त्रों के सतह बिलकुल चिकने व मुलायम होते हैं। रेशों की लंबाई मापने हेतु पारम्परिक उपकरणों का उपयोग जैसे– बेयर सोर्टर पैटर्न विधि, ऑयल प्लेट विधि, हैलो डिस्क, डिजिटल फाइब्रोग्राफ आदि का उपयोग किया जाता था। इनमें बेयर सॉर्टर पैटर्न (चित्र 3) विधि काफी प्रचलित है व आज भी रेशों की लंबाई मापने हेतु काम में लाई जाती है। इस विधि में रेशों को चित्र के अनुसार प्लेट पर उनकी लंबाई के अनुसार लंबे से शुरू करते हुए छोटे रेशों तक का पैटर्न बनाया जाता है। बेयर LL'सॉर्टर पैटर्न द्वारा प्राप्त प्रभावी लंबाई का मान एच.वी.आई. द्वारा प्राप्त 2.5 प्रतिशत स्पान लंबाई के लगभग समान ही होता है।

4. कपास व अन्य रेशों का गुणवत्ता मूल्यांकन

एच.वी.आई (HVI) एक अत्याधुनिक व विकसित संयंत्र है, जिसके द्वारा रेशों के नौ गुण धर्मों को एक साथ मापा जा सकता है व इनके मान का कम्प्यूटर द्वारा प्रिन्ट भी साथ ही साथ प्राप्त किया जा सकता है। इस यंत्र द्वारा परीक्षण की प्रक्रिया को चित्र 1 में दर्शाया गया है। देश के उत्तरी क्षेत्र के उत्तम गुणवत्ता वाले कपास का एच.वी.आई यंत्र द्वारा परीक्षण व गुणवत्ता मान तालिका में दर्शाया गया है। अत्यधिक गति व विकसित तकनीक के एच.वी.आई. द्वारा रेशों के एक साथ मूल्यांकन किए वाले नौ गुणधर्म इस प्रकार है – रेशों की 2.5 प्रतिशत स्टेपल लंबाई, लंबाई की एकरूपता, तन्यता, लंबाई में विस्तार, महीनता, शॉर्ट फाइबर इन्डेक्स, कलर, परिपक्वता (चित्र 2) व रेशों में उपस्थित अशुद्धियां। यह यंत्र विभिन्न पारम्परिक उपकरणों व सिद्धांतों का उत्कृष्ट सम्मिश्रण है। रेशों के गुणवत्ता मूल्यांकन हेतु यह एक अनूठा व पूरे विश्व में उपयोग किया जाने वाला यंत्र है। इसके

निर्माण व कार्य प्रणाली हेतु प्रकाश विज्ञान, मैकेनिकल प्रौद्योगिकी व इलेक्टॉनिक्स विज्ञान का प्रयोग किया जाता है और यह जटिल यंत्र कई सिद्धांतों पर एक साथ काम करते हुए उत्कृष्ट परिणाम देने का परीक्षण करने में सक्षम है। ऊस्टर जेलवेगर कम्पनी द्वारा निर्मित इस यंत्र एच.वी.आई. 900 अर्ध–स्वचलित मशीन में गुणवत्ता मूल्यांकन की सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। वर्तमान में भारत के भी तीन–चार निर्माताओं ने एच.वी.आई. का निर्माण प्रारम्भ किया है एवं व ऊस्टर से काफी कम कीमतों पर उपलब्ध भी हैं। इनकी पूर्णतः स्वचलित मशीन भी उपलब्ध है, पर कुछ तकनीकी विशेषज्ञों के अनुसार अर्ध–स्वचलित मशीन में काम करना ज्यादा सरल व विश्वसनीय पाया गया। वर्तमान समय में टैक्सटाईल उद्योग के लगभग हर मिल, परीक्षण लैब, कपास के शोध संस्थान आदि में एच.वी.आई का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है और ये न सिर्फ भारत बल्कि पूरे विश्व के टेक्सटाइल उद्योग में रेशों के गुणवत्ता मूल्यांकन का प्रमुख आधार हैं। उच्च तकनीक के यंत्रों के द्वारा ही देश के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त रेशों की गुणवत्ता मूल्यांकन आसानी से संभव हो पाता है। वर्तमान में एच.वी.आई. उपकरण द्वारा रेशों की 2.5 प्रतिशत स्टेपल लंबाई के साथ–साथ अन्य कई गुणों का एक साथ मूल्यांकन किया जाता है। कई गुणों का मूल्यांकन एक ही बार में कर पाने की क्षमता के कारण इस यंत्र द्वारा अधिक नमूनों के रेशों का गुणवत्ता एक ही बार में कर पाने की क्षमता के कारण इस यंत्र द्वारा अधिक नमूनों के रेशों का गुणवत्ता मूल्यांकन कम समय में कर पाना संभव हो गया है। इस विशेषता के कारण एच.वी.आई. को हाई वॉल्यूम इन्स्ट्रूमेन्ट (चित्र 1) कहा जाता है। इसमें लंबाई मापने हेतु रेशों की बहुत थोड़ी मात्रा लगभग दो या तीन ग्राम ली जाती है फिर रेशों को कॉम्बिंग करके समांतर किया जाता है, जिसके पश्चात उसे यंत्र में फिक्स किया जाता है। प्रकाशीय पद्धति द्वारा लंबाई की माप की जाती है। प्रकाश की तेज किरणें रेशों से होकर गुजरती हैं व दूसरी ओर स्थित सेन्सर इन किरणों द्वारा रेशों की 50 प्रतिशत स्पान लंबाई व 2.5 प्रतिशत स्पान लंबाई का निर्धारण कर स्क्रीन पर डिस्प्ले करता है। हर रेशों के कम से कम चार या पांच नमूनों का परीक्षण करके औसत लंबाई प्राप्त की जाती है। इस प्रकार प्राप्त मान मे गलती की संभावना नगण्य हो जाती है।

5. एच.वी.आई. यंत्र का मानकीकरण

एच.वी.आई. यंत्र का हमेशा व नियमित तौर पर मानकीकरण किया जाता है ताकि जो भी मान प्राप्त हों वो बिलकुल सही व विश्वसनीय हों तथा गुणवत्ता मूल्यांकन की विश्वसनीयता बरकरार रहे। यंत्रों को परीक्षण की शुरूआत करने के पहले हमेशा उनका मानकीकरण किया जाता है, जो मानक रेशों के परीक्षण द्वारा होता है। मानक नमूने अमेरिका (यू.एस.डी.ए.) व सिरकॉट, मुम्बई द्वारा तैयार किए जाते हैं व पूरे विश्व के टैक्सटाइल परीक्षण लैब की उचित मूल्य पर प्रदान किए जाते है। मानक नमूनों में हर गुणों के मान अंकित होते हैं, जिन्हें हर दिन परीक्षण प्रारम्भ करने से पहले परीक्षण करके सुनिश्चित करना होता है और देखना होता है कि यंत्र मानक नमूनों का परीक्षण करने पर उनके निर्धारित जितना मान दे रहा है या नहीं। अगर यंत्र मानक नमूनों का परीक्षण करने पर उनके अंकित मान से विभिन्न मान बताता है अर्थात यंत्र में कुछ समस्या है और उससे आगे परीक्षण नहीं किया जा सकता। हर दिन परीक्षण के पहले मानक नमूनों का परीक्षण करके उनके मानों की समीक्षा की जाती है और प्राप्त मानों को मानक मानों के साथ मिलाकर समतुल्य पाने पर ही आगे परीक्षण प्रारम्भ किया जाता है। हर बार यंत्र को मानकीकृत करने हेतु दो मानक नमूनों का परीक्षण आवश्यक है। एक वो मानक नमूने जिनके प्रायः हर गुणधर्म न्यूनतम स्तर के हों। जैसे 18–20 मिलीमीटर रेशों की लंबाई का परीक्षण जो लंबाई की श्रेणी में न्यूनतम है, महीनता हेतु 2.8 से 3.3 माइक्रोनेयर तक के रेशे लिए जाते हैं। दूसरा नमूना इस प्रकार किया जाता है जिनके गुणों के मान अधिकतम होते है। इस प्रकार दोनों सीमाओं के मानक नमूनों के परीक्षणों से प्राप्त मानों को मानक नमूनों पर निर्धारित अंकित मानों के समतुल्य पाने पर ही यंत्र का मानकीकरण पूरा माना जाता है व परीक्षण प्रारम्भ होता है। एच.वी.आई द्वारा प्रति घंटे दस से बारह नमूनों के सभी गुणधर्मों का मूल्यांकन किया जा सकता है और वो भी हर नमूनों के पांच–पांच बार परीक्षण कर उनका औसत मान निकालकर। इस प्रकार परीक्षण की गति काफी बढ़ जाती है और कम समय में काफी अधिक कपास व अन्य नमूनों का गुणवत्ता मूल्यांकन संभव हो पाता है। यंत्र के मासिक मानकीकरण हेतु मानक कपासों के बारह–बारह नमूनों का परीक्षण किया जाता है जिससे इनके द्वारा प्राप्त मानों की

विश्वसनीयता बनी रहती है। परीक्षण में भूल कम से कम हो व मान बिलकुल सटीक प्राप्त हों इस हेतु परीक्षण के दौरान बीच में एक बार कभी–कभी मानक नमूनों का परीक्षण कर प्राप्त मोनों को सुनिश्चित करते रहना चाहिये।

6. यंत्रों के मानकीकरण हेतु कपास के मानक नमूने

कपास के मानक नमूनों के मान सम्दर्भ के तौर पर उपयोग में लाए जाते हैं अतः इनकी तैयारी हेंतु विशेष सावधानी बरती जाती है। सबसे पहले रेशों के ब्लो रूम में अच्छी खोला जाता है जिससे उनकी अच्छी तरह सफाई हो जाती है और गंदगी पूरी तरह निकल जाती है। ब्लों रूम के पश्चात प्रत्येक प्रजाति के बीस से चालीस नमूनों का परीक्षण कर उनका मान निकाला जाता है। इन बीस के चालीस मानों का औसत मान निकाला जाता है जो मानक नमूनों का गुणवत्ता मान होते हैं। परीक्षण के दौरान विभिन्न यंत्रों का उपयोग किया जाता है। पारम्परिक व उच्च तकनीक दोनों उपकरणों द्वारा परीक्षण करके मान निकाला जाता है और उनका अध्ययन करके जांचा जाता है कि दोनों उपकरणों व विभिन्न विशेषज्ञों द्वारा प्राप्त मान समतुल्य अर्थात लगभग एक समान हैं या नहीं। सभी सूत्रों से प्राप्त मानों में समानता पाए जाने के पश्चात ही उनका औसत मान निकालकर अंतिम रूप से उन्हें रेशों का गुणवत्ता मान दिया जाता है। इसे प्राप्त करने में पूरी सावधानी बरती जाती है क्योंकि यही मान सन्दर्भ मान के रूप में यंत्रों के मानकीकरण के दौरान उपयोग में लाए जाते हैं।

कपास व अन्य विभिन्न प्रकार के रेशों व इनसे निर्मित धागों की गुणवत्ता व उनका सटीक मूल्यांकन टेक्सटाइल व वस्त्र उद्योग के मूल्य आधार हैं। अलग–अलग किस्मों के रेशों के गुणधर्मों पर ही उनसे निर्मित वस्त्रों की गुणवत्ता, मजबूती, चमक, टिकाऊपन आदि निर्भर करती है। उत्तम, आधुनिक व सुदृढ़ यांत्रिक प्रणाली हर उद्योग का मुख्य स्तंभ होते हैं। उत्पादन हेतु यंत्रों की कार्य क्षमता काफी महत्वपूर्ण होती है। साथ ही यंत्रों का मानकीकरण व यंत्रों का रख–रखाव भी उतना ही महत्वपूर्ण है, ताकि उत्पादों का निर्माण निर्बाद्ध रूप से चलता रहे।

चित्र 1 : एच.वी.आई. यंत्र व कम्प्यूटर द्वारा परीक्षण

चित्र 2 : एच.वी.आई. यंत्र व कम्प्यूटर द्वारा परीक्षण

चित्र 3 : एच.वी.आई. यंत्र व कम्प्यूटर द्वारा परीक्षण

तालिका : उत्तरी क्षेत्र के उत्तम गुणवत्ता वाले कपास का एच.वी.आई यंत्र द्वारा परीक्षण व गुणवत्ता मान।

ट्रायल	स्थान	प्रजाति	2.5 प्रतिशत स्पान लंबाई (मिमी.)	एकरूपता (प्रतिशत)	माइक्रोनेयर	तन्यता मान (3.2 मिमी) (ग्राम टेकस)
उत्तरी क्षेत्र						
Br 04 (a)	श्रीगंगानगर	CSH 3129	30.8	50	3.9	25.9
Br 04 (a)	लुधियाना	F 2228	30.3	51	4.4	24.9
Br 05 (a)	लुधियाना	CSHH 3008	31.3	52	4.6	25.1
Br 05 (a)	लुधियाना	LHH 1424	29.9	53	4.6	24.4
Br 05 (a)	भटिंडा	MRC 7365	31.4	50	4.3	25.8
Br 05 (a)	कानपुर	लोकल चेक	29.9	51	4.3	24.9
अन्य	सिरसा	--	30.0	51	4.3	24.2
अन्य	सिरसा	--	30.0	52	4.6	24.8
अन्य	सिरसा	--	29.7	52	4.0	24.4
अन्य	सिरसा	--	31.0	51	4.7	25.4
अन्य	सिरसा	--	29.1	52	4.4	23.6
अन्य	सिरसा	--	29.0	52	4.6	25.1
अन्य	श्रीगंगानगर	--	31.6	49	3.9	26.9
अन्य	श्रीगंगानगर	--	30.2	53	4.4	25.7

बहुउद्देशीय कृषि मॉडल या एकीकृत खेती प्रारूप – लघु किसानों के लिए मुनाफे का सौदा

एच.एस.जाट[1], एन.पी.एस.यदुवंशी[1], आर.एस.त्रिपाठी[1], आर.एस.पांडे[1], पी.सी शर्मा[1]. एस.के.चौधरी[1], एस.के. सिंह[1], आर.के. यादव[1], एस.एस.कुंडू[2], एन.एस. सिरोही[3], जे.सी. डागर[1], गुरबचन सिंह[4] एवं डी.के. शर्मा[5]

विश्व के कुल भूमि क्षेत्र का 2.4 प्रतिशत एवं कुल जनसंख्या का 18 प्रतिशत हिस्सा भारत देश के अन्तर्गत आता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान महत्वपूर्ण है। देश के कुल सकल घरेलु उत्पाद का लगभग 17 प्रतिशत हिस्सा कृषि से आता है। देश का व्यापक आर्थिक विकास होने के बाद भी सकल घरेलु उत्पाद में कृषि का आर्थिक योगदान तेजी से घट रहा है फिर भी कृषि, जनसंख्या कि दृश्टि से मुख्य आर्थिक क्षेत्र बना हुआ है। कृषि, भारत की कुल जनसंख्या के 58 प्रतिशत से अधिक लोगो की आजीविका का मुख्य स्त्रोत है किन्तु कई समस्याओं की वजह से यह क्षेत्र अच्छी तरह से विकसित नहीं हुआ है। हरित क्रांती के 4 दशक बाद भी लघु किसानों को फसलोत्पादन से होने वाली आय से आजीविका कीं अनिश्चितता बनी रहती है। जिसमें मुख्य देश की बढ़ती जनसंख्या व भाहरीकरण के कारण खेती की जोत का आकार सिकुड़ना व फसलों की कम उत्पादकता है। देश में कृशि की खराब स्थिती भारतीयों के लिए चिंता की बात है। आज देश में 50 प्रतिशत किसानों के पास एक हैक्टेयर से भी कम जमीन है एवं 80 प्रतिशत किसानों के पास दो हैक्टेयर से भी कम जमीन है। लगभग 70–75 प्रतिशत क्षेत्रफल सीमातं एवं लघु किसानों के अर्न्तगत आता है जहाँ पर धान–गेहूँ फसल प्रणाली को अपनाया जाता है। भारत के पंजाब, हरियाणा एवं पश्चिमीं उत्तर प्रदेश से कुल खाद्यान का लगभग 25 प्रतिशत हिस्सा प्राप्त होता है जिस कारण इस क्षेत्र को देश का 'अनाज का कटोरा' कहा जाता है। किन्तु यह क्षेत्र भी कई समस्याओं से ग्रस्त होता जा रहा है जैसे लगातार धान उगाने से भूमिगत जलस्तर काफी नीचे गिरता जा रहा है जो आज चिंता का विषय बन गया है। आजकल धान–गेहूँ फसल प्रणाली के टिकाऊपन पर भी सवालिया निशान लगा हुआ है क्योंकि अधिक पैदावार पाने के लिए खेती की सघन पद्धति को लगातार अपनाने से मृदा में कार्बनिक पदार्थों एवं पोषक तत्वों की कमी, उनका बिगडता संतुलन, भूजल स्तर का नीचे जाना, कीटों, रोगों तथा खरपतवारों का अधिक प्रकोप इत्यादि समस्याएं आ रही है। इसके अतिरिक्त वैश्विक तपन (ग्लोबल वार्मिंग) के प्रभाव से उत्तरी भारत में सर्दी की अवधि कम होती जा रही है और फरवरी माह से ही तापमान में वृद्धि शुरू हो जाती है जिसके फलस्वरूप गेहूँ के उत्पादन में पिछले कुछ वर्षों से कमी आई है। ऐसे में उम्मीद के मुताबिक उपज पाने के लिए किसानों को 5–10 प्रतिशत अधिक खर्च करना पडता है। आने वाले समय में उपरोक्त समस्यायें और अधिक विकराल हो जायेंगी यदि अभी कोई कारगर उपाय नहीं अपनाया गया।

धान–गेहूँ फसल प्रणाली को अपनानें से वर्ष में केवल दो बार फसल की कटाई के समय ही आमदनी प्राप्त होती है जबकि किसान को प्रतिदिन खर्चे के लिए पैसे की आवश्यकता पडती है। मध्य एवं दक्षिण भारत में जहाँ एकल फसल प्रणाली अपनायी जाती है वहाँ फसल में रोग की संम्भावनायें अधिक रहती हैं व अन्य कारणों से भी वांछित उपज प्राप्त नहीं होती है जिसके कारण किसान कर्ज के बोझ तले आ जाता है व उसे चुकाने में असमर्थ हो जाता है। सीमातं एवं लघु किसानों के लिए अपने औसतन 5–6 सदस्यों के परिवार एवं उतने ही पशुओं की दैनिक जरुरतों को पूरा करना एक बडी समस्या है। अतः हमें ऐसी खेती की जरुरत है जो प्राकृतिक संसाघनों की दक्षता में वृद्धि के साथ–साथ किसान की रोजमर्रा की जरुरतों को पूरा कर सके एवं किसान

1 – प्रधान वैज्ञानिक, केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल
2 – प्रधान वैज्ञानिक, पशु पोषण प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
3 – पशु चिकित्सा अधिकारी, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
4 – अध्यक्ष, कृषि वैज्ञानिक चयन मण्डल, भा.कृ. अनु. परिषद, नई दिल्ली
5 – निदेशक, केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल

चित्र 1 : बहुउद्देशीय कृषि मॉडल के विभिन्न घटक

के परिवार के सभी सदस्यों के लिए रोजगार के अवसर प्रदान कर सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रचलित धान–गेहूँ फसल प्रणाली में सुधार किया जाये, फसल विविधीकरण किया जाये और फसलोत्पादन को कृषि के अन्य सहायक व्यवसायों के साथ जोड़ा जाये जिससे कि भूमि की उर्वराशक्ति को कायम रखने और भूमिगत जलस्तर को गिरने से रोका जा सके, साथ ही किसान को वर्ष भर लगातार आमदनी प्राप्त होती रहे। ऐसी स्थिति में बहुउद्देशीय कृषि मॉडल हमारे सामनें उपयुक्त समाधान के रूप में उभर कर आता है।

बहुउद्देशीय कृषि मॉडल, कृषि के विभिन्न घटकों / उद्यमों जो एक दूसरे से संबंधित और परस्पर पूरक होते हैं, से बनी एक समन्वित कृषि तकनीक है। इस तकनीक में किसान फसलोत्पादन (अन्न, चारा, सब्जी, फूल एवं फल उत्पादन) के साथ–साथ कृषि से सम्बंधित अन्य घटकों या उद्यमों / कृषि आधारित उद्योगों जैसे पशुपालन, मछली पालन, मूर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, बत्तख पालन, मशरुम उत्पादन, कम्पोस्ट उत्पादन, सौर उर्जा उत्पादन एवं जैविक गैस (बायो गैस) उत्पादन इत्यादि को अपनाकर उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग करते हुए परिवार की नियमित आमदनी और रोजगार को कई गुणा बढ़ा जा सकता है। बहुउद्देशीय कृषि मॉडल मे एक घटक से बचे हुए उत्पादों तथा अवशेषों को दूसरे घटकों में उपयोग किया जा सकता है जिससे उत्पादन लागत कम होने से शुद्ध लाभ में वृद्धि होती है और रोजगार के अवसर भी बढ़ते हैं। इस मॉडल में फसलों के अवशेषों को कम्पोस्ट बनाने में प्रयोग किया जा सकता है और पशुओं से प्राप्त गोबर का उपयोग गोबर गैस, मछली उत्पादन और वर्मीकम्पोस्ट आदि बनाने में किया जाता है। अतएव बहुउद्देशीय कृषि सीमातं एवं लद्यु किसानों के जीविकोपार्जन की एक नई दिशा प्रदान करता है, साथ ही साथ भूमि एवं जल संसाधनों की गुणवत्ता को भी स्थिरता प्रदान करता है। इस मॉडल के उद्‌देश्य इस प्रकार हैः–

1. बहुउद्देशीय कृषि मॉडल में उपलब्ध फसलों एवं घटकों के विविधीकरण का सुधरी हुई क्षारीय मृदाओं में मुल्यांकन करना।

2. सीमातं एवं लद्यु किसानों हेतु लाभदायक, टिकाऊ एवं पर्यावरण अनुकूल बहुउद्देशीय कृषि मॉडल का विकास करना।

3. फसल विविधीकरण प्रणाली द्वारा जल एवं भूमि की उर्वरता तथा ऊर्जा प्रयोग की दक्षता को बढ़ाना।

4. फसलों के अवशेषों को पूरक घटकों में प्रयोग करके प्रति इकाई उत्पादन लागत कम करना।

बहुउद्देशीय कृषि के घटक

संस्थान प्रक्षेत्र के 2 हैक्टेयर क्षेत्रफल को मुख्य घटकों के लिए 0.2 हैक्टेयर के बराबर आकार के भागों में विभाजित किया गया जिसमें विभिन्न कृषि उत्पादों का उत्पादन निम्नांकित ढंग से किया गया। बहुउद्देशीय कृषि मॉडल के विभिन्नं घटकों को मुख्यतः दो भागों (फसल घटक एवं सहायक घटक) में विभाजित किया गया है।

फसल घटक : 1.8 हैक्टेयर

(1) अन्न उत्पादन (40 प्रतिशत क्षेत्रफल / 0.8 हैक्टेयर) : धान–गेहूँ फसल प्रणाली को अपनाने से भूजल स्तर एवं भूमि की उर्वरा शक्ति में कमी आ रही है क्योंकि इस फसल प्रणाली को अधिक सिंचाइयों एवं पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इस मॉडल में धान–गेहूँ फसल प्रणाली के अलावा 3 अन्य वैकल्पिक फसल प्रणालियों का चयन किया गया है। भूमि उर्वरता को बनाये रखने के लिए धान–गेहूँ फसल प्रणाली के अलावा सभी फसल प्रणालियों में एक दलहनी फसल को सम्मिलित किया गया जो कि वायुमण्डल से नत्रजन लेकर भूमि में नत्रजन का समावेश कर मृदा की उर्वरा शक्ति बढाती है। अन्न उत्पादन के अंतर्गत 4 फसल प्रणालियों को अपनाया गया है जो इस प्रकार है –

1. 10 प्रतिशत / 0.2 हैक्टेयर क्षेत्रफल में धान–गेहूँ फसल प्रणाली
2. 10 प्रतिशत / 0.2 हैक्टेयर क्षेत्रफल में मक्का–गेहूँ–मूंग फसल प्रणाली
3. 10 प्रतिशत / 0.2 हैक्टेयर क्षेत्रफल में सोयाबीन– मक्का फसल प्रणाली
4. 10 प्रतिशत / 0.2 हैक्टेयर क्षेत्रफल में अरहर–सरसों–मक्कचरी फसल प्रणाली

(2) चारा उत्पादन (20 प्रतिशत क्षेत्रफल / 0.4 हैक्टेयर) : मॉडल में सम्मिलित चार बडे पशुओं की वर्षभर हरे चारे की पूर्ति करने के लिए कुल क्षेत्रफल के 20 प्रतिशत क्षेत्रफल में चारा फसलें जैसे खरीफ में ज्वार, बाजरा एवं मक्का और रबी में बरसीम, बरसीम+सरसों और जई को लगाया जाता है। चारा फसलों को इस प्रकार क्रम में लगाया जाता है ताकि हरे चारे की सालभर कमी नही आये।

(3) सब्जी उत्पादन (10 प्रतिशत क्षेत्रफल / 0.2 हैक्टेयर) : पूरे वर्ष सब्जियों की उपलब्धता बनाये रखने के लिये खरीफ के मौसम में टमाटर, घीया, खीरा, भिंडी आदि एवं रबी में पत्ता गोभी, फूल गोभी, टमाटर आदि एव जायद के मौसम में टमाटर, घीया, खीरा आदि सब्जियों को लगाया गया है। बाजार में सब्जियों की कीमत को ध्यान में रखते हुये इन्हे उचित समय पर लगाया गया है।

(4) फूल उत्पादन (10 प्रतिशत क्षेत्रफल / 0.2 हैक्टेयर) : इस उत्पादन घटक के अंर्तगत रबी के मौसम में गेंदा और ग्लेडियोलस को लगाया गया है। खरीफ के मौसम मे कोई उपयुक्त फूल वाली फसल उपलब्ध नहीं होने के कारण बेबीकार्न, की फसल को लगाया गया है। मधुमक्खी पालन के लिए मधुमक्खी के बक्सों को फूल उत्पादन क्षेत्रफल के पास रखा गया है।

(5) फल एवं सब्जी उत्पादन (10 प्रतिशत क्षेत्रफल / 0.2 हैक्टेयर) : इस उत्पादन घटक के अंतर्गत अमरूद की इलाहाबादी सफेदा प्रजाती को 5 मीटर X 5 मीटर की दूरी पर सब्जी वाली फसलों के साथ लगाया गया है। फलों के वृक्षो की कतारों के बीच पडे खाली स्थान पर अन्तर फसल के रुप में मौसमी सब्जियाँ उगाई गयी। सब्जियाँ जैसे टमाटर, भिंडी, पत्ता गोभी, फूल गोभी आदि को लगाया जाता है जहाँ तक हो सके फैलनें वाली सब्जियों (घीया एवं खीरा) को नहीं लगाना चाहिए।

सहायक घटक : 0.2 हैक्टेयर

(1) मछली उत्पादन (10 प्रतिशत क्षेत्रफल / 0.2 हैक्टेयर) : बहुउद्देशीय कृषि मॉडल में मछली पालन 0.2 हैक्टेयर क्षेत्रफल

के तालाब में किया गया है। मछली पालन के साथ–साथ तालाब की मुंडेर (6–8 मीटर चौड़ाई की डाइक्स/बंड) पर फलदार वृक्ष जैसे अमरूद, केला, आँवला एवं करौंदा को लगाया गया है तथा वृक्षों के बीच खाली स्थान पर मौसम के अनुसार विभिन्न सब्जियाँ जैसे पालक, मेथी, मूली, गोभी तथा गर्मी और बरसात में भिंडी, कददू, तरोई, लौकी आदि उगाई जाती है। फलों एवं सब्जियों में सिंचाई सौर ऊर्जा द्वारा चलित ड्रिप तथा ऊंचाई पर स्थित पानी की टंकी से उत्पन्न होने वाले दबाव द्वारा चलित ड्रिप विधि से की गयी है।

इसके अलावा तालाब की मुंडेर के पास बहुउद्देशीय कृषि के अन्य घटकों/व्यवसायों को अपनाया गया है।

(2) पशुपालन

(3) मुर्गी एवं बत्तख पालन

(4) मशरुम उत्पादन

(5) मधुमक्खी पालन

(6) जैविक गैस उत्पादन

(7) कम्पोस्ट उत्पादन एवं सौर ऊर्जा उत्पादन

तालिका 1 : बहुउद्देशीय कृषि मॉडल के विभिन्नं घटकों से प्राप्त आमदनी, क्रियान्वयन लागत एवं शुद्ध आय का लेखा–जोखा।

बहुउद्देशीय कृषि के घटक	औसतन वार्षिक (रू.)		
	कुल आमदनी	क्रियान्वयन लागत	शुद्ध आय
फसल घटक – 1.8 हैक्टेयर			
अन्न उत्पादन – 0.8 हैक्टेयर	70125	17854	52271
चारा उत्पादन – 0.4 हैक्टेयर	33242	6091	27151
फूल उत्पादन – 0.2 हैक्टेयर	14023	4891	9232
सब्जी उत्पादन – 0.2 हैक्टेयर	18027	3901	14126
फल एवं सब्जी उत्पादन – 0 2 हैक्टेयर	20200	3590	16610
उपयोग	**155617 (426)**	**36327 (100)**	**119390 (327)**
सहायक घटक – 0.2 हैक्टेयर			
पशुपालन (दूध+कम्पोस्ट+जैविक गैस)	179122	70231	108891
तालाब की मुंडेर पर फलदार वृक्ष एवं सब्जियाँ	22979	2250	20729
मछली उत्पादन	20662	2566	18096
मुर्गी एवं बत्तख पालन	14828	18397	–3570
मशरुम उत्पादन	2415	1733	682
मधुमक्खी पालन	16178	9449	6728
उपयोग	**256182 (702)**	**104627 (287)**	**151556 (415)**
कुल योग	**411799 (1128**	**140954 (386)**	**270946 (742)**

कोश्ठक में आंकडें औसतन आमदनी प्रतिदिन (रू.) को दर्शाते है।

बहुउद्देशीय कृषि घटकों का उत्पादन

बहुउद्देशीय कृषि मॉडल को अपनाने से फसल घटकों से वर्ष में केवल दो बार फसल की कटाई के समय ही आमदनी प्राप्त होती है जबकी सहायक घटकों से प्रतिदिन आमदनी प्राप्त होती है जोकि किसान की रोजमर्रा की जरुरतों को पुरा करने एवं रोजगार के अवसर प्रदान करने में सहायक होती है। फसल एवं सहायक घटकों से उत्पन्न कुल आमदनी, क्रियान्वयन लागत एवं शुद्ध आमदनी का विवरण तालिका–1 में दर्शाया गया है। 2 हैक्टेयर बहुउद्देशीय कृषि मॉडल को अपनाने से कुल आमदनी 411799 /– रुपये अर्जित हुई जबकि इससे कुल 270946 /– रुपये की शुद्ध आमदनी प्राप्त हुई। परिणामों से यह निश्कर्श निकलता है कि 2 हैक्टेयर के बहुउद्देशिय कृषि मॉडल से प्रतिदिन 742 /– रुपये की शुद्ध आमदनी प्राप्त होती है।

फसल घटकों से कुल आमदनी 155617 /– रुपये अर्जित हुई जबकि इससे प्रतिवर्ष 119390 /– रुपये एवं प्रतिदिन 327 /– रुपये की शुद्ध आमदनी प्राप्त हुई। फल आधारित उत्पादन पद्धति से सबसे अधिक 16610 /– रुपये प्रति 0.2 हैक्टेयर का शुद्ध लाभ मिला। पशु पालन कृषि का एक महत्तवपूर्ण घटक है जिसके द्वारा वर्षभर आमदनी और रोजगार मिलता है। पशु पालन के बिना बहुउद्देशीय कृषि अधूरी प्रतीत होती है इसलिए इसका समावेश करना बेहद जरुरी है। पशुओं से दुग्ध उत्पादन के अलावा गोबर एवं मूत्र भी मिलता है जो कि कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट एवं जैविक गैस इत्यादि बनानें में काम में लिया गया है। पशुओं के लिए दाना मिश्रण को भी फसल उत्पादों से फार्म पर ही बनाया गया है ताकि लागत को कम किया जा सके तथा उसकी गुणवत्ता को बनाये रखा जा सके। सहायक घटकों से कुल आमदनी 256182 /– रुपये अर्जित हुई जबकि इससे प्रतिवर्श 151556 /– रुपये एवं प्रतिदिन 415 /– रुपये की शुद्ध आमदनी प्राप्त हुई है जोकि रोजमर्रा की जरुरतों को पुरा करने के लिए उपयुक्त हो सकती है। सहायक घटकों के तहत पशु पालन के घटकों (दूध+कम्पोस्ट+जैविक गैस) से सबसे अधिक शुद्ध आमदनी 108891 /– रुपये प्राप्त हुई।

बहुउद्देशीय कृषि मॉडल का फसल उत्पादन घटको के साथ तुलनात्मक विश्लेषण :

विभिन्न फसलों का आर्थिक विश्लेषण तालिका–2 में दिखाया गया है। परिणामों से ज्ञात हुआ कि फल आधारित उत्पादन पद्धति से सबसे अधिक 166104 /– रुपये प्रति 2 हैक्टेयर का शुद्ध लाभ मिला जबकि फूल उत्पादन से सबसे कम 92317 /– रुपये प्रति 2 हैक्टेयर का लाभ प्राप्त हुआ। अन्न उत्पादन के अंतर्गत आने वाली सभी 4 फसल प्रणालियों (धान–गेहूँ, मक्का–गेहूँ–मूंग, सोयाबीन–मक्का एवं अरहर–सरसों–मक्कचरी) को अपनाने से 130677 /– रुपये प्रति 2 हैक्टेयर का लाभ प्राप्त हुआ। सभी फसल प्रणालियों के तहत, धान–गेहूँ फसल (174849 /– रुपये प्रति 2 हैक्टेयर) एवं मक्का–गेहूँ–मूंग प्रणाली (164375 /– रुपये प्रति 2 हैक्टेयर) का सबसे अधिक योगदान रहा। बहुउद्देशिय कृषि मॉडल से प्राप्त शुद्ध आमदनी को फसल उत्पादन घटकों से तुलना करने पर यह पाया कि फल एवं सब्जी उत्पादन एवं धान–गेहूँ फसल प्रणाली से लगभग 100000 /– रुपये की शुद्ध आमदनी अधिक प्राप्त हुई।

तालिका 2 : फसल उत्पादन घटकों एवं फसल प्रणालीयों का बहुउद्देशीय कृषि मॉडल के साथ आकलन एवं आर्थिक विश्लेषण (रुपये/2 है.)

फसल उत्पादन घटक	कुल आमदनी	क्रियान्वयन लागत	शुद्ध आमदनी
बहुउद्देशीय कृषि मॉडल	411799	140954	270946
अन्न उत्पादन	175313	44636	130677
चारा उत्पादन	166208	30455	135754
सब्जी उत्पादन	180270	39011	141259
फूल उत्पादन	140230	48913	92317
फल एवं सब्जी उत्पादन	201999	35895	166104
धान–गेहूँ फसल प्रणाली	222197	47349	174849
मक्का–गेहूँ–मूंग फसल प्रणाली	221037	56662	164375

संसाधनों का पुनर्चक्रण/समेकित प्रबन्धन :

बहुउद्देशीय कृषि मॉडल में उपलब्ध विभिन्न संसाधनों को कृषि विविधीकरण प्रणाली में पुनर्चक्रण किया गया ताकि पानी, पोषण और ऊर्जा की दक्षता को बढ़ाया जा सके। पशु, मछलियाँ, मुर्गियां एवं बतखें अपना भोजन चारा और खाद्यान्न फसलों से प्राप्त करते हैं। पशुओं से प्राप्त गोबर का अधिकतर भाग कम्पोस्ट बनाने में इस्तेमाल किया जाता है और उस खाद का उपयोग तालाब के ऊपर बनी मेड़ों पर उगाए गये फल वृक्षों और सब्जी उत्पादन में किया जाता है। तालाब की मेड़ों पर कोई भी रासायनिक खाद का प्रयोग नहीं किया जाता है ताकि जैविक उत्पाद लिया जा सकें। ऐसा करने से मृदा में जैविक कार्बन का प्रतिशत बढा है। गोबर से उत्पन्न बायोगैस एक औसत परिवार के खाना बनाने के लिए पर्याप्त होती है। पशुओं का मूत्र एवं उनके शेड की धोवन को मछलियों के भोजन हेतु तालाब में डाला गया है जिससे तालाब में उपस्थित पादप प्लावकों (फाइटोप्लेंकटोन्स) एवं जीव प्लावकों (जूप्लेंकटोन्स) की संख्या में अच्छी बढ़ोतरी होती है जो मछलियों के लिए खाने का अच्छा स्रोत है। केले के पत्ते, अधिक पक्के फलों और पकी हुयी सब्जियों को भी मछलियों के भोजन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। तालाब का पौष्टिक पानी गर्मी के मौसम में चारा फसलों की सिंचाई में इस्तेमाल किया जाता है। तालाब की मिट्टी को भी खेत में प्रयोग करने से मृदां की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा में सुधार होता है।

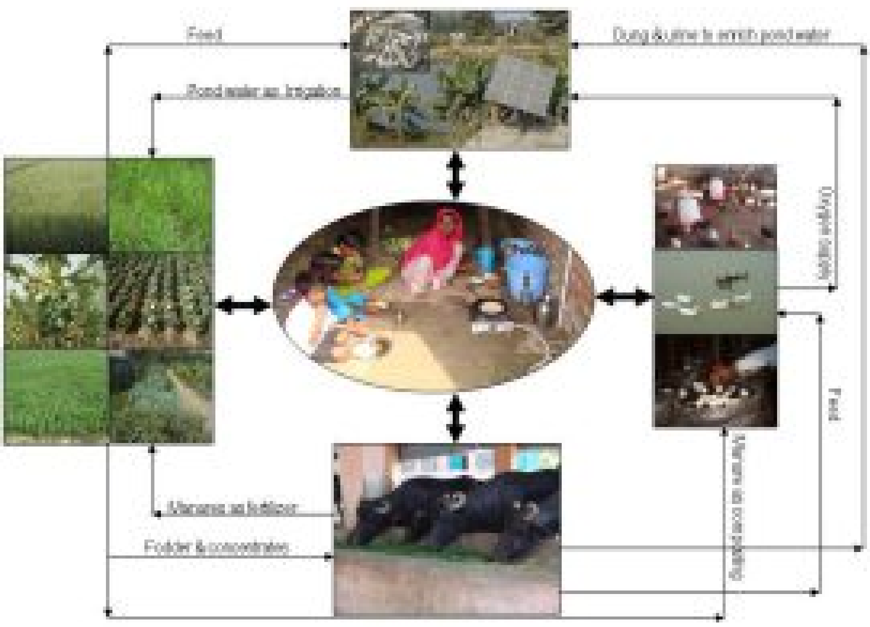

चित्र 2 : बहुउद्देशीय कृषि मॉडल में संसाधनों का पुर्नचक्रण

राजभाषा खंड़

राजभाषा आलेख/कविताएँ

राजभाषा (हिन्दी) का वैश्वीकरण

[1]vkj- ,l- xkSre] [2]dapu pkS/kjh

भाषा मनुष्य की भावात्मक अभिव्यक्ति का साधन है और क्योंकि इसका संबंध भावना से है वस्तुतः यह एक संवदेनशल मुद्दा भी है। भाषा की नियति उसके बोलने वालों के साथ जुड़ी होती है। जहां तक हिंदी भाषा की नियति और विकास का सवाल है तो यह एक विडम्बना ही है कि यद्यपि विश्व में इसके बोलने वालों की संख्या 70 करोड़ है फिर भी शायद किसी भी देश में भाषा को लेकर इतना विवाद नहीं होगा जितना कि भारत में हिंदी की प्रगति कभी रूकी नहीं, कारण यह हमारी जन भाषा रही है। हिंदी को यदि हम भौगोलिक सीमाओं से निकालकर विश्व पटल पर रख कर देखें तो पाएंगें कि समस्त विवादों से घिरे होने के बावजूद हिंदी आज विश्व की प्रधान महत्वपूर्ण भाषाओं में है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि भूमण्डलीकरण के इस युग में विश्व की कई भाषाओं पर निरंतर दबाव पड़ रहा है और इसमें से कई धीरे–धीरे लुप्त भी होती जा रही हैं और कुछ लुप्त होने के कगार पर हैं। पर इस संदर्भ में हिन्दी का अस्तित्व कदापि संकट में नहीं है।

आज प्रतिस्पर्धा युग में हर कोई आगे निकलने की होड़ में है। आगे निकलने के चक्कर में वह अपनी थाती, जिसमें उसके अपने संस्कार, अपनी मातृभाषा, ऐसे कई तत्व शामिल है, उसे भी दॉव पर लगाता जाता है और यह सब अनायास ही होता है। हिन्दी एवं अपनी मातृभाषाओं की परवाह किए बगैर आज हर भारतीय अंग्रेजी की जिस अंधी दौड़ में शामिल हो गया है, वह इसी प्रवृति का नतीजा है। वास्तव में आज के जमाने में प्रतिस्पर्धा के कारण इन सबके लिए रूकने का समय ही कहां है, जिस तरीके से भी तुरन्त एवं तीव्र गति से आगे बढ़ने का मौका मिले, उसे अपनाना ही बुद्धिमानी समझी जाती है। इस युग में हर चीज़ को उत्पादकता के मानदंड पर तौला जाता है। हमें हर समय में, कम साधनों से और कम प्रयासों से सही एवं वांछित प्रतिफल पाना है। यही एक लक्ष्य होता है, उसके लिए लगाए गए साधनों {इनपुट} और प्राप्त फल {आउटपुट} का अनुपात देखा जाता है, कम से कम में अधिकतम करने की कोशिश की जाती है। यही कसौटी है, आज के युग में हर निर्णय की।

बाजारीकरण, यानि कि एक देश का माल दूसरे के देश में खपाना। जरा सा गौर करेंगें तो पाएंगे कि भूमंडलीकरण के इस सिक्के के तो दोनों तरफ ही 'बाजारीकरण' लिखा है। भौतिकता और समृद्धि की इस होड़ में परस्पर सुख–दुख और सहयोग की परवाह भी किसे है? यहां तक तो ठीक है, पर और जरा सा आगे बढ़कर देखें तो खुले बाजार का नजारा साफ नजर आता है, जिसमें विज्ञापनों की डुगडुगी बजाते कितने ही मजमे वाले लोगों का ध्यान खींचने में लगे है।, भले ही वो किसी भी देश के हों, पर थोड़ा सा ध्यान से सुनेंगे तो अधिकतर लाल–पीले–काले मजमे वालों की भाषा वही है जो आप बोलते हैं,

अब तक एक बात तो साफ हो गई है कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया हो या मीडिया अथवा विज्ञापनों का क्षेत्र–इनमें अपनी भाषाओं का उपयोग {जिनमें हिंदी प्रमुख संपर्क भाषा है, जिसे भारत के लगभग 110 करोड़ लोग समझते हैं और हमारे यहां घटते हुए अंग्रेजी समाचार चैनल और अंग्रेजी विज्ञापनों की संख्या में आई भारी कमी भी इस बात को सिद्ध करती हैं। कि भारत से बाहर अंतरराष्ट्रीय समुदाय में अंग्रेजी की पैठ या कंप्यूटरों में फिलहाल इसकी उपयोगिता निर्विवाद है। इस दृष्टि से अंग्रेजी को जानना–समझना समय के अनुरूप है। मगर भारत की अपनी समृद्घ भाषाओं की कीमत पर ऐसा नही होना चाहिए–न तो 'स्टेटस सिंबल' का झूठा दंभ भरने की खातिर और न ही भारतीय भाषाओं पर संप्रेषण के अभाव का मिथ्या आरोप मढ़कर, 'विंग्स ऑफ फायर' में यदि भारत के महामहिम राष्ट्रपति अगले 20 वर्ष में भारत के विश्व शक्ति के रूप में स्थापित होने {या फिर से जगद्गुरू बनने} का सपना देखते हैं तो वह अकारण नहीं है। उसके अन्दर छिपी है भारत की द्वितीय, अनमोल और अमिट

1. उपनिदेशक (रा.भा.), राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
2. तकनीकी अधिकारी, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

संस्कृति की पहचान, जो आज भी विश्व–दर्शन में सर्वोपरि मानी जाती है। यह पहचान हमारी अपनी भाषाओं में संरक्षित है और निश्चय ही उन्हीं में पुनः पल्लवित हो सकेगी।

अतः राजभाषा को जनभाषा का सर्वमान्य रूप देने का जो कार्य काफी वर्षो से चल रहा है और जिसके शुभ परिणाम अब 'आसेतुहिमाचलम' दिखाई देने लगे हैं, उसे 'भिन्नता में एकता' के दर्शन को सामने रखकर राजनीतिक और प्रशासनिक इच्छाशक्ति से भी आगे बढ़ाए जाने की जरूरत है। हिंदी को काफी हद तक संपर्कभाषा के रूप में स्वयं को स्थापित करने में सफलता मिली है अब जरूरत है इसे दिलों की भाषा के रूप में स्थापित करने की।

भूमण्डलीकरण के इस युग में जब देशों की भौगोलिक दूरियां मिटती जा रही हैं समय और गति महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं, बाजार भाषा, व्यापार जगत का मापदण्ड होता जा रहा है तो ऐसे में हिंदी को इन चुनौतियों का सामना करके वास्तविकता से जूझना है और केवल जनभाषा के रूप में भी अपने को स्थापित और सिद्ध करना है। इसमें कोई दो राय नहीं कि हिंदी आज विश्व की प्रधान भाषाओं में से एक है और इसका भूमण्डलीकरण भी हो चुका है पर बावजूद इसके यह जरूरी है कि वह अपनी कमियों को समझे, अपनी लक्ष्य प्राप्ति के लिए सार्थक योजनाएं बनाएं और भूमण्डलीकरण के वर्तमान परिवेश में अपनी संभावनाओं को विकसित करने के लिए प्रयत्नशील रहें।

पर्यावरण बचाएं

कीटनाशकों के प्रयोग में समझदारी अपनाएं,
पर्यावरण संवार कर मानव जीवन स्वस्थ बनाएं।

अंधाधुंध छिड़काव से खाद्य पदार्थ विषैल होंगे,
कीटनाशकों को संतुलित छिड़क कर पर्यावरण बचाएं।

सस्ते सुरक्षित वानस्पतिक कीटनाशक, जैव–नियंत्रण,
या जैविक खेती अपनाकर अच्छी फसल उपजाएं।

वेदों मे वर्णित भारतीय कृषि–पद्धति से कुछ सीखें,
फसलों में पारंपरिक कीट नियंत्रण विधि अपनाएं।

रासायनिक उर्वरक,कीट व खरपतवारनाशी छिड़काव रोकें,
मृदा को ह्रास, क्षारीयता व जल–प्रदूषण से बचाएं।

समग्र कीटनियंत्रण (आई पी एम) पद्धति को अपनाकर,
हम पर्यावरण प्रदूषण विरोधी अभियान चलाएं।

संपूर्ण भूमि विषाक्त हो मानव के लिए खतरा बने,
उससे पहले सचेत हों, प्रयास युद्ध स्तर पर कराएं।

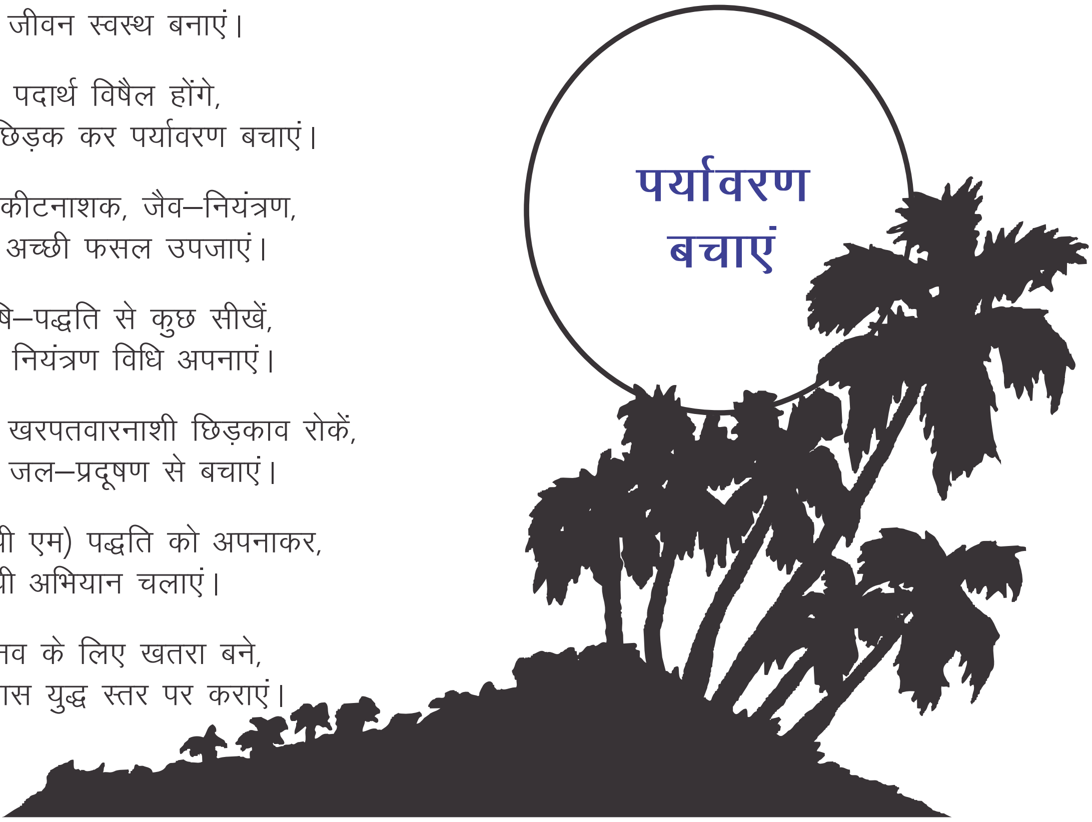

डा. कुमुदिनी नौटियाल
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

दाल

रोटी–दाल गरीब का,
है संपूर्ण आहार,
उसके पूरे स्वास्थ्य का,
यही आधार।
सस्ती रोटी–दाल में,
ताकत है भरपूर,
मेहनतकश को चाहिए,
खाएं दाल जरूर।
इसमें है प्रोटीन का,
बहुत बड़ा भंडार,
करती पुष्ट शरीर को,
देती शक्ति अपार।
यद्यपि हैं प्रोटीन के,
दूजे कई विकल्प,
लेकिन महंगे हैं बहुत,
खा पाते कुछ अल्प।
पौष्टिकता में दाल है,
सर्वोत्तम उपहार,
उत्पादकता में करें,
इसकी चलो सुधार।
दलहन पैदावार में,
जब आयेगी क्रांति,
संकटग्रस्त गरीब को,
तभी मिलेगी शांति।
इसी भावना से हमें,
जुटना है फिलहाल,
खाए दाल गरीब भी,
बनें सभी खुशहाल।

अनूप सिंह सचान
भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान
कानपुर

निवेदन

लड़ना भी एक कला है–
यदि लड़ना सार्थक है
पर मान कर चलो
कि दुनिया गोल है
अपनी धुरी पर
अनवरत–परिक्रमारत
ये पृथ्वी
क्या–क्या नहीं लेती
सूर्य से
जाड़ा गर्मी, बरसात
मौसम किस परिर्वतन
से कम है
लेकिन धुरी नहीं छोड़ती
ये पृथ्वी
नाच–नाच कर अपने
हिस्से की खुशी तय कर लेता
धरती धैर्य है
जानती है कि बिन सूरज
उसका अपना आस्तित्व
भी असंभव है
जो भी हो तुम
तुम्हें जागना ही होगा–ना
अपनी धुरी पर
धुरी पृथ्वी का संबल है
और देश हमारी धुरी

डा. आर. डी. शर्मा
पूर्व निदेशक, दीपा भा.कृ. अनु. परिषद
नई दिल्ली

धरती पर बसा परिवार

वहाँ होता है शोर कभी–कभी,
खुशी कभी–कभी, और गम भी कभी–कभी;
जहाँ पा लेता है मानव जन्म और मृत्यु का साक्ष्य
कि हैं ये प्रकृति के मिथक नहीं, बल्कि जीवन ही के सत्य!
यहाँ हुई नहीं कभी कोई लूट–पाट,
खुशी तो खुशी, लोग लेते हैं गम भी बाँट।
बड़ी मछली खाए छोटी को, ऐसी नही यहाँ मार–धाड़,
समर्थ से बढ़कर मिला है निर्बल ही को प्यार।
बँटते आये हैं वहाँ आपस में सारे छोटे–बड़े काम,
कभी हुई नहीं शिकायत किसी भी कोने में कोई आम।
हर कोई कर डालता है पूरा अपना काम–धाम,
किसी को जरूरत नहीं पड़ी आज तलक,
पुकारने की, नाम।
कभी बाजार में बिका नहीं ऐसा व्यवहार,
बसा जिसके लिए धरती पर घर में परिवार!

पुष्प नायक
मुख्य प्रशासनिक अधिकारी
भा.कृ.अनु.परिषद का अनुसंधान परिसर
पटना (बिहार)

माँ

मचा रही थी वह शोर
कि नटखट पुत्री को हो डर।
बकनी पड़ी उसे गाली,
जब अभद्रता पुत्र ने कर डाली।
उन्हें दिया हैं उसने अपने नाभिनाल से जीवन,
फिर भार उनका किया अपनी गोद में वहन।
दूध पिला–पिला कर उन्हें सूजे उसके सुकोमल स्तन
थके सुस्वादु हाथ उसके परसते–परसते भोजन।
बच्चे हों उसके सर्वश्रेष्ठ, ऐसा ही देखा उसने स्वप्न,
हृदय में सतत् किया अतः उनके ही हितों का संवरण!
शिक्षा उसने ही दी उन्हें, कैसे गुजारें जीवन,
किसी दूसरे पर निर्भर होने से वे घबराएँ इसलिए प्रतिक्षण!
यह सब है सत्य तथ्य,
धरती पर एक माँ का जीवनकथ्य!

भोली –भोली गाय हमारी

भोली –भाली गाय हमारी, लगती है,
यह सबको प्यारी,
इसकी है कुछ बात निराली।
दूध बहुत यह देती है ।।

सुन्दर –सुन्दर बछड़े देकर
बदले में क्या लेती हैं ?
भूसा –चोकर जो कुछ मिलता
बड़े प्रेम से खाती है ।

इसका दूध बड़ा ही मीठा
जो खाये बलवान बने।
दूध से इसके बनते दही, पेड़ा और मक्खन,
घी से तगड़ी जान बने।

बड़े–बड़े कर वह काम
माता का सच्चा पूत बनें
मर कर भी खाल से इसके
चप्पल जूते बनते हैं।

गड़े ना कांटा लगे ना ठोकर
जब हम इसे पहनते हैं,
भोली –भाली गाय हमारी
लगती है यह सबको प्यारी।

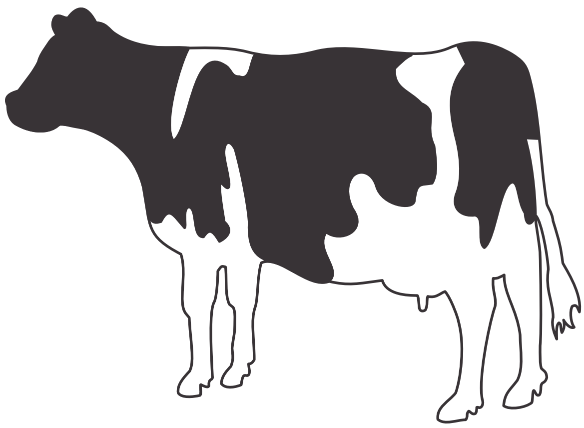

सुधीर कुमार
सहायक प्रध्यापक,
शेर–ए–कश्मीर कृषि एवं
प्रौद्योगिक वि.वि. जम्मू

चारा

प्रकृति की एक धरोहर दर्शाता चारा ।
हरे–भरे खेतों में हरियाली बिखराता चारा ।।

पर्वतों, जंगलों, पेड़ों व खेतों से मिलता चारा ।
पौधे तो पौधे, अपितु अनाजों का मिश्रण देता चारा ।।

कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, शुष्क पदार्थ ।
एवं तत्वों से अपना गुण कहलाता चारा ।।

स्वाद दिलाता, भूख मिटाता, जानवरों को पोषित करता चारा ।
एक वर्षीय, द्विवर्षीय, बहुवर्षीय होकर पशु जीवन देता चारा ।।

रफेज हो या कन्सन्ट्रेट ये सब उपलब्ध कराता चारा ।
साइलेज व हे बनकर बे समय में पशु पोषित करता चारा ।।

पशु पालन अपनाने में किसानों का साथ निभाता चारा ।
फसल चक्र से मिट्टी को उपजाऊ बनाता चारा ।।

नवजात शिशु को माँ से खीस प्राप्त कराता चारा ।
दुग्ध एवं दुग्ध उत्पादो की सुगन्ध चहुॅं ओर फैलाता चारा ।।

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के 850 एकड़ भूमि से दुग्ध उत्पादकता बढ़ाता चारा ।
बीज उत्पादन करके देश का आर्थिक विकास बढ़ाता चारा ।।

यही इसकी गुणगान है, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान की ।
एक पहचान है, नित्य फार्म से पशुशाला तक आता चारा ।।

ये गो माता तू धन्य है ।
जिससे हमें अमृत जैसा दूध पिलाता चारा ।।

मगन सिंह
वरिष्ठ वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

मातरः सर्वभूतानाम् गावः सर्व सुखप्रदा

मन्दिर–मस्जिद दूर हैं, कठिन जाप हरि नाम।
श्री चरणों में गाय के, बसते चारों धाम।।
सेवा खातिर गाय की, ग्वाल बने नंदलाल।
सेवा करिए गाय की, चलो कृष्ण की चाल।।
माता समझो गाय को, होवेगा कल्याण।
माता के आशीष से, सुख पावे सन्तान।।
दूध–दही, घी गाय का, होता अमृत पान।
गोबर व गऊ मूत्र हैं, औषध का सामान।।
पहचानो गुण गाय के, अतुलित अपराम् पार।
महिमा इसकी भूलकर, दूःखी फिरे संसार।।
कहिए सूरज के बिना, क्या मुमकिन है धूप।
बिना गैया के सोचिए, गोपाला का रूप।।
जपिए हरि का नाम तो, मिलता है आनन्द।
सेवा करना गाय की, सचमुच परमानन्द।।
फसलें भी भरपूर हों, ना हो धन बर्बाद।
पेस्टीसाइड छोड़ के डालों गोबर खाद।।
तन–मन को शीतल करे,कंचन कर दे देह।
दही–छाछ पी गाय की, कटे रोग मधुमेह।।
गौ–माता अब देखिए, खाती पॉलीथीन।
इसीलिए तो हो गई, हालत अपनी दीन।।
वास्तु दोष का समझ लें, सुन्दर सरल उपाय।
सेवा करिए गाय की, सारे दोष मिटाय।।
आँख मूँद कर कीजिए, गौ– औषध उपचार।
ना समझो हैं टोटका, है ग्रन्थों का सार।।
काल–सर्प व महादशा, शनि की टेढ़ी चाल।
सेवा करिए गाए की, सुधरें बिगड़े हाल।।
गाय दया का रूप है, समझो रे इंसान।
हिन्दू–मूस्लिम, सिख–बुद्ध, दूधो एक समान।।
आँखें उसकी देखिए, हैं बेबस लाचार।
गाय मईया ढँढती, अपने घर का द्वार।।
भोजन में अब स्वाद को,कैसे पाते लोग।
पहली रोटी गाय की, कौन लगाता भोग।।
हर बंदा गर गाय को, समझे मात समान।
हो पाएगा फिर तभी, जीवन में उत्थान।।
देखा सबने कृष्ण को, आया कभी खयाल।
देखो भगवन आप क्यूँ, बने हुए गोपाल।।
गौ–माता के शीश को, छूकर देखें आप।
समझोगे आनन्द को, कट जाएंगे पाप।।
गौ–माता के नाम पर, जब भी करिए दान।
तेरा तुझको है दिया, मत करना अभिमान।।

चन्द्रशेखर
श्री काया कल्प मन्दिर, 235, मॉडल टाउन, तोशाम रोड, हिसार

राजभाषा मास –2012–13

संस्थान में विगत वर्षो की भांति इस वर्ष भी राजभाषा मास 14 सितम्बर–09 नवम्बर–2012 तक आयोजित किया गया हैं इस मास के अन्तर्गत संस्थान के वैज्ञानिक, तकनीकी तथा प्रशासनिक कार्मिकों को भा0कृ0अनु0परिषद और राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार राजभाषा {हिन्दी} में सरकारी काम–काज निपटाने एवं राजभाषा में रूचि एवं जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से तीन प्रतियोगिताएं आयोजित की गयी।

सर्वप्रथम भारतीय संविधान में 14 सितम्बर,1949 को राजभाषा {हिन्दी} को संघ सरकार की राजभाषा (Official Language Of the Union) का दर्जा प्राप्त हुआ खास तौर से इस दिवस को भारतीय भाषाओं का आजादी दिवस भी कहा जाता है क्योंकि इस दिन ही भारतीय भाषाओं में सरकारी काम–काज करने के बारे में विस्तार से विचार–विमर्श हुआ। इस दिन की यादगार में संस्थान के वैज्ञानिक, तकनीकी कार्मिकों तथा छात्रों हेतु शोध–पत्र पोस्टर–प्रदर्शन प्रतियोगिता आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों, छात्रों ने सोलह नवीनतम शोध विषयों पर पोस्टर प्रदर्शित किए गए। इस प्रतियोगिता में लगभग 40 कार्मिकों तथा छात्रों का सराहनीय योगदान रहा। प्रतियोगिता के बाद विश्व हिन्दी दिवस समारोह आयोजित किया गया। इस अवसर पर माननीय केन्द्रीय गृह मंत्री जी का संदेश भी पढ़ा गया। मुख्य अतिथि तथा निर्णायक मंडल के सभी सदस्यों ने प्रदर्शित किए गए पोस्टरों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। संस्थान के सभी कार्मिकों हेतु दैनिक पत्राचार बढ़ाने के उद्देश्य टिप्पण एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता दिनांक 21.9.2012 को आयोजित की गयी। इस प्रतियोगिता में वैज्ञानिक तथा अधिकारी स्तर सहित 18 कार्मिकों ने भाग लिया।

08 नवम्बर,2012 को मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह में बतौर मुख्य अतिथि श्री हरीश चन्द्र जोशी, निदेशक (राजभाषा) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली ने राजभाषा (हिन्दी) की संवैधानिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए संस्थान के वैज्ञानिकों एवं अन्य कार्मिकों से संस्थान की कृषि विज्ञान संबंधी अनुसंधानों एवं उपलब्धियों से कृषक समुदाय को लाभान्वित कराने हेतु राजभाषा (हिन्दी)के माध्यम से परिचित कराने का आह्वान किया। समारोह की अध्यक्षता करते हुए संस्थान निदेशक ने संस्थान के वैज्ञानिकों, तकनीशियन तथा अन्य कार्मिकों से प्रतिदिन सरकारी काम–काज अधिक से अधिक राजभाषा (हिन्दी) में निपटाने का अनुरोध किया। निदेशक महोदय ने यह भी कहा कि संस्थान के कार्मिकों को राजभाषा मास के अन्तर्गत आयोजित की जाने वाली प्रतियोगिताओं तथा पुरस्कार संबंधी योजनाओं में अधिक से अधिक भाग लेना चाहिए जिससे इन प्रतियोगिताओं में भाग लेने से कार्मिकों की राजभाषा में काम करने की रूचि बढ़ने के साथ–साथ हिन्दी में किए गये कार्य की मात्रा भी बढ़ेगी, उन्होंने संस्थान के राजभाषा एकक द्वारा किये गये कार्यो की भी सराहना की। इन तीनों प्रतियोगिताओं में प्रथम/द्वितीय/तृतीय तथा प्रोत्साहन प्राप्त करने वाले कार्मिकों को पुरस्कार एवं प्रमाण–पत्र श्री हरीश चन्द्र जोशी, निदेशक (राजभाषा) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के करकमलों द्वारा प्रदत्त किए गए। उपनिदेशक {राजभाषा} द्वारा संस्थान के सभी वैज्ञानिकों, तकनीशियनों तथा अन्य कार्मिकों एवं मूल्यांकन समिति के अध्यक्षों तथा सदस्यों के प्रति आभार व्यक्त किया गया।

देश के सबसे बड़े भूभाग में बोली जाने वाली हिन्दी ही राष्ट्रभाषा की अधिकारिणी है।

सुभाष चन्द्र बोस

संघ सरकार की राजभाषा नीति अनुपालन संबंधी कार्यकलापों का विवरण (2012–13)

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठकें नियमित रूप से आयोजित की जाती हैं। इस वर्ष में भी चार तिमाही बैठकें आयोजित की गई तथा बैठकों में लिए गए निर्णयों पर अनुवर्ती कार्रवाई सुनिश्चित की गई।

- मूल रूप से हिन्दी में टिप्पण/मसौदा लेखन प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत वर्ष 2011–12 के लिए संस्थान के प्रशासनिक/तकनीशियन तथा चतुर्थ श्रेणी स्टाफ के 09 कार्मिकों को पुरस्कृत किया गया।
- संस्थान में गत वर्षो की भांति इस वर्ष भी 14 सितम्बर से 08 नवम्बर 2012 तक राजभाषा मास का आयोजन किया गया। जिसमें वैज्ञानिकों एवं तकनीकी वर्ग के कार्मिकों तथा शोध छात्रों हेतु 'शोधपत्र/पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता आयोजित की गई। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य कार्यालयों हेतु 'राजभाषा ज्ञान प्रतियोगिता' आयोजित की गई। 08/11/2012 को मुख्य राजभाषा समारोह एवं पुरस्कार वितरण समारोह संपन्न हुआ जिसमें विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेता प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार एवं प्रमाणपत्र प्रदान किए गए।
- नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल की छःमाही बैठकों में संस्थानों के अधिकारियों द्वारा नियमित रूप से भाग लिया जाता है। जून, 2012 व दिसम्बर, 2012 में आयोजित बैठकों में संस्थान की ओर से श्री जे.के. केवलरमानी, संयुक्त निदेशक {प्रशासन} श्री आर.एस. गौतम उपनिदेशक {राजभाषा} एवं श्रीमती कंचन चौधरी, तकनीकी अधिकारी ने भाग लिया। इन बैठकों की अध्यक्षता डा. ए. के. श्रीवास्तव, निदेशक, एन.डी.आर.आई. द्वारा की गई।
- संस्थान के वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय लेख, छात्रों के शोध सारांश, संस्थान की आडिट रिपोर्ट, वार्षिक प्रतिवेदन, प्रशासनिक कार्य, विभिन्न समारोहों की प्रेस विज्ञप्तियां, भाषण, अभिभाषण एवं अनेक प्रकार का अनुवाद कार्य इस एकक द्वारा किया जाता है।

उपलब्धियां/पुरस्कार व सम्मानः

उच्च विशेषाधिकार प्राप्त संसदीय राजभाषा समिति {कमेटी ऑफ पार्लियामेंट ऑन ओ.एल} के निर्देशानुसार गठित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल द्वारा संस्थान में किए जा रहें राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी उल्लेखनीय कार्यकलापों हेतु करनाल स्थित लगभग 70 केन्द्रीय कार्यालयों के मध्य प्रथम राजभाषा पुरस्कार, 2011–12 के लिए श्री सी.के.तिवारी, उपमहाप्रबन्धक, इंडियन ऑयल कार्पोरेशन लिमि0, पानीपत रिफाइनरी, पानीपत के कर कमलों द्वारा दिनांक 27/6/2012 को प्रदान किया गया। यह पुरस्कार डा. जी.आर.पाटिल, कार्यवाहक निदेशक, श्री आर.एस.गौतम उप निदेशक{राजभाषा} तथा राजभाषा एकक के स्टाफ ने प्राप्त किया। संस्थान को यह प्रतिष्ठित पुरस्कार पहले भी 5 बार प्राप्त हो चुका है। पुरस्कार प्राप्ति पर संस्थान के निदेशक महोदय ने राजभाषा एकक द्वारा किए जा रहे राजभाषा संबंधी प्रयासों की सराहना करते हुए, समस्त स्टाफ को बधाई दी।

राष्ट्रीय राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा आयोजित निदेशकों के सम्मेलन अवसर पर (19 मार्च, 2013) को सम्मेलन के प्रथम सत्र में पुरस्कार वितरित किए गए। 'राष्ट्रीय राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार योजना' के तहत राजभाषा कार्यान्वयन क्षेत्र में सराहनीय योगदान के लिए राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल को वर्ष 2011–12 के लिए **द्वितीय** राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यह पुरस्कार डा. एम.एस स्वामीनाथन माननीय सांसद राज्य सभा, डा. एस. अय्यप्पन, सचिव, डेयर एवम् महानिदेशक, भा.कृ.अनु.परि. तथा अध्यक्ष, कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल, नई दिल्ली के कर कमलों द्वारा प्रदान किया गया। संस्थान की ओर से यह पुरस्कार डा. ए.के. श्रीवास्तव निदेशक प्रभारी राजभाषा एकक, श्री आर.एस. गौतम, उप. निदेशक (राजभाषा) तथा श्रीमती कंचन चौधरी तक. अधिकारी ने प्राप्त किया। उल्लेखनीय है कि अति–प्रतिष्ठित पुरस्कार विगत 12 वर्षो में एन.डी.आर आई को पांचवी बार प्राप्त हुआ है। इस क्रम में गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी कृषि पत्रिका पुरस्कार योजना के तहत संस्थान की पत्रिका 'दुग्ध–गंगा को प्रोत्साहन पुरस्कार के रूप में शील्ड तथा प्रशस्ति पत्र प्रदत्त किया गया।

संस्थान में समस्त प्रशासनिक सरकारी काम–काज राजभाषा हिन्दी में निपटाने का पूरा प्रयास किया जा रहा है।

राजभाषा कार्यकलापों की झलकियां

विश्व हिन्दी दिवस आयोजन के अवसर पर(14.09.2012) शोध–पत्र प्रदर्शन प्रतियोगिता का डा.आर.एस. शर्मा,प्राचार्य, राजकीय पी.जी. कालेज करनाल बतौर मुख्य अथिति उद्घाटन करते हुए।

विश्व हिन्दी दिवस आयोजन के अवसर पर(14.09.2012) शोध–पत्र प्रदर्शन प्रतियोगिता का डा.आर.एस. शर्मा,प्राचार्य, राजकीय पी.जी. कालेज करनाल बतौर मुख्य अथिति प्रतियोगिता मे लगाए पोस्टरो का अवलोकन करते हुए, उनके साथ है निर्णायक मंडल के सदस्यगण।

विश्व हिन्दी दिवस आयोजन के अवसर पर (14.09. 2012) संस्थान के स्टाफ को मुख्य अथिति महोदय पुरस्कृत करते हुए।

विश्व हिन्दी दिवस आयोजन के अवसर पर(14.09.2012)संस्थान के स्टाफ को मुख्य अथिति महोदय स्टाफ पुरस्कृत करते हुए।

विश्व हिन्दी दिवस आयोजन के अवसर पर(14.09.2012) डा.ए.ए.पटेल प्रभारी निदेशक, डा.आर.एस. शर्मा,प्राचार्य, राजकीय पी.जी. कालेज करनाल को स्मृति चिन्ह प्रदान करते हुए।

राजभाषा मास समारोह के अन्तर्गत भाषण प्रतियोगिता के आयोजन (25.09.2012) अवसर पर मंचासीन श्री जे.के.केवलरमानी संयुक्त निदेशक (प्रशासन), डा. खजान सिंह, प्रभारी राजभाषा एकक तथा श्री आर.एस. गौतम, उपनिदेशक (राजभाषा)

राजभाषा मास समारोह के अन्तर्गत भाषण प्रतियोगिता के आयोजन (25.09.2012) अवसर पर डा.आर.के.शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, रा.डे.अनु.संस्थान, करनाल अध्यक्ष, निर्णायक मंडल व अन्य निर्णायकगण।

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11.2012)का श्री हरीश जोशी, निदेशक (राजभाषा) भा.कृ.अनु.परिषद, नई दिल्ली बतौर मुख्य अथिति कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए।

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11.2012) के अवसर पर श्री हरीश जोशी, निदेशक (राजभाषा) भा.कृ.अनु.परिषद, नई दिल्ली बतौर मुख्य अथिति संस्थान के डा. आर.सी. उपाध्याय, अध्यक्ष डी.सी.पी. को पुरस्कृत करते हुए।

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11. 2012) के अवसर पर मंचासीन डा.ए.के. श्रीवास्तव निदेशक,एन.डी.आर.आई., डा. वी.पी. सिंह, संयुक्त निदेशक, श्री हरीश जोशी, निदेशक राजभाषा, मुख्य अतिथि तथा श्री जे.के. केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन)

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11. 2012) के अवसर पर श्री हरीश जोशी निदेशक (राजभाषा) संस्थान के स्टाफ को सम्बोधित करते हुए।

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11. 2012) के अवसर पर डा.ए.के. श्रीवास्तव निदेशक,एन. डी.आर.आई., संस्थान के स्टाफ को सम्बोधित करते हुए।

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11. 2012)का डा.ए.के.श्रीवास्तव, निदेशक एन.डी.आर.आई., करनाल कार्यक्रम का उद्‌घाटन करते हुए।

मुख्य राजभाषा एवं पुरस्कार वितरण समारोह (08.11. 2012) के अवसर पर मंचासीन डा.ए.के.श्रीवास्तव, निदेशक एन.डी.आर.आई., करनाल,श्री हरीश जोशी निदेशक (राजभाषा) तथा संस्थान के अन्य अधिकारीगण।

न.रा.का.स. करनाल की 54वीं बैठक में, (29.12.2011) संस्थान की पंत्रिका दुग्ध गंगा कें द्वितीय अंक का विमोचन करते हुए डा. ए.के. श्रीवास्तव, अध्यक्ष न.रा.का. स. करनाल।

न.रा.का.स. करनाल की 54वीं बैठक के अवसर पर डा. ए.के. श्रीवास्तव, अध्यक्ष न.रा.का.स. करनाल (29.12. 2011) उपस्थित कार्यालय प्रमुखों को संबोधित करते हुए।

संस्थान में न.रा.का.स. करनाल द्वारा 7 जून, 2012 को प्रशासनिक कार्यशाला आयोजित की। इस अवसर पर उपस्थित कार्यालय प्रमुखों तथा अधिकारियों का एक दृश्य।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 55वीं बैठक (27.6.2012) का उद्घाटन करते हुए डा. जी.आर. पाटिल, प्रभारी निदेशक, एन.डी.आर.आई. करनाल।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 55वीं बैठक (27.6.2012) में उपस्थित विभिन्न कार्यालयों के प्रशासनिक प्रधानों, वरिष्ठ अधिकारियों को संबोधित करते हुए डा. जी.आर. पाटिल, प्रभारी निदेशक, एन.डी.आर.आई. एवं अध्यक्ष न.रा.का.स., करनाल।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 55वीं बैठक (27.6.2012) के अवसर पर श्री सी.के. तिवारी, उपमहाप्रबंधक, पानीपत रिफाइनरी (मुख्य अतिथि), एन.डी.आर.आई., करनाल को राजभाषा प्रथम पुरस्कार से पुरस्कृत करते हुए (पुरस्कार प्राप्त करते हुए प्रभारी निदेशक तथा आर.एस गौतम, उपनिदेशक (राजभाषा)।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 55वीं बैठक (27.6.2012) के अवसर पर श्री एन.एस. मेहरा, अनुसंधान अधिकारी, राजभाषा विभाग, भारत सरकार को डा. जी.आर. पाटिल, प्रभारी निदेशक, स्मृति चिन्ह प्रदान करते हुए।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 55वीं बैठक (27.6.2012) के अवसर पर उपस्थित कार्यालय प्रमुख, वरिष्ठ अधिकारी तथा अन्य अधिकारीगण।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 56वीं बैठक (26.12.2012) के अवसर पर श्री आर.एस गौतम, उपनिदेशक, राजभाषा एवं सचिव न.रा.का.स., करनाल कार्यालयों से प्राप्त छमाही रिपोर्टों की समीक्षा करते हुए।

संस्थान में आयोजित न.रा.का.स. करनाल की 56वीं बैठक (26.12.2012) के अवसर पर श्री आर.एस गौतम, उपनिदेशक, राजभाषा एवं सचिव न.रा.का.स., करनाल बैठक की कार्यसूची पर चर्चा करते हुए।

भारत सरकार
Government of India
गृह मंत्रालय
Ministry of Home Affairs
राजभाषा विभाग
Department of Official Language
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल
Town Official Language Implementation Committee, Karnal

प्रशस्ति पत्र
COMMENDATION CERTIFICATE

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (भा०कृ०अनु०प०) ने वर्ष 2011-2012 के दौरान अपने कार्यक्षेत्र में राजभाषा (हिन्दी) के उल्लेखनीय प्रयोग हेतु ....प्रथम...... स्थान प्राप्त किया।

कार्यालय के ....श्री आर. एस. गौतम, उपनिदेशक (राजभाषा)/प्रशासन........ के योगदान की विशेष प्रशंसा की जाती है।

National Dairy Research Institute, Karnal (I.C.A.R.) has been adjudged ......FIRST.........for promoting the use of Official Language (Hindi) during the year 2011-2012.

The contribution of ....Sh. R.S. Gautam, Dy. Director (O.L.)/Adminstration. is highly appreciated.

27 जून 2012	सचिव, न.रा.का.स.	अध्यक्ष, न.रा.का.स.
27th June, 2012	Secretary, TOLIC	Chairman, TOLIC

शोध–पत्र एवं पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता {14.9.2012}

1.शीर्षकः–

भारत में असंगठित डेरी संगठनों की संरचना, आगत आपूर्ति प्रणाली एवं संमस्याएँ

प्रथम

1. डा0 राका सक्सेना, वरि0 वैज्ञानिक, डेरी अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकी प्रबन्ध प्रभाग
2. डा0 (श्रीमती) स्मिता सिरोही, प्रधान वैज्ञानिक, " "
3. सुश्री कविता पाल, शोध छात्र, " "
4. श्री पुनीत कुमार, शोध छात्र, " "

2. शीर्षकः–

दूध में डिटर्जेंट की उपस्थिति एवं मात्रा जांचने की पद्धति

द्वितीय

1. श्री अमित कुमार बारूई, शोध छात्र, डेरी रसायन प्रभाग
2. डा0 राजन शर्मा, वरि0 वैज्ञानिक, डेरी रसायन प्रभाग

3. शीर्षकः–

गाभिन गाय व भैंस का पोषण

तृतीय–I

1. डा0 एस.के.तोमर, प्रधान वैज्ञानिक, पशु पोषण प्रभाग
2. श्री नितिन त्यागी, वरि0 वैज्ञानिक " " " "
3. डा0 चन्द्र दत्त, " "
4. डा0 एस.एस.कुण्डू, अध्यक्ष एवं डेरी पशु पोषण प्रभाग " "

4. शीर्षकः–

भारतीय पशुओं का जलवायु परिवर्तन में योगदान

तृतीय –II

1. डा0 सोहनवीर सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी पशु शरीर क्रिया विज्ञान प्रभाग
2. डा0 आर.सी.उपाध्याय, प्रधान वैज्ञानिक, " "
3. डा0 आशुतोष, वरिष्ठ वैज्ञानिक " "
4. डा0 ओ0 के0 हुड्डा, प्रधान वैज्ञानिक " "
5. श्री अनिल कुमार सिंह, शोध छात्र " "
6. श्री पंकज कुमार मौर्य, शोध छात्र " "

5. शीर्षक

कृषि प्रचार–प्रसार में कृषि पुस्तकालयों का योगदानः एक मॉडल

प्रोत्साहन– 1

1. श्री नरेन्द्र रोहिला, तकनीशियन, राष्ट्रीय डेयरिंग पुस्तकालय
2. श्री बी.पी.सिह, तकनीकी अधिकारी, " "
3. सुश्री, वीनू, तकनीशियन " "
4. श्री लक्ष्मण, तकनीशियन, " "
5. डा. बी.आर.यादव, प्रधान वैज्ञानिक " "

टिप्पण एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता (21–9–2012)

क्रं.	नाम	प्रभाग / अनुभाग	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
1.	श्री ओम प्रकाश मुहाल	डेरी इंजीनियरी प्रभाग	प्रथम	1100 / –
2.	श्री रामधारी	एस.आर.सी	द्वितीय	800 / –
3.	श्री चतर पाल	क्रय अनुभाग	तृतीय	600 / –
4.	श्रीमती संतोष	के.वी.के. / डी.टी.सी.	प्रोत्साहन	500 / –
5.	डा. उत्तम कुमार	चारा अनु. एवं प्रबंधन केन्द्र	प्रोत्साहन	500 / –
6.	श्री सतीश मीणा	क्रय अनुभाग	प्रोत्साहन	500 / –

भाषण प्रतियोगिता (25–9–2012)

क्रं.	नाम	कार्यालय का नाम	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
1.	श्री साकेत समर	ओ.बी.सी.,(प्रा.का.,) करनाल	प्रथम	1100 / –
2.	श्री बी.आर. त्रिपाठी	केनरा बैंक, (अं.का.)करनाल	द्वितीय	800 / –
3.	श्री देवेन्द्र कुमार सिंह	ओ.बी.सी., (प्रा.का.,) करनाल	तृतीय	600 / –
4.	श्री एच.सी. शर्मा	राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय करनाल	प्रोत्साहन	500 / –
5.	श्री मुकेश तोमर	दूरदर्शन केन्द्र, करनाल	प्रोत्साहन	500 / –
6.	श्री ब्रज किशोर	रा.डे. अनु.सं., करनाल	प्रोत्साहन	500 / –

नकद पुरस्कार योजना (2011–2012)

क्रं.	नाम	प्रभाग / अनुभाग	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
1.	श्री सुरेश कुमार	श्रम कल्याण अनुभाग	प्रथम	800 / –
2.	श्री शेर सिंह	नकदी एवं देयक	प्रथम	800 / –
3.	श्री सतीश मीणा	क्रय अनुभाग	द्वितीय	400 / –
4.	श्री जगपाल सिंह	चारा अनु.एवं प्रबंधन केन्द्र	द्वितीय	400 / –
5.	श्री सूरजभान	सुरक्षा अनुभाग	द्वितीय	400 / –
6.	श्री भगवानदास	सुरक्षा अनुभाग	तृतीय	300 / –
7.	डा उत्तम कुमार	चारा अनु.एवं प्रबंधन केन्द्र	तृतीय	300 / –
8.	श्री विजय पाल	स्वागत कक्ष	तृतीय	300 / –

वैज्ञानिक एवं तकनीकी मूल हिन्दी लेखन पुरस्कार योजना वर्ष 2011–12

क्रमांक	पुस्तक/बुलेटिन/फोल्डर तथा आलेख का शीर्षक	लेखकों के नाम	पुरस्कार की स्थिति	धन राशि (₹)
		बुलेटिन		
1.	दुधारू पशुओं के प्रजनन संबंधी समस्याएं और उनकी संतुलित आहार से रोकथाम	डा. आनन्द लक्ष्मी डा.जे.पी.सहगल डा. ओ.के. हुड्डा	**प्रथम** संयुक्त	4000/–
		फोल्डर		
2.	गोपशुओं के उत्पादन पर गर्मी का प्रभाव एवं बचाव के उपाय	डा. आर. सी. उपाध्याय, डा. सोहनवीर सिंह, डा. ओ.के. हुड्डा श्री अनिल कुमार सिंह सुश्री बीनम बालियान श्री मंगेश वैद्य श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती	**प्रथम** संयुक्त	1500/–
		आलेख/शोधपत्र		
3.	स्वच्छ दुग्ध उत्पादनः लाभ व तरीके	डा. बिमलेश मान डा. शिल्पा विज सुश्री प्रेरणा सैनी	**प्रथम** संयुक्त	3000/–
4.	गाय–भैंस के नवजात बच्चों के लिए खीस एक अत्यन्त आवश्यक आहार	डा.चन्द्र दत्त डा.एस.एस.कुण्डू	**द्वितीय** संयुक्त	2000/–
5.	मिश्रित मछली पालन–एक सहायक व्यवसाय	डा.सी.जे. जुनेजा	**तृतीय** एकल	1500/–
6.	कृषि उत्पादन में जैव–उर्वरकों की महत्ता एवं उपयोग	डा.उत्तम कुमार डा.ए.एस. हरीका	प्रोत्साहन संयुक्त	1000/–
7.	डेरी दुग्ध पदार्थ बनाने के लिए उपयोगी तकनीकी विकास	डा.एस.के. कनौजिया डा. योगेश खेतरा	प्रोत्साहन संयुक्त	1000/–
8.	राजभाषा (हिन्दी) की अन्तरराष्ट्रीय पटल पर दस्तक	श्री आर.एस. गौतम उपनिदेशक (राजभाषा)	प्रोत्साहन एकल	1000/–

पाठकों की प्रतिक्रिया

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल की गृह पत्रिका– 'दुग्ध–गंगा' का द्वितीय अंक हमें प्राप्त हुआ। इसके लिए हार्दिक धन्यवाद। परिषद के विभिन्न संस्थानों में इस तरह की पत्रिकाओं का भारत सरकार की राजनीति को लागू करने के क्रम में महत्वपूर्ण योगदान है। मैं इस पत्रिका प्रकाशन मंडल के सभी सदस्यों की मुक्त कंठ से सराहना करता हूँ।,

हरीश जोशी
निदेशक (राजभाषा) भा.कृ.अनु.प., नई दिल्ली

संस्थान की पत्रिका –'दुग्ध–गंगा' का द्वितीय अंक हमें प्राप्त हुआ। इसके लिए हार्दिक धन्यवाद। मैनें इस पत्रिका के सभी आलेख व अन्य सामग्री का पूरी तरह से अध्ययन किया। पत्रिका का स्तर प्रशंसनीय है, इसमें संकलित वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारी ज्ञानवर्धक है। यह पत्रिका हर प्रकार से वैज्ञानिकों, संस्थान के अन्य कार्मिकों तथा कृषक समुदाय के लिए उपयोगी है। मैं इस पत्रिका प्रकाशन मंडल के सभी सदस्यों की प्रशंसा करती हूँ। इस पत्रिका को वर्ष 2011–12 भा. कृ. अनु. परिषद का प्रतिष्ठित गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी कृषि पत्रिका प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हो चुका है और प्रसन्नता की बात है कि यह पुरस्कार निदेशकों के सम्मेलन के अवसर(19–20 मार्च,2013) पर मेरे सामने प्रदान किया गया।

डा. ऊषा मौजा
प्रधान वैज्ञानिक, (मात्स्यिकी प्रभाग)
भा.कृ.अनु.प., कृषि अनुसंधान भवन–2, नई दिल्ली

दुग्ध–गंगा का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ हार्दिक धन्यवाद। पत्रिका के माध्यम से सरकारी काम–काज राजभाषा (हिन्दी) में कराने का पुरजोर प्रयास अतिप्रशंसनीय है, जिसकी वर्तमान समय में अत्यन्त आवश्यकता ही नहीं अपितु सभी भारतियों का संवैधानिक एवं नैतिक परम दायित्व है। पत्रिका सर्वथा कृषि विज्ञान संबंधी जानकारी हिन्दी में देने में पूर्णरूप से समर्थ है। संपादक श्री गौतम जी को शत्–शत् साधुवाद।

बी. के. यादव
सहा. निदेशक (धातु इंजीनियरी वरिष्ठ वेतनमान)
एम.एस. एम.ई विकास, संस्थान (भारत सरकार)
संजय प्लेस, आगरा (उ.प्र.)

दुग्ध–गंगा द्वितीय अंक के माध्यम से कृषि विज्ञान की जानकारी को किसानों तक पहुंचाना, वो भी राष्ट्रभाषा हिन्दी में एक सराहनीय कार्य है। मैं इस प्रयत्न के लिए आपको धन्यवाद देता हूँ।

आलोक कुमार
कृषि प्रसार शिक्षा विभाग (पी.जी.छात्र)
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

आपके संस्थान की दुग्ध–गंगा का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ। आपके द्वारा दी गई जानकारी काफी महत्वपूर्ण है। मुझे उम्मीद ही नहीं पूरा विश्वास है कि इस पत्रिका को और रोचक बनाने का आप लोग प्रयास करेंगें। इसमें डेरी कृषकों और डेरी से संबंधित दी गयी जानकारी हिन्दी भाषा में देने का एक सफल प्रयास है। मुझे आप के संस्थान में कार्य करते हुए यह अनुभव हुआ कि श्री आर.एस. गौतम उपनिदेशक (राजभाषा) अपने राजभाषा कार्यान्वयन कार्य को अनेक वर्षों से मिशनरी भावना से कर रहे हैं, शायद इसलिए ही संस्थान को अनेक राजभाषा संबंधी प्रतिष्ठित पुरस्कार समय–समय पर प्राप्त होते रहते हैं।

पुष्पनायक
मुख्य प्रशासनिक अधिकारी
भा.कृ.अनु.प.का.अनुसंधान
परिसर, पटना (बिहार)

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल की 'दुग्ध–गंगा' का द्वितीय अंक हमें प्राप्त हुआ। धन्यवाद। इसकी साज–सज्जा, तथा सभी लेख ज्ञानवर्धक है, विशेषतः राजभाषा संबंधी जानकारी अत्यन्त ही उपयोगी है। राजभाषा के विकास की दिशा में आपका यह प्रयास मील का पत्थर है।शायद इस लिए ही इस प्रत्रिका को परिषद का वर्ष 2011–12 का गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी अक पत्री प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदत्त किया गया है।

श्री गौतम संपादक महोदय को विशेष रूप से हार्दिक बधाई।

लक्ष्मीकांत
पूर्व उपनिदेशक (राजभाषा)
भा.कृ.अनु.प.,कृर्षि भवन, नई दिल्ली

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल की 'दुग्ध–गंगा' का द्वितीय अंक हमें प्राप्त हुआ। स्नेह स्मरण के लिए आभारी हूँ। दुग्ध–गंगा में प्रकाशित सामग्री स्तरीय, पठनीय है यह डेरी विज्ञान

व कृषि विज्ञान से संबंधित पत्रिका है। विभ्नि विषयों की विविधता एवं उपयोगी है। राजभाषा विषयक लेख काफी सूचनापरक है। कुशल संपादन के लिए संपादक मंडल के सभी सदस्यों की मैं मुक्तकंठ प्रशंसा से करता हूँ।

कल्याणी बरूआ
वरिष्ठप्रबन्धक (राजभाषा)
युनाइटेड़ बैंक ऑफ इंडिया
(क्षे.का.) गुवाहाटी(असम)

आपके संस्थान की दुग्ध–गंगा का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ। सादर धन्यवाद। पत्रिका में शामिल कृषि विज्ञान के शोध–पत्र व आलेख तथा राजभाषा संबंधी कार्यकलापों को आपने बखूबी से प्रस्तुत किया है। निश्चय ही पत्रिका राजभाषा(हिन्दी)के बहुआयामी उपयोग में प्रमुखता से उपादेय होगी।

शैलेश कुमार सिंह
क्षेत्रीय उपनिदेशक (कार्यान्वयन)
रा.भा.विभाग, गृहमंत्रालय,
भारत सरकार, नई दिल्ली

दुग्ध–गंगा पत्रिका के द्वितीय अंक में समाहित लेखों में विशेष रूप से डा. चित्रनायक जी का आलेख ''प्राकृतिक रेशों के बहुआयामी उपयोग तथा गरमाती धरतीः पृथ्वी पर मंडराता संकट, राष्ट्रध्वज की विकास गाथा आदि लेख अत्यन्त ज्ञानर्वधक रोचक लगें। समग्र रूप से संपादक श्री गौतमजी को हार्दिक बधाई।

डा. के. प्रभुदेसाई
वरिष्ठ प्रबन्धक (राजभाषा)
गोवा शिपयार्ड लिमिटेड
भारत सरकार का उपक्रम
(एक महारत्न कंपनी)
वास्को–डि–गामा(दक्षिण)

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान करनाल की पत्रिका दुग्ध–गंगा का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ, इसके लिए संपादक मंडल को धन्यवाद राष्ट्रभाषा (हिंदी) के माध्यम से वैज्ञानिक अनुसंधानो को कृषक समुदाय तक पहुचाने की दिशा में एक अहम प्रासंगिक रचनात्मक प्रयास है। इस पत्रिका में संकलित वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारियाँ ज्ञानवर्धक रोचक व पठनीय हैं वैज्ञानिक एव तकनीकी जानकारियों को कृषक भाइयों तक पहुँचाने हेतु सुनहरा मंच प्रदान करने के लिए धन्यवाद एवं अगले अंक की शुभकामना सहित।

डा.सत्येन्द्र कुमार
वरिष्ठ वैज्ञानिक
जल निकास इंजीनियरी प्रभाग
केन्द्रीय मृदालवणता
अनु.संस्थान, करनालः

आपके संस्थान की यह पत्रिका दुग्ध–गंगा संपूर्ण देश में राजभाषा(हिन्दी) के रूप में स्थापित करने हेतु एक सेतु की भूमिका का निर्वघ्न कर रही है। इस द्वितीय अंक में ''भैसो की प्रमुख नस्ले'' किसान बिहू व फसल तथा अन्य आलेखों मे पशु धन विकास। एक समीक्षा पर रोचक समग्री पठनीय व संग्रहणीय बन पड़ी है।

अशफाक कादरी
महमूद मंजिल, बीकानेर (राजस्थान)

आपके संस्थान की दुग्ध–गंगा पत्रिका का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ। एतदर्थ हार्दिक धन्यावाद पत्रिका की सभी सामग्री राष्ट्रभाषा (हिन्दी) के प्रचार–प्रसार में अपनी अहम भूमिका निभाएगी।

हमारी ऐसी आशा हैः–

दुग्ध–गंगा को समझो, तुम श्वेत क्रांन्ति वाहिका।
हरेगी आपके स्वास्थ्य संकटो की व्याधियां ।।

रामजी लाल
सहायक /कैशियर
कार्यालय, खंड विकास अधिकारी
ब्लाक राजपुर चकर नगर, इटावा (उ.प्र.)–206125

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान,करनाल द्वारा प्रकाशित पुस्तक, बुलेटिनफोल्डर, आदि (2010–2011 से 2012–13 तक)

क्रं0	पुस्तक बुलेटिन तथा फोल्डर आदि का नाम	लेखकगण	मूल्य (₹)
1.	गाय–भैंस के शावकों का वैज्ञानिक ढंग से पोषण एवं प्रबंधन	डा. चन्द्र दत्त एवं डा.एस.एस. कुण्डू	100.00
2.	पशु पोषण व प्रबन्धन द्वारा स्वच्छ दूध उत्पादन	डा. (श्रीमती) वीणा मणि डा. (श्रीमती) बिमलेश मान, डा. (श्रीमती) अंजलि अग्रवाल डा. एस.एस.कुण्डू	75.00
3.	दुग्ध–गंगा अंकः तृतीय	संपादकः उपनिदेशक(राजभाषा)	निशुल्क
4.	कार्य योजना–2013	कृषि विज्ञान केन्द्र / डी.टी.सी.	निशुल्क
5.	डेरी फार्मिंग के मूल सिद्धान्त एवं व्यावहारिक ज्ञान	डा. निशांत कुमार डा. दलीप गोसांई डा. सत्य पाल	100.00
6.	डेरी मेला स्मारिका – 2013	डेरी विस्तार प्रभाग एवं डी.सी.एन	200.00
बुलेटिन / फोल्डर आदि			
7.	शुष्क काल में प्रतिऑक्सीकारक विरल तत्व संपूर्ण द्वारा गायों की रोग प्रतिरोधक क्षमता कैसे बढ़ाएं ?	डा.(श्रीमती) अंजलि अग्रवाल डा.(श्रीमती) हरजीत कौर डा.(श्रीमती) वीणा मणि डा. प्रवीन कुमार डा. आशुतोष	निशुल्क
8.	मत्स्य पालन–फोल्डर	डा. सी.जे.जुनेजा	निशुल्क
9.	डेरी पशुओं में मदसमकालीन करने की विभिन्न तकनीकियां	डा. जैन्सी गुप्ता डा. आनन्द लक्ष्मी, डा. ओ.वी.एस.खोखर	निशुल्क
10.	पशुओं के मद संबंधी जानकारी	डा. जैन्सी गुप्ता, डा. आनन्द लक्ष्मी, डा. ओ.वी.एस.खोखर	निशुल्क
11.	आधुनिक डेरी पशु प्रबन्धन	डा. जैन्सी गुप्ता, डा. ऋतु चक्रवर्ती, डा. आई.डी. गुप्ता, डा. एस.के.झा श्रीमती मृदला उपाध्याय	निशुल्क
12.	दुधारू पशुओं के प्रजनन तंत्र एवं गर्भाशय संबंधी समस्यायें उनके कारण और निवारण	डा. आनन्द लक्ष्मी, डा. अंजलि अग्रवाल डा. जे.पी.सहगल डा. शिव प्रसाद डा. एम.एल.कम्बोज	निशुल्क

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा प्रकाशित पुस्तक, बुलेटिन फोल्डर, आदि (2010–2011 से 2012–13 तक)

क्रं0	पुस्तक बुलेटिन तथा फोल्डर आदि का नाम	लेखकगण	मूल्य (₹)
13.	दुधारू पशुओं में प्रजनन संबंधित समस्याओं और उनकी संतुलित आहार से रोकथाम	डा. आनन्द लक्ष्मी डा. उत्तम कुमार डा. ओ.के.हुड्डा	80.00
14.	गोपशु आवास प्रबन्धन	डा. सोहनवीर सिंह, डा. आर.सी.उपाध्याय श्री अनिल कुमार सिंह, सुश्री ज्योति चौधरी सुश्री रितु चौधरी	निशुल्क
15.	गोपशुओं के उत्पादन पर गर्मी का प्रभाव एवं बचाव के उपाय	डा. सोहनबीर सिंह डा. आर.सी.उपाध्याय डा.ओ.के..हुड्डा श्री अनिल कुमार सिंह, सुश्री बीनम बालियान श्री मंगेश वैद्य श्रीमती रितु चौधरी	निशुल्क
16.	भैंसों में जननक्षमता सुधार के लिए ओवसिन्च प्रोटोकॉल का प्रयोगात्मक अनुप्रयोग	डा. बी.एस.प्रकाश डा. डी.के.गोसांई डा. सत्यपाल डा. टी.के.मोहन्ती डा. जे.सी.मार्कण्डेय श्री बृज किशोर	निशुल्क
17.	गो–पशुओं में प्रजनन समस्याओं की रोकथाम के लिए–पशुपालकों को आवश्यक सुझाव	डा. निशान्त कुमार डा. शिव प्रसाद डा. टी.के. मोहन्ती डा. पी.एस.ओबराय डा. ए.कुमारेसन	निशुल्क

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

प्रशस्ति-पत्र

गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी कृषि पत्रिका पुरस्कार

वर्ष 2011 के दौरान राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका ''दुग्ध गंगा'' को प्रोत्साहन पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 19 मार्च, 2013
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

Printed At : Azad Offset Printers, 144, Press Site, Ind. Area - 1, Chandigarh
0172 - 4611489, 2656144, 2657144 www.azadoffsetprinters.com